आई. टी. सी. लिमिटेड

बनाम

कृषि उत्पाद बाजार

समिति और अन्य।

24 जनवरी 2002

[एस. पी. भरुचा, भारत के मुख्य न्यायाधीश, जी. बी. पटनायक, वाई. के. सभरवाल,

रूमा पाल और बृजेश कुमार, न्यायमूर्तिगण]

भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 246 एवं 254—सातवीं अनुसूची—सूची-I, प्रविष्टि 7, 48 एवं 52—सूची-II, प्रविष्टि 24, 28 एवं 66—सूची-III, प्रविष्टि 33 :

तंबाकू उद्योग—इसके संबंध में विधि निर्माण की शक्ति—तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 —आई.टी.सी. लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य, [1985] पूरक 1 एस.सी.आर. 145 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब लोकहित में तंबाकू उद्योग को भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत उद्योग घोषित कर दिया गया, तब राज्य विधानमंडल उस विषय पर विधि बनाने के लिए सक्षम नहीं रह गए—निर्णीत : उक्त निर्णय सही नहीं है।

"उद्योग" अभिव्यक्ति—परिधि—निर्णीत, इसे सीमित अर्थ दिया जाना चाहिए— संवैधानिक संदर्भ में इसका अर्थ "निर्माण अथवा उत्पादन" के रूप में समझा जाना चाहिए— तंबाकू बोर्ड अधिनियम में विनिर्दिष्ट कच्चे तंबाकू के विक्रय से संबंधित गतिविधि को "उद्योग" नहीं माना जा सकता—तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975।

कृषि उपज बाजार शुल्क—राज्यों की विधायी क्षमता—निर्णीत, राज्य विधानमंडल बाजार क्षेत्र में तंबाकू के विक्रय पर बाजार शुल्क के अधिरोपण एवं संग्रह के लिए विधि बनाने हेतु सक्षम हैं—तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975।

कृषि उपज विपणन अधिनियम—राज्य विधानमंडलों द्वारा अधिनियमन बनाम तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 जो कि संसदीय अधिनियम है—जहाँ तक राज्य अधिनियमों का संबंध बाजार क्षेत्रों में तंबाकू के विक्रय से है—निर्णीत, दोनों सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते तथा राज्य अधिनियम संसदीय अधिनियम पर प्रभावी होंगे।

भारत के विभिन्न राज्य विधानमंडलों ने बाजार क्षेत्र के भीतर कृषि उपज की खरीद एवं बिक्री को विनियमित करने तथा बाजार शुल्क के अधिरोपण एवं संग्रह के लिए कृषि उपज विपणन अधिनियम अधिनियमित किए हैं। लोकहित में यह घोषित किए जाने के पश्चात कि भारत संघ को तंबाकू उद्योग को अपने नियंत्रण में लेना आवश्यक है, संसद ने तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 अधिनियमित किया, जो संघ सरकार के नियंत्रण में तंबाकू उद्योग के विकास के लिए प्रावधान करता है। कृषि उपज विपणन अधिनियम के अंतर्गत राज्य सरकार द्वारा तंबाकू को कृषि उपज के रूप में अधिसूचित किए जाने पर तंबाकू की खरीद एवं बिक्री राज्य अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार विनियमित की जानी है तथा बाजार समिति को अधिसूचित कृषि उपज अर्थात् तंबाकू की ऐसी खरीद एवं बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपित एवं संग्रह करने का अधिकार है। *आई.टी.सी. लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य*, **[1985] पूरक 1 एस.सी.आर. 145 में इस न्यायालय ने बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया था कि जब तंबाकू उद्योग को सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा अपने नियंत्रण में ले लिया गया और तंबाकू बोर्ड अधिनियम अधिनियमित कर दिया गया, तब राज्य विधानमंडल उस क्षेत्र में विधि बनाने के लिए सक्षम नहीं रह गया। परिणामतः कर्नाटक अधिनियम के वे प्रावधान, जिनके द्वारा बाजार क्षेत्र के भीतर तंबाकू की खरीद एवं बिक्री पर बाजार समिति को बाजार शुल्क अधिरोपित करने का अधिकार दिया गया था, तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 से प्रत्यक्ष रूप से टकराते हैं और इस कारण जहाँ तक तंबाकू का संबंध था, उक्त अधिनियम को निरस्त कर दिया गया।**

बिहार राज्य से उत्पन्न समान विवाद में उच्च न्यायालय ने आई.टी.सी. को नोटिस देकर नया निर्धारण आदेश पारित करने हेतु वाद को पुनः विचारार्थ प्रेषित किया।

उत्तर प्रदेश राज्य से उत्पन्न मामलों में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने आई.टी.सी. वाद में इस न्यायालय के निर्णय का अनुसरण करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि मंडी समिति तंबाकू की खरीद एवं बिक्री पर बाजार शुल्क नहीं लगा सकती। फलस्वरूप कृषि उत्पादन मंडी समिति ने इस न्यायालय में अपीलें दायर कीं। उत्तर प्रदेश से ही उत्पन्न एक अन्य अपील में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्णपीठ ने उत्तर प्रदेश कृषि उत्पादन मंडी अधिनियम, 1964 की संवैधानिक वैधता पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 17(iii) के अंतर्गत शुल्क के अधिरोपण एवं संग्रह का प्रावधान, जहाँ तक तंबाकू पर लागू होता है, तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रावधानों से प्रतिकूल नहीं है। तंबाकू व्यापार संघ ने उक्त पूर्णपीठ निर्णय की वैधता को चुनौती देते हुए अपील दायर की।

तमिलनाडु कृषि विपणन बोर्ड ने मद्रास उच्च न्यायालय के उस निर्णय को चुनौती दी, जिसमें इस न्यायालय के *आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य* के निर्णय का अनुसरण करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया था कि राज्य विधानमंडल को तमिलनाडु विनियमन अधिनियम, 1959 के अंतर्गत तंबाकू को अधिसूचित कर उसके नियंत्रण एवं विनियमन तथा बाजार शुल्क अधिरोपण का अधिकार नहीं है।

मध्य प्रदेश से संबंधित मामलों में उच्च न्यायालय ने *आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य* के निर्णय का अनुसरण करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि बाजार समिति तंबाकू के व्यापार के संबंध में कोई बाजार शुल्क वसूल करने की अधिकारी नहीं है, क्योंकि बाजार समिति अधिनियम तंबाकू बोर्ड अधिनियम से प्रतिकूल है। तथापि, उच्च न्यायालय ने मध्य प्रदेश कृषि उत्पादन मंडी समिति अधिनियम, 1972 (जैसा कि 1986 के अधिनियम द्वारा संशोधित) को वैध माना। अतः ये अपीलें विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों से उत्पन्न हुई हैं।

अनुच्छेद 32 के अंतर्गत दायर विर्निदष्ट आदेश याचिका में कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 के कुछ प्रावधानों की संवैधानिक वैधता को इस आधार पर चुनौती दी गई कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 तथा तंबाकू संघ अधिनियम, 1975 के कारण तंबाकू उद्योग के विकास सहित तंबाकू के विपणन से संबंधित पूरा क्षेत्र आच्छादित हो गया है और राज्य विधान केंद्रीय अधिनियम से प्रतिकूल है।

इन सभी मामलों में विवाद का मूल प्रश्न यह था कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 जैसे संसदीय अधिनियम के अधिनियमन के पश्चात राज्यों द्वारा अधिनियमित विभिन्न कृषि उपज विपणन अधिनियम, जहाँ तक वे बाजार क्षेत्रों में तंबाकू की बिक्री से संबंधित हैं तथा बाजार शुल्क के अधिरोपण से संबंधित हैं, उनकी वैधता एवं प्रयोज्यता क्या है। ये प्रश्न *आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य* के निर्णय का विषय रहे थे, जिसमें बहुमत ने आई.टी.सी. के पक्ष में निर्णय दिया था। तत्पश्चात दो न्यायाधीशों की पीठ ने यह प्रारंभिक मत व्यक्त किया कि आई.टी.सी. वाद के निर्णय पर पुनर्विचार आवश्यक है। फलस्वरूप ये वाद संविधान पीठ के समक्ष प्रस्तुत हुए।

अपीलकर्ता-आई.टी.सी., भारत संघ, संबंधित राज्यों, विभिन्न विपणन समितियों तथा तंबाकू बोर्ड की ओर से विभिन्न तर्क प्रस्तुत किए गए, जो मुख्यतः संसदीय विधायन की सर्वोच्चता, संसद एवं राज्य सरकारों की विधायी क्षमता, राज्य एवं केंद्रीय अधिनियमों के मध्य प्रतिकूलता तथा *आई.टी.सी.* वाद के निर्णय की शुद्धता से संबंधित थे।

प्रस्तुत विभिन्न तर्कों के आलोक में निम्नलिखित प्रश्न विचारणीय हुए—

1. क्या सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम, जहाँ तक वह तंबाकू की खेती एवं कच्चे तंबाकू की बिक्री से संबंधित है, संवैधानिक रूप से वैध तथा संसद की विधायी क्षमता के भीतर है, और यह प्रश्न इस तथ्य पर निर्भर करेगा कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को सीमित अर्थ दिया जाना चाहिए या नहीं।

2. यदि तंबाकू बोर्ड अधिनियम तथा कृषि उपज विपणन अधिनियम दोनों को संवैधानिक रूप से वैध माना जाए तथा बाजार क्षेत्र के भीतर तंबाकू की खरीद एवं बिक्री के संबंध में राज्य विधानमंडल की शक्ति भी मान्य हो, तब क्या दोनों अधिनियम एक साथ लागू रह सकते हैं, जैसा कि *आई.टी.सी.* वाद में अल्पमत के निर्णय में कहा गया था।

3. यदि दोनों अधिनियमों के मध्य प्रतिकूलता हो, तो क्या केंद्रीय अधिनियम प्रभावी होगा, जैसा कि *आई.टी.सी.* वाद में बहुमत के निर्णय में कहा गया था।

अपीलों तथा विर्निदष्ट आदेश याचिका का निस्तारण करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया :

1. *आई.टी.सी.* वाद [1985] पूरक 1 एस.सी.सी. 476 का निर्णय सही नहीं था। [471-ई]

2. राज्य विधानमंडल बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपण एवं संग्रह के लिए विधायन करने हेतु सक्षम हैं। परिणामतः राज्यों द्वारा अधिनियमित बाजार अधिनियम वैध हैं।[471-एफ]

3. जहाँ तक वे बाजार क्षेत्रों में तंबाकू की बिक्री से संबंधित हैं, राज्य विधायन तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 एक साथ सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते और राज्य अधिनियम प्रभावी होंगे।[471-जी]

आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य, **[1985] पूरक 1 एस.सी.सी. 476, निरस्त किया गया।**

बहुमत के अनुसार :

वाई. के. सभरवाल, *न्यायामूर्ति*—

1. राज्य तथा संसदीय विधायन एक साथ लागू नहीं रह सकते, यह दोनों अधिनियमों के विभिन्न प्रावधानों से स्पष्ट है। उदाहरणार्थ बिहार कृषि उपज विपणन अधिनियम, 1960 की धारा 4(2) तथा अन्य राज्य अधिनियमों के समान प्रावधानों की तुलना तंबाकू बोर्ड

अधिनियम की धारा 13 तथा धारा 8(2)(ग) से की जा सकती है। इसी प्रकार तंबाकू बोर्ड अधिनियम की धारा 32 के अंतर्गत बनाए गए तंबाकू बोर्ड नियम, 1976 के नियम 32 के अनुसार वर्जीनिया तंबाकू की खरीद की शक्ति की तुलना बिहार अधिनियम की धारा 15 से की जा सकती है, जिसके अनुसार कृषि उपज अर्थात् तंबाकू को बाजार प्रांगण में लाकर नीलामी या निविदा के माध्यम से उच्चतम बोलीदाता को बेचा जाना आवश्यक है। तंबाकू बोर्ड को उत्पादकों से सीधे खरीदने की शक्ति तथा नीलामी अथवा निविदा द्वारा बिक्री की व्यवस्था एक साथ लागू नहीं रह सकती। दोनों विधायनों के अंतर्गत मूल्य निर्धारण, भुगतान की विधि, लाइसेंसिंग तथा नीलामी प्रक्रिया के प्रावधान भी यह दर्शाते हैं कि दोनों एक साथ लागू नहीं रह सकते। इस संदर्भ में तंबाकू बोर्ड (नीलामी) नियम, 1984 तथा तंबाकू बोर्ड (नीलामी) विनियम, 1984 का भी उल्लेख किया जा सकता है। स्पष्ट है कि एक अधिनियम का पालन दूसरे के प्रावधानों के उल्लंघन का कारण बनेगा, अतः दोनों का एक साथ संचालन संभव नहीं है।[473-बी-ई]

2. आई.टी.सी. वाद में बहुमत ने संविधान पीठ के निर्णय *चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य* तथा प्रविष्टि 52 के परिधि से संबंधित अन्य निर्णयों पर ध्यान नहीं दिया, बल्कि *एम.ए. टुल्लोच* एवं *बैजनाथ काडियो* के निर्णयों पर निर्भर करते हुए यह कहा कि जब सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत लोकहित में घोषणा कर दी जाती है, तब उस सीमा तक विषय संसद के विशेष विधायी क्षेत्र में आ जाता है तथा इसके पश्चात राज्य द्वारा किया गया कोई भी विधायन असंवैधानिक होगा। इसी आधार पर यह कहा गया कि कर्नाटक सरकार को तंबाकू पर बाजार शुल्क लगाने का अधिकार नहीं था क्योंकि राज्य अधिनियम उस सीमा तक केंद्रीय अधिनियम, 1975 से टकराता है।[478-डी-एफ]

चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1956] एस.सी.आर. 393; *उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुल्लोच एंड कंपनी,* [1964] 4 एस.सी.आर. 461; तथा *बैजनाथ काडियो बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,* [1969] 3 एस.सी.सी. 838—संदर्भित।

3. राज्य सूची के अंतर्गत विधायन के क्षेत्र से संबंधित राज्य विधानों की वैधता एवं प्रयोज्यता संसद द्वारा संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत किए गए विधायन, अर्थात् तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 के कारण संदिग्ध हो गई है। संघ सूची की प्रविष्टि 52 में निहित घोषणा के कारण यह संदेह उत्पन्न हुआ कि बाजार क्षेत्रों में तंबाकू नामक कृषि उपज की बिक्री तथा उस पर बाजार शुल्क के अधिरोपण से संबंधित राज्य विधायन की वैधता एवं प्रयोज्यता क्या है, जबकि ये विषय राज्य सूची की प्रविष्टि 14, 27, 28 एवं 66 के अंतर्गत आते हैं। राज्य सूची की प्रविष्टि 24, सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन है। वर्तमान वाद में न्यायालय का संबंध प्रविष्टि 7 से नहीं है। यहाँ प्रश्न यह है कि राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत विधायन का क्षेत्र संघ सूची की प्रविष्टि 52 में स्थानांतरित होने का प्रभाव राज्य सूची की अन्य प्रविष्टियों, अर्थात् प्रविष्टि 14, 27, 28 एवं 66 पर क्या होगा तथा वास्तव में कौन-सा क्षेत्र स्थानांतरित किया जा सकता है। [479- सी- ई]

4. *ईश्वर खेतान* के वाद में केवल सूची-I की प्रविष्टि 52 तथा सूची-II की प्रविष्टि 24 के परिधि का निर्धारण किया गया था। इन प्रविष्टियों का संबंध सूची-II की प्रविष्टि 26 एवं 27 तथा सूची-III की प्रविष्टि 33 से क्या है, यह विचारार्थ नहीं था। इसी प्रकार "उद्योग" की परिधि का भी *ईश्वर खेतान* के वाद में परीक्षण नहीं किया गया था। 'उद्योग' अभिव्यक्ति की व्याख्या पर वहाँ कोई चर्चा नहीं है और संभवतः इसी कारण *टीका रामजी* के वाद का उल्लेख नहीं किया गया। *ईश्वरी खेतान* के वाद में *बैजनाथ काडियो* के वाद पर निर्भरता केवल इस उद्देश्य से की गई थी कि राज्यों की शक्तियों का ह्रास नियंत्रण की सीमा तक ही सीमित है। जहाँ *बैजनाथ काडियो* का वाद सूची-II की प्रविष्टि 23 से संबंधित था, वहीं *ईश्वरी खेतान* का वाद सूची-II की प्रविष्टि 24 से संबंधित था। अन्य प्रविष्टियों का विषय उस निर्णय में विवाद का विषय नहीं था। सूची-I की प्रविष्टि 54 की संरचना को सूची-I की प्रविष्टि 52 के समान नहीं माना गया, जैसा कि आई.टी.सी. की ओर से तर्क किया गया था। इस निर्णय में खनिज एवं खदानों से संबंधित मामलों को सूची-I की प्रविष्टि 52 के परिधि के निर्धारण हेतु अपनाया

नहीं गया। खनिज एवं खदानों से संबंधित वाद सूची-I की प्रविष्टि 52 की परिधि का परीक्षण करते समय विशेष सहायक नहीं हैं। [480- जी; 481- एफ- एच]

ईश्वरी खेतान शुगर मिल्स (प्रा.) लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, **(1980) 4 एससीसी 136 तथा** *बैजनाथ काडियो बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,* **(1969) 3 एससीसी 838—भिन्न निरूपित।**

चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, **[1956] एससीआर 393—संदर्भित।**

5. किसी संवैधानिक प्रविष्टि की परिधि एवं विस्तार का निर्धारण किसी संसदीय अधिनियम के संदर्भ में नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा किया जाए, तो इसका परिणाम यह होगा कि संसद किसी अधिनियम को अधिनियमित या संशोधित करके संवैधानिक प्रावधान की परिधि एवं विस्तार को नियंत्रित कर सकेगी। यह विधि नहीं हो सकती। जिस विधायी शक्ति से यह न्यायालय संबंधित है, वह अनुच्छेद 246 में निहित है। विभिन्न प्रविष्टियों में विधायन के क्षेत्र निर्धारित किए गए हैं। दोनों का संयुक्त रूप से अध्ययन कर यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि जब किसी विधायन की वैधता पर प्रश्न उठाया जाए, तब संबंधित विधानमंडल को विधि बनाने की क्षमता है या नहीं। [482- ए- बी]

आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम मैकडॉवेल एंड कंपनी एवं अन्य, **(1996) 3 एससीसी 709—पर अवलंबित।**

6.1. यह तथ्य कि *टीका रामजी* **के वाद में संसदीय विधायन की वैधता विवाद का विषय नहीं थी, उस निर्णय के अनुपात को किसी प्रकार प्रभावित नहीं करता। उस वाद में विचारणीय प्रश्न मूलतः वही था जो वर्तमान वाद में है, अर्थात् सूची-I की प्रविष्टि 52 तथा सूची-II की प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त "उद्योग" अभिव्यक्ति की परिधि। वहाँ भी प्रश्न यह था कि 'उद्योग' अभिव्यक्ति की संकीर्ण अथवा व्यापक व्याख्या की जाए। यह तथ्य भी कि वह औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम के अंतर्गत एक विनिर्माण उद्योग से संबंधित**

वाद था, उस निर्णय के अनुपात को प्रभावित नहीं करता। *टीका रामजी* के वाद में की गई व्याख्या को केवल औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम के अंतर्गत आने वाले उद्योगों तक सीमित नहीं किया जा सकता। उस निर्णय में न तो कोई स्पष्ट और न ही कोई निहित संकेत है जिससे उस व्याख्या को सीमित किया जा सके, और न ही ऐसा करने का कोई वैध कारण है। [486- सी- ई]

6.2. वर्तमान मामलों में भी राज्य विधानों को इस आधार पर चुनौती दी गई है कि सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 के अधिनियमन के पश्चात राज्य विधानमंडल तंबाकू की बिक्री के संबंध में विधि बनाने की क्षमता खो देता है, और इस प्रकार वर्तमान राज्य विधायन लागू नहीं रहेंगे, तथा सूची-II की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत विपणन से संबंधित विधायन, जहाँ तक कृषि उपज 'तंबाकू' का संबंध है, लागू नहीं होंगे। *टीका रामजी* के वाद में न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार करते हुए कि सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' अभिव्यक्ति इतनी व्यापक है कि उसमें औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग माने जाने वाले कच्चे माल के संबंध में विधायन करने की शक्ति भी सम्मिलित हो जाती है, राज्य अधिनियम को अधिकारातीत ठहराने की दलील को अस्वीकार कर दिया था, जबकि संसद ने विधि द्वारा लोकहित में चीनी उद्योग के नियंत्रण को अपने विशेष क्षेत्राधिकार में घोषित किया था। [486- एफ; 488- जी]

चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, [1956] एससीआर 393—पर अवलंबित।

7. संविधान निर्माताओं का उद्देश्य राज्य सूची की प्रविष्टि 14, 27, 28 एवं 66 को संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अधीन बनाना नहीं था। 'उद्योग' अभिव्यक्ति की व्याख्या इस प्रकार नहीं की जा सकती कि उसमें कच्चे माल की प्राप्ति से लेकर अंतिम उत्पाद के निस्तारण तक के सभी पहलू सम्मिलित हो जाएँ, न कि केवल विनिर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया ही। [490- बी]

द कलकत्ता गैस कंपनी (मालिकाना) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य, [1962] पूरक 3 एससीआर 1 तथा *चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,* [1956] एससीआर 393—संदर्भित।

8.1. अनुच्छेद 246(1) एवं (2) के अनुसार संसदीय विधायन की सर्वोच्चता है। यह तब प्रासंगिक होती है जब विधायन का क्षेत्र समवर्ती सूची में हो। तथापि संसदीय सर्वोच्चता को बनाए रखते हुए संघीय ढाँचे की उपेक्षा नहीं की जा सकती, जिसे संविधान की मूल संरचना का अंग माना गया है। [490- सी]

एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ, (1994) 3 एससीसी 1—पर अवलंबित।

8.2. भारत के संविधान की व्याख्या, भाषा की अनुमति के भीतर, इस प्रकार की जानी चाहिए कि राज्य विधानमंडल की शक्तियों को क्षीण न किया जाए और संघीय व्यवस्था का संरक्षण हो, साथ ही उन अनुच्छेदों द्वारा परिकल्पित केंद्रीय सर्वोच्चता भी बनी रहे। [490- D]

9. सातवीं अनुसूची में राज्य सूची की प्रविष्टि 26 में व्यापार एवं वाणिज्य का विषय निहित है; बाजार एवं मेले राज्य सूची की प्रविष्टि 28 में हैं; धन उधार देना एवं साहूकार राज्य सूची की प्रविष्टि 30 में हैं; वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण राज्य सूची की प्रविष्टि 27 में है, जो सूची-III की प्रविष्टि 33 के अधीन है; तथा उद्योग राज्य सूची की प्रविष्टि 24 में हैं, जो सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत शासन अधिनियम, 1935 के अंतर्गत वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण तथा उद्योगों के विकास दोनों को सूची-I की प्रविष्टि 29 के अधीन रखा गया था। किंतु संविधान निर्माताओं ने प्रविष्टि 29 को दो भागों में विभाजित कर दिया। उद्योगों को राज्य सूची की प्रविष्टि 24 में रखा गया, जो सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन है। वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण को राज्य सूची की प्रविष्टि 27 में रखा गया और उसे सूची-III की प्रविष्टि 33 के अधीन बनाया गया। आई.टी.सी. की दलील स्वीकार करने का अर्थ होगा कि इस विभाजन का

कोई उद्देश्य ही नहीं था। स्पष्ट है कि दो अलग-अलग प्रविष्टियाँ बनाई गईं—एक को सूची-III की प्रविष्टि 33 के अधीन और दूसरी को सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन। अतः 'उद्योग' अभिव्यक्ति की व्याख्या इस प्रकार करना कि उसमें कच्चे माल का पहलू भी सम्मिलित हो जाए, उसी तर्क से वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण को भी उसमें सम्मिलित कर देगा और वास्तव में आई.टी.सी. की दलील भी यही थी। इस तर्क को स्वीकार करना संविधान निर्माताओं की मंशा के प्रतिकूल होगा। यही तर्क राज्य सूची की प्रविष्टि 14 (कृषि) पर भी समान रूप से लागू होगा, जो किसी सूची के अधीन नहीं है। आगे यह भी उल्लेखनीय है कि जब संसद ने पूर्व में कच्चे माल को नियंत्रित करने की आवश्यकता समझी, तब उसने संविधान (तृतीय संशोधन) अधिनियम, 1954 द्वारा सूची-III की प्रविष्टि 33 में 'कच्चा जूट तथा कच्चा कपास' को सम्मिलित किया। यहाँ तक कि अनुच्छेद 369 भी यह दर्शाता है कि कृषि कच्चा माल राज्य सूची में है, क्योंकि उसमें कच्चा कपास, कपास बीज तथा खाद्य तेल बीजों का उल्लेख कर उन्हें अस्थायी रूप से समवर्ती सूची में रखने की व्यवस्था की गई थी ताकि संसद इस संबंध में विधि बना सके। अतः राज्य सूची की प्रविष्टि 24 या संघ सूची की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' अभिव्यक्ति की ऐसी व्याख्या नहीं की जा सकती जिससे सातवीं अनुसूची की राज्य सूची की अन्य प्रविष्टियाँ संघ के नियंत्रण के अधीन हो जाएँ, जबकि वास्तव में वे ऐसी नहीं हैं। जहाँ कहीं भी उन्हें सूची-I या सूची-III के अधीन करना अभिप्रेत था, वहाँ इसे स्पष्ट रूप से कहा गया है। राज्य सूची के अवलोकन से स्पष्ट है कि जहाँ किसी प्रविष्टि को सूची-I या सूची-III की किसी प्रविष्टि के अधीन करना अभिप्रेत था, वहाँ ऐसा स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। अतः ऐसी व्याख्या, जिसका परिणाम किसी प्रविष्टि को किसी अन्य प्रविष्टि के अधीन बना देना हो जबकि प्रविष्टि में ऐसा नहीं कहा गया है, उससे बचना चाहिए, जब तक कि वही एकमात्र संभव व्याख्या न हो। अतः संघ सूची की प्रविष्टि 52 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 24 की ऐसी व्याख्या नहीं की जा सकती। [490-जी- एच; 491- ए- जी]

10. व्याख्या के सिद्धांत सुव्यवस्थित हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि सातवीं अनुसूची की सूचियों में दी गई प्रविष्टियाँ विधायिका को विधि बनाने की शक्ति प्रदान नहीं करतीं; विधायी शक्ति का स्रोत संविधान का अनुच्छेद 246 है। विधायी क्षमता के प्रश्न का निर्णय करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि संविधान की व्याख्या संकीर्ण या अत्यधिक तकनीकी दृष्टिकोण से नहीं की जानी चाहिए। इसे मात्र एक विधि के रूप में नहीं, बल्कि ऐसी व्यवस्था के रूप में समझा जाना चाहिए जिसके माध्यम से विधियाँ बनाई जाती हैं। इसकी व्याख्या व्यापक एवं उदार होनी चाहिए। प्रविष्टियाँ केवल संबंधित विधायिकाओं के विधायी क्षेत्र का निर्धारण करती हैं और स्वयं विधायी शक्ति प्रदान नहीं करतीं। यदि यह पाया जाए कि कुछ प्रविष्टियाँ एक-दूसरे से आंशिक रूप से ओवरलैप करती हैं या उनमें टकराव है, तो न्यायालय का कर्तव्य है कि वह उन्हें समन्वित करते हुए सामंजस्यपूर्ण व्याख्या करे। तथापि जब ऐसा समन्वय संभव न हो, तब न्यायालय को संविधान में निहित विधायी शक्ति के संदर्भ में प्रविष्टियों का परीक्षण करना होगा। [491- एच; 492- ए- बी]

11. इन मामलों में विवाद का विषय सातवीं अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 52 की व्याख्या से संबंधित है। इसके अंतर्गत संसद को विधि द्वारा यह घोषणा करनी होती है कि किसी उद्योग का संघ द्वारा नियंत्रण लोकहित में आवश्यक है। उक्त प्रविष्टि के अंतर्गत केवल किसी 'उद्योग' को ही ऐसा उद्योग घोषित किया जा सकता है जिसका नियंत्रण संघ द्वारा लोकहित में आवश्यक माना गया हो। अतः यह निहित है कि यदि कोई गतिविधि 'उद्योग' नहीं मानी जा सकती, तो उस गतिविधि पर प्रविष्टि 52 लागू नहीं होगी। यहाँ प्रश्न सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' की अवधारणा का है। यह विवादित नहीं है कि विधायी सूचियों की प्रविष्टियों की व्याख्या व्यापक अर्थ में की जानी चाहिए, किंतु यह भी ध्यान रखना होगा कि ऐसी व्याख्या अन्य प्रविष्टियों को पूर्णतः निष्प्रभावी न बना दे। विभिन्न शब्दकोशों में 'उद्योग' शब्द के अर्थ इस शब्द के संवैधानिक अर्थ का निर्धारण करने में विशेष सहायक नहीं हैं। संसद को विनिर्माण गतिविधियों से इतर अन्य गतिविधियों के संबंध में विधि बनाने की

शक्ति पर कोई प्रतिबंध या सीमा नहीं हो सकती, परंतु वह शक्ति सूची-I की प्रविष्टि 52 में निहित नहीं है; वह अन्यत्र हो सकती है। इस संदर्भ में सूची-III की प्रविष्टि 33 का उल्लेख किया जा सकता है, जिसके अंतर्गत खाद्य पदार्थ तथा कुछ कच्चे माल सम्मिलित हैं। किंतु तंबाकू को खाद्य पदार्थ नहीं माना गया है। [492 - सी-एफ]

12. संघ सूची की प्रविष्टि 54 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 23 की संरचना एवं परिधि तथा उनका पारस्परिक संबंध, राज्य सूची की प्रविष्टि 24 तथा संघ सूची की प्रविष्टि 52 की संरचना एवं परिधि से मूलतः भिन्न है। खानों एवं खनिजों से संबंधित प्रविष्टि में खानों का उद्योग तथा उसके उत्पाद अर्थात् खनिज दोनों सम्मिलित हैं और इस कारण किसी घोषणा के पश्चात खदानें तथा खनिज दोनों संघ सूची की प्रविष्टि 54 में समाहित हो जाते हैं। इसी कारण इस न्यायालय द्वारा निरंतर यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रविष्टि 54 के अंतर्गत की गई घोषणा द्वारा संसद संपूर्ण क्षेत्र को अपने अधिकार में लेने का आशय प्रकट करती है। [502- एच; 503- ए]

चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, **[1956] एससीआर 393;** *बी. विश्वनाथैया एंड कंपनी एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य,* **(1991) 3 एससीसी 358;** *चतुरभाई एम. पटेल बनाम भारत संघ एवं अन्य,* **[1960] 2 एससीआर 362;** *सुब्रमण्यम चेट्टियार बनाम मुथुस्वामी गौंडन,* **(1940) एफसीआर 158;** *राजस्थान राज्य बनाम जी. चावला एवं एक अन्य,* **एआईआर 1959 एससी 544;** *गंगा शुगर निगम लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,* **(1980) 1 एससीसी 223;** *कन्नन देवन हिल्स प्रोड्यूस बनाम केरल राज्य एवं एक अन्य,* **(1972) 2 एससीसी 218 तथा** *एसआईईएल लिमिटेड एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य,* **(1986) 7 एससीसी 26—पर अवलंबित।**

हरकचंद रतनचंद बनथिया एवं अन्य बनाम भारत संघ, **[1970] 1 एससीआर 479;** *भारतीय स्टेट बैंक बनाम यसांगी वेंकटेश्वर राव,* **(1999) 2 एससीसी 375;** *इंडियन एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम कर्नाटक विद्युत बोर्ड एवं अन्य,* **(1992) 2**

एससीसी 580 तथा *मेसर्स श्रीराम इंडस्ट्रियल एंटरप्राइजेज लिमिटेड बनाम भारत संघ एवं अन्य,* **एआईआर 1996 इलाहाबाद 135—संदर्भित।**

स्मिथ बनाम ऑलराइट, **(321) यू.एस. 649—संदर्भित।**

13.1. *बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य* **के वाद में संविधान पीठ ने बिहार कृषि उपज विपणन अधिनियम, 1960 के अंतर्गत गन्ना, चीनी, गुड़, गेहूँ एवं चाय सहित विभिन्न वस्तुओं पर बाजार शुल्क के अधिरोपण की वैधता के प्रश्न का परीक्षण किया। न्यायालय ने यह अभिलक्षित किया कि उक्त बाजार अधिनियम बिहार विधानमंडल द्वारा संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची-II की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 के अंतर्गत निहित विधायी शक्ति के आधार पर अधिनियमित किया गया था। तथापि न्यायालय ने यह भी देखा कि उक्त अधिनियम वस्तुओं की आपूर्ति एवं वितरण के साथ-साथ उनसे संबंधित व्यापार एवं वाणिज्य से भी संबंधित है, क्योंकि अधिनियम निर्दिष्ट बाजारों में कृषि उपज की खरीद एवं बिक्री के विनियमन का प्रावधान करता है। इस सीमा तक न्यायालय ने कहा कि सूची-III की प्रविष्टि 33 के प्रावधान राज्य विधानमंडल की उस विधायी शक्ति को अधिरोहित करते हैं जो वस्तुओं के व्यापार एवं वाणिज्य तथा उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण से संबंधित है। अतः जहाँ तक बाजार अधिनियम गन्ना एवं चीनी, जो खाद्य पदार्थ हैं, की खरीद एवं बिक्री के विनियमन से संबंधित है, संविधान पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि सूची-II की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 के अंतर्गत अधिनियमित बाजार अधिनियम, समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत किए गए किसी अन्य विधायन के अधीन रहेगा। यह तर्क कि चूँकि तंबाकू खाद्य पदार्थ नहीं है और सूची-III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत नहीं आता, अतः जैसे 1953 के संवैधानिक संशोधन द्वारा किया गया था वैसे ही संसद संविधान में और संशोधन कर तंबाकू को—जो उद्योग का कच्चा माल है—सूची-III की प्रविष्टि 33 में सम्मिलित कर सकती है और इस प्रकार तंबाकू के संबंध में विधायन करने की शक्ति स्वयं को प्रदान कर सकती है, इस न्यायालय द्वारा परीक्षण किए जाने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि यह प्रश्न अनावश्यक है।**

तथापि यह उल्लेखनीय है कि संविधान पीठ ने अधिनियम तथा नियमों के विभिन्न प्रावधानों का परीक्षण करने के पश्चात यह निष्कर्ष निकाला कि कृषि उपज के रूप में गन्ने की खरीद, बिक्री, भंडारण एवं प्रसंस्करण के विनियमन की आवश्यकता, उसी विधानमंडल द्वारा अधिनियमित गन्ना अधिनियम द्वारा स्थापित व्यापक व्यवस्था के माध्यम से पूर्णतः पूरी की जाती है, जिसने सामान्य अधिनियम अर्थात् बाजार अधिनियम को अधिनियमित किया था। [503- सी- एच; 504- ए]

13.2. *बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड* के वाद में एक तर्क यह भी दिया गया था कि औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम के अंतर्गत लोकहित में भारत संघ ने प्रथम अनुसूची में निर्दिष्ट गेहूँ उद्योग पर नियंत्रण ले लिया है और परिणामतः उस उद्योग के उत्पाद की खरीद एवं बिक्री से संबंधित किसी भी लेन-देन को राज्य अधिनियम द्वारा विनियमित नहीं किया जा सकता। संविधान पीठ ने यह अभिलक्षित किया कि संसद ने सातवीं अनुसूची की सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अपनी विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम अधिनियमित किया था तथा आटा उद्योग को "खाद्य प्रसंस्करण उद्योग" शीर्षक के अंतर्गत अनुसूचित उद्योगों में सम्मिलित किया गया था। पीठ ने कहा कि कच्चे माल के रूप में गेहूँ का उत्पादन अथवा उसकी बिक्री उक्त अधिनियम के अंतर्गत नहीं आती और इस प्रकार जहाँ तक 'कृषि उपज' के रूप में गेहूँ का संबंध है, वह औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम के दायरे से बाहर है। इसके पश्चात प्रश्न यह रह जाता है कि गेहूँ से निर्मित आटे अथवा अन्य उत्पाद की बिक्री क्या उक्त अधिनियम के दायरे में आती है। यह अभिलक्षित किया गया कि केंद्रीय सरकार ने धारा 18जी के अंतर्गत इस क्षेत्र को आच्छादित करने हेतु कोई वैधानिक आदेश जारी नहीं किया था। न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार कर दिया कि अधिनियम में ऐसी व्यवस्था का अस्तित्व, जिसके अंतर्गत केंद्रीय सरकार ऐसा आदेश जारी कर सकती है, अपने आप में उस क्षेत्र को आच्छादित करने के लिए पर्याप्त है। अपीलकर्ताओं द्वारा जिस *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी* के

वाद पर निर्भरता रखी गई थी, उसका परीक्षण करते हुए संविधान पीठ ने कहा कि यह ध्यान में रखना होगा कि संघ सूची की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए किया गया कोई भी विधायन संसद को लोकहित में खानों एवं खनिजों के विकास को संघ के नियंत्रण में लेकर विनियमित करने की शक्ति प्रदान करेगा और इस प्रकार खनन उद्योग के सभी पहलू ऐसी घोषणा के सामान्य क्षेत्र में आ जाएंगे। किंतु यह अभिलक्षित किया गया कि औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अधिनियमित किया गया था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि संघ सूची की प्रविष्टि 54 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 23 की योजना उस योजना से सर्वथा भिन्न है जो संघ सूची की प्रविष्टि 52 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के संदर्भ में लागू होती है। इन दोनों प्रविष्टियों के संयुक्त पठन से यह अभिनिर्धारित किया गया कि *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी* के वाद का अनुपात प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जा सकता। *आई.टी.सी.* वाद में बहुमत द्वारा व्यक्त मत में *बैजनाथ काडियो* के निर्णय पर निर्भरता रखी गई थी, जिसने *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी* के वाद का अनुसरण किया था। आगे *बेलसंड शुगर कंपनी* के वाद में संविधान पीठ ने *एस.आई.ई.एल.* वाद के निर्णय का अनुमोदन करते हुए यह पुनः प्रतिपादित किया कि केवल इस कारण कि किसी उद्योग को औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम की धारा 2 के अंतर्गत संघ सूची की प्रविष्टि 52 के आधार पर घोषित कर नियंत्रण में लिया गया है, राज्य विधानमंडल को राज्य सूची के अंतर्गत अपनी विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए उस उद्योग के उत्पादों को विनियमित करने से वंचित नहीं किया जा सकता। [504- बी- एच; 505- ए- बी]

13.3. *बेलसंड शुगर कंपनी* के वाद में प्रतिपादित सिद्धांत राज्य सूची की प्रविष्टि 14, 27, 28 एवं 66 पर भी समान रूप से लागू होंगे। यह भी उल्लेखनीय है कि *बेलसंड शुगर कंपनी* के वाद के कंडिका 170 में संविधान पीठ ने टीका रामजी के वाद तथा एस.आई.ई.एल. के वाद में व्यक्त मत को पुनः दोहराया तथा इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्णपीठ के निर्णय, मेसर्स श्रीराम इंडस्ट्रियल एंटरप्राइजेज, की पुष्टि की। [506- ई]

चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, **[1956] एससीआर 393—पर अवलंबित।**

बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, **(1999) 9 एससीसी 620;** *द हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य,* **[1961] 2 एससीआर 537 तथा** *बैजनाथ काडियो बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,* **(1969) 3 एससीसी 838—भिन्न निरूपित।**

14. संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा किए जाने के कारण राज्य विधानमंडलों की विधायी शक्ति को इस प्रकार समाप्त कर देने का कोई बाध्यकारी कारण नहीं है कि वे केवल प्रविष्टि 24 से संबंधित क्षेत्र ही नहीं, बल्कि राज्य सूची की अन्य प्रविष्टियों के अंतर्गत आने वाले विधायन के क्षेत्रों में भी विधि बनाने की शक्ति से वंचित हो जाएँ। भारत के संविधान के किसी अनुच्छेद की भाषा, विभिन्न प्रविष्टियों में प्रयुक्त शब्द, संविधान निर्माण का इतिहास एवं पृष्ठभूमि अथवा पूर्ववर्ती संविधान पीठ के किसी बाध्यकारी निर्णय के आधार पर ऐसा दृष्टिकोण अपनाने का कोई औचित्य नहीं है। *टीका रामजी* **के वाद में संविधान पीठ का निर्णय तथा उसके पश्चात दिए गए अन्य निर्णय उद्योगों के विधायन क्षेत्र को केवल 'निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया' तक सीमित करते हैं, न कि 'कच्चे माल' तक, जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग हो सकता है, और न ही 'उद्योग के उत्पाद के वितरण' तक। [506- एफ- जी]**

15. इस प्रकार, जहाँ तक बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री का संबंध है, राज्य विधायन तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 एक साथ सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते। राज्य विधानमंडल बाजार क्षेत्र में तंबाकू नामक कृषि उपज की बिक्री के संबंध में तथा उस उपज पर बाजार शुल्क के अधिरोपण एवं संग्रह के लिए विधायन करने हेतु सक्षम हैं। संसद संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत, जिसके अंतर्गत वह केवल उद्योगों अर्थात् 'निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया' से संबंधित विधायन कर सकती है, बाजार क्षेत्रों में तंबाकू नामक कृषि

उपज की बिक्री के संबंध में विधि बनाने हेतु सक्षम नहीं है, जैसा कि *टीका रामजी* के वाद में अभिनिर्धारित किया गया है। तंबाकू बोर्ड अधिनियम में वर्णित कच्चे तंबाकू की बिक्री से संबंधित गतिविधि को 'उद्योग' नहीं माना जा सकता। [506- एच; 507- ए- बी- सी]

टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1956] एससीआर 393—पर अवलंबित।

रूमा पाल, न्यायामूर्ति।

1.1. ऐसे प्रत्येक विवाद में, जहाँ विधायी अधिकार क्षेत्रों में प्रत्यक्ष टकराव प्रतीत होता है, प्रारंभिक दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि संबंधित विधानों से संबद्ध प्रविष्टियों को साथ पढ़कर यह देखा जाए कि क्या टकराव को न्यायसंगत रूप से समन्वित किया जा सकता है, और "एक की भाषा की व्याख्या करते हुए तथा जहाँ आवश्यक हो, उसे दूसरे की भाषा द्वारा संशोधित करते हुए" समाधान निकाला जा सकता है या नहीं। केवल तभी, जब ऐसा समाधान संभव न हो, न्यायालयों को विधायी क्षमता के प्रश्न का निर्णय करने के लिए हस्तक्षेप करना चाहिए। इस सिद्धांत पर प्रिवी काउंसिल, संघीय न्यायालय तथा हाल के समय में इस न्यायालय द्वारा अनेक मामलों में बल दिया गया है। [513- एफ- जी]

1.2. इसी प्रकार, जब समवर्ती सूची के अंतर्गत वैध रूप से प्रदत्त विधायी शक्तियों के प्रयोग में अधिनियमित दो विधानों के बीच प्रत्यक्ष टकराव प्रतीत होता है, तब भी उनका समन्वय करने का प्रयास किया जाना चाहिए। केवल तब, जब दोनों के बीच का अंतर असमाधेय हो, न्यायालयों को किसी विधि को निरस्त करने का सहारा लेना चाहिए। [514- बी- सी]

1.3. इस वाद में उठाया गया प्रश्न संविधान की सातवीं अनुसूची की उन दो प्रविष्टियों के बीच संभावित टकराव के परीक्षण तक सीमित रखकर हल किया जा सकता है, जिनसे क्रमशः तंबाकू अधिनियम तथा बाजार अधिनियम संबंधित हैं, तथा उन दोनों अधिनियमों के उन प्रावधानों के बीच, जिनका संबंध तंबाकू के विपणन से है। अतः विचार-विमर्श इन दोनों प्रविष्टियों की परिधि तथा उन दोनों अधिनियमों के कथित रूप से परस्पर विरोधी प्रावधानों

तक सीमित है जिनसे यह न्यायालय संबंधित है। टीका रामजी के वाद में 'उद्योग' शब्द की जो परिभाषा दी गई थी, उसका मूल तर्क यह है कि संविधान ने तीनों सूचियों में विधायन के विशिष्ट क्षेत्रों का स्पष्ट प्रावधान किया है और प्रत्येक क्षेत्र को स्वतंत्र अर्थ दिया जाना चाहिए। राज्य सूची की प्रविष्टि 24 की व्याख्या इस प्रकार नहीं की जा सकती कि वह राज्य सूची की अन्य प्रविष्टियों को अपने भीतर समाहित कर ले। इसे ऐसा अर्थ दिया जाना चाहिए जिससे अन्य प्रविष्टियाँ भी प्रभावी बनी रहें और उसी सीमा तक इसे इस आधार पर परिभाषित किया जाए कि यह क्या नहीं है। [514- डी- ई; 515- एफ]

एम.पी.वी. सुंदररामियर एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, [1958] एससीआर 1422; *द कलकत्ता गैस कंपनी (मालिकाना) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य,* [1962] 3 एससीआर 1; *एस.आर. बोम्मई एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य,* (1994) 3 एससीसी 1; *ए.एस. कृष्णा बनाम मद्रास राज्य,* [1957] एससीआर 399; *चतुरभाई एम. पटेल बनाम भारत संघ एवं अन्य,* [1960] 2 एससीआर 362; *राजस्थान राज्य बनाम जी. चावला,* एआईआर 1959 एससी 544; *ईश्वरी खेतान शुगर मिल्स (प्रा.) लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* (1980) 4 एससीसी 136; *मेसर्सहोएस्ट फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बनाम बिहार राज्य,* (1983) 4 एससीसी 45; तथा *दीप चंद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* [1959] पूरक एससीआर 8 —पर अवलंबित।

आई.टी.सी. लिमिटेड एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य, [1985] (पूरक) एससीसी 476 —संदर्भित।

2.1. अनेक निर्णय ऐसे हैं जिन्होंने *टीका रामजी* के वाद में प्रतिपादित तर्क का अनुसरण किया है और इस निष्कर्ष को स्वीकार किया है कि राज्य सूची की प्रविष्टि 24 तथा परिणामतः संघ सूची की प्रविष्टि 52 के प्रयोजनों के लिए 'उद्योग' का अर्थ केवल "निर्माण अथवा उत्पादन" है और उससे अधिक कुछ नहीं। इतना उल्लेख पर्याप्त है कि *टीका रामजी* के वाद में दी गई 'उद्योग' की परिभाषा को हाल ही में संविधान पीठ ने *बेलसंड शुगर कंपनी*

बनाम बिहार राज्य के वाद में अनुमोदित एवं लागू किया है और वह अभी भी प्रचलित विधि है। *हरकचंद बनथिया* के वाद में इससे भिन्न कोई मत व्यक्त नहीं किया गया है। [518- बी]

2.2. *हरकचंद बनथिया* के वाद का निर्णय *टीका रामजी* के वाद में 'उद्योग' शब्द की दी गई परिभाषा अथवा उसके तर्क को कम करने या उससे विचलित होने के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता। वह ऐसा करने का प्रयत्न भी नहीं करता। वास्तव में न्यायालय ने *टीका रामजी* के वाद में दी गई 'उद्योग' की परिभाषा की पुनः पुष्टि की थी। राज्य सूची की प्रविष्टि 27 से संबंधित टिप्पणी को उस प्रविष्टि की भाषा के संदर्भ में समझा जाना चाहिए, जो सामान्य रूप से वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण पर राज्यों को विधायन करने की शक्ति प्रदान करती है। समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 विशेष रूप से उन उद्योगों के उत्पादों के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण से संबंधित है जिनके संबंध में संसद ने विधि द्वारा यह घोषित किया है कि उनका संघ द्वारा नियंत्रण लोकहित में आवश्यक है, जैसा कि सूची-I की प्रविष्टि 7 या 52 में प्रावधान है। यदि सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द स्वयं उस क्षेत्र को आच्छादित करता, तो समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 में नियंत्रित उद्योगों के उत्पादों के व्यापार एवं वाणिज्य तथा उनके उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के लिए पृथक प्रावधान करने की आवश्यकता नहीं होती। इसी प्रकार यदि राज्य सूची की प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द पर्याप्त होता, तो उसी सूची की प्रविष्टि 27 के अंतर्गत वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण से संबंधित पृथक शीर्षक रखने की आवश्यकता नहीं होती, जब तक कि यह स्वीकार न किया जाए कि संविधान निर्माताओं से "अयोग्यता, सटीकता का अभाव और पुनरुक्ति" की त्रुटि हुई थी। 'सामान्य' और 'विशिष्ट' शब्दों की अवधारणा संदर्भ पर निर्भर करती है। राज्य सूची की प्रविष्टि 27 निस्संदेह एक सामान्य प्रविष्टि है, किंतु केवल समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के संदर्भ में, जो विशेष प्रकार के उत्पादों अर्थात् नियंत्रित उद्योगों के उत्पादों के व्यापार एवं वाणिज्य से संबंधित है। बनथिया के वाद में यह अभिनिर्धारित किया गया कि स्वर्ण अधिनियम सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत विधायी रूप से वैध था क्योंकि वह स्वर्ण के

निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया से संबंधित था, अर्थात् वह *टीका रामजी* **के वाद में परिभाषित 'उद्योग' की परिधि में आता था।** *बनथिया* **के वाद पर संविधान पीठ द्वारा बाद में** *मेसर्सफतेहचंद हिमतलाल एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य* **के निर्णय में विचार किया गया और उसका स्पष्टीकरण दिया गया। [520- ए- एफ]**

चौ. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, **[1956] एससीआर 393;** *बेलसंड शुगर कंपनी बनाम बिहार राज्य,* **(1999) 9 एससीसी 620;** *हरकचंद रतनचंद बनथिया एवं अन्य बनाम भारत संघ,* **[1970] 1 एससीआर 479;** *फतेहचंद बनाम महाराष्ट्र राज्य,* **एआईआर 1977 एससी 1825;** *आंध्र प्रदेश राज्य बनाम मैकडॉवेल एंड कंपनी,* (1996) 3 एससीसी 709; *कन्नन देवन हिल प्रोड्यूस बनाम केरल राज्य,* **(1972) 2 एससीसी 218;** *गंगा शुगर निगम लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,* **(1980) 1 एससीसी 223;** *कलकत्ता गैस कंपनी (मालिकाना) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य,* **एआईआर 1962 एससी 1044 तथा** *बी. विश्वनाथैया एंड कंपनी एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य,* **(1991) 3 एससीसी 358—संदर्भित।**

3. सूची-I की प्रविष्टि 52 के प्रयोजनों के लिए 'उद्योग' शब्द को *टीका रामजी* **के वाद में दृढ़तापूर्वक केवल निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया तक सीमित किया गया है। पश्चातवर्ती निर्णयों, जिनमें अन्य संविधान पीठों के निर्णय भी सम्मिलित हैं, ने यह पुनः पुष्टि की है कि** *टीका रामजी* **के वाद में 'उद्योग' शब्द का अर्थ अधिकृत रूप से केवल निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया है और इसमें उद्योग में प्रयुक्त कच्चा माल अथवा उद्योग के उत्पादों का वितरण सम्मिलित नहीं है। संवैधानिक ढाँचे तथा न्यायिक निर्णयों के प्रबल अधिकार के आलोक में 'उद्योग' शब्द को व्यापक अर्थ देने का तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता। किसी अन्य संदर्भ में इस शब्द का जो भी अर्थ हो, संवैधानिक संदर्भ में इसका अर्थ केवल 'निर्माण अथवा उत्पादन' ही माना जाएगा।** *टीका रामजी* **के वाद में विकसित नकारात्मक परीक्षण को लागू करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि राज्य सूची की प्रविष्टि**

24 तथा परिणामतः संघ सूची की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द को इस प्रकार नहीं पढ़ा जा सकता कि उसमें राज्य सूची की प्रविष्टि 28 एवं 66 भी सम्मिलित हो जाएँ, जिन्हें राज्य की विशिष्ट विधायी शक्तियों के क्षेत्र के रूप में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है। प्रविष्टि 28 बाजार एवं मेलों से संबंधित है तथा प्रविष्टि 66, वर्तमान संदर्भ में बाजार एवं मेलों के संबंध में शुल्क लगाने के अधिकार से संबंधित है। संघ सूची की प्रविष्टि 52 राज्य सूची की प्रविष्टि 28 को अधिरोहित नहीं करती और न ही राज्य सूची की प्रविष्टि 28 को प्रविष्टि 52 के अधीन बनाया गया है, जैसा कि राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के वाद में किया गया है। इस न्यायालय ने बेलसंड शुगर के वाद में भी यह स्वीकार किया है कि राज्य सूची की प्रविष्टि 28 स्वतंत्र रूप से कार्य करती है और संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत उद्योग से संबंधित किसी विधायन से प्रभावित नहीं होती। [521- एफ- एच; 522- ए- सी]

टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, **[1956] एससीआर 393 तथा** *बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,* **(1999) 9 एससीसी 620—पर अवलंबित।**

अमृतसर नगरपालिका बनाम पंजाब राज्य, **एआईआर 1969;** *वेवर्ली जूट मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम रेमन एंड कंपनी (इंडिया) प्रा. लिमिटेड,* **[1963] 3 एससीआर 209—संदर्भित।**

हैल्सबरीज़ लॉज़ ऑफ इंग्लैंड **(चतुर्थ संस्करण), खंड 29, पृष्ठ 601 तथा** *ऑक्सफोर्ड इंग्लिश शब्दकोष*—**संदर्भित**।

4. यदि बाजार क्षेत्र अथवा बाजार प्रांगण का कोई भाग तंबाकू की खरीद या बिक्री के लिए प्रयुक्त किया जाता है, तो वह भी राज्य की विधायी क्षमता के अंतर्गत आएगा। इसके विपरीत निष्कर्ष निकालना राज्य सूची की प्रविष्टि 28 एवं 66 के अंतर्गत बाजार एवं मेलों के संबंध में विधायन करने की राज्य की विशिष्ट शक्ति की उपेक्षा करना होगा। बाजार अधिनियम तंबाकू के "निर्माण अथवा उत्पादन" को विनियमित करने का प्रयास नहीं करता (यह मानते हुए कि कृषि उपज का निर्माण किया जा सकता है) और इस प्रकार वह तंबाकू

अधिनियम के साथ उस सीमा तक भी टकराव नहीं करता जहाँ तक वह संघ सूची की प्रविष्टि 52 से संबंधित हो सकता है। बाजार अधिनियम के सभी प्रावधान स्पष्ट रूप से राज्य सूची की प्रविष्टि 28 से संबंधित हैं। इन परिस्थितियों में राज्य तंबाकू के संबंध में सहवर्ती रूप से विधायन करने में अक्षम नहीं था और "प्रविष्टि 52 की भाषाई परिधि राज्य विधानमंडल को उसके अपने क्षेत्राधिकार के विषयों पर विधि बनाने से नहीं रोकती, जो सीधे उद्योग के मूल क्षेत्र से संबंधित नहीं हैं।" अतः बाजार अधिनियम की धाराएँ 15 एवं 27 अपने वास्तविक स्वरूप में राज्य सूची की प्रविष्टि 28 एवं 66 से संबंधित हैं और राज्य द्वारा विधिपूर्वक अधिनियमित की गई हैं। संयोगवश यह भी किसी का तर्क नहीं है कि धारा 27 के अंतर्गत वसूल किया गया शुल्क प्रदान की गई सेवाओं एवं सुविधाओं के प्रतिफल के रूप में नहीं है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि संसद 'बाजार एवं मेले' स्थापित करने या विनियमित करने के संबंध में, राज्य सूची की प्रविष्टि 28 के अर्थ में, तंबाकू के संदर्भ में भी विधि बनाने हेतु सक्षम नहीं है। यद्यपि संसद सहवर्ती रूप से राज्य के विधायी क्षेत्र में प्रवेश कर सकती है, बशर्ते कि (1) ऐसा प्रवेश उस विधि के वैध प्रावधानों का अविभाज्य भाग हो और (2) राज्य ने उस क्षेत्र को विरोधी वैधानिक प्रावधानों द्वारा पूर्णतः अधिभूत न कर लिया हो। [524- एफ; 525- ए- डी]

5. चूँकि बाजारों के स्थान निर्धारण का अधिकार विशेष रूप से राज्यों को है, अतः तंबाकू अधिनियम के अंतर्गत कार्य करने वाले प्राधिकारियों को नगरपालिका विधियों का पालन करना होगा और नीलामी मंच केवल अनुमत क्षेत्रों में ही स्थापित करने होंगे। यदि बाजार अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध सुविधाओं का उपयोग किया जाता है, तो उनके लिए शुल्क देना होगा और बाजार अधिनियम के अंतर्गत शुल्क अधिरोपण एवं संग्रह के लिए नियुक्त प्राधिकारी ऐसा करने के लिए सक्षम होंगे। यदि तंबाकू अधिनियम के अंतर्गत नीलामी मंचों पर अतिरिक्त सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं, तो उस अधिनियम की धारा 14-ए के अंतर्गत शुल्क लगाया जा सकता है। अतः दोनों अधिनियमों के अंतर्गत शुल्क अधिरोपण का अधिकार

अनिवार्य रूप से परस्पर विरोधी नहीं है; शुल्क विकल्प के रूप में नहीं बल्कि अतिरिक्त रूप में लगाया जा सकता है। यदि यह संभव न हो और कोई टकराव उत्पन्न हो, तो बाजार अधिनियम के प्रावधान प्रभावी होंगे, न कि तंबाकू अधिनियम के। [528- सी- ई]

न्यू शॉर्टर ऑक्सफोर्ड इंग्लिश शब्दकोष—संदर्भित।

6. यदि यह मान भी लिया जाए कि बाजार अधिनियम की धाराएँ 15 एवं 27 राज्य सूची की प्रविष्टि 28 एवं 66 से संबंधित नहीं हैं और वे प्रविष्टि 26 एवं 27 से संबंधित हैं, तब भी ये धाराएँ संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद के लिए सुरक्षित क्षेत्र में प्रवेश नहीं करतीं। वस्तुओं की आपूर्ति एवं वितरण तथा उनसे संबंधित व्यापार एवं वाणिज्य के संबंध में राज्य का विधायन, जो प्रविष्टि 26 एवं 27 से संबंधित है, केवल समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत किसी केंद्रीय विधायन के अधीन होगा, न कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 के। इसके अतिरिक्त, तंबाकू अधिनियम का कोई भी भाग 'उद्योग' से संबंधित माना जाए या नहीं, *टीका रामजी* के वाद की तर्कपद्धति के अनुसार कम से कम वे प्रावधान जो तंबाकू के निस्तारण से संबंधित हैं, प्रविष्टि 52 से संबंधित नहीं हैं। संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा इन प्रावधानों को आच्छादित नहीं करती और राज्य सूची की प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत राज्यों को तंबाकू के संबंध में विधायन करने की स्वतंत्रता थी। तंबाकू अधिनियम के वे प्रावधान जो तंबाकू की बिक्री से संबंधित हैं, क्या समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के आधार पर बनाए रखे जा सकते हैं, इस प्रश्न का परीक्षण करना अनावश्यक है, क्योंकि अपीलकर्ताओं ने ऐसा तर्क प्रस्तुत नहीं किया तथा तंबाकू अधिनियम के प्रावधानों की संवैधानिक वैधता इस पीठ के समक्ष परीक्षणार्थ प्रस्तुत नहीं की गई है। [528 - एफ-जी; 529-ए]

टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1956] एससीआर 393 तथा *एम. करुणानिधि बनाम भारत संघ,* (1979) 3 एससीसी 431—पर अवलंबित।

7. यह मानते हुए भी कि तंबाकू अधिनियम का अध्याय III संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आता है, तथापि संसद का उद्देश्य बाजार अधिनियम के किसी भी भाग को अमान्य करना नहीं था। धारा 31 द्वारा यह स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है कि संसद संपूर्ण क्षेत्र को अधिग्रहित करना नहीं चाहती और उसने राज्य के विधायन के लिए 'स्थान' छोड़ा है तथा यह स्पष्ट किया है कि केंद्रीय अधिनियम के प्रावधान अन्य किसी विधि के अतिरिक्त होंगे और उनके प्रतिकूल नहीं होंगे। यह धारा इसलिए भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि तंबाकू अधिनियम के अधिनियमन के समय अधिकांश बाजार अधिनियम पहले से अस्तित्व में थे। तंबाकू अधिनियम की धारा 31 में निहित इस प्रकार की बचाव धारा को दो प्रकार से समझा जा सकता है। एक वह तरीका है जिसे इस न्यायालय ने *एम. करुणानिधि बनाम भारत संघ* के वाद में स्वीकार किया था, जिसमें कहा गया कि ऐसी धारा स्पष्ट रूप से प्रमुख विधायिका के उस आशय को प्रकट करती है जिससे "यह तर्क करने की कोई गुंजाइश नहीं रहती कि राज्य अधिनियम किसी भी प्रकार से केंद्रीय अधिनियम के प्रतिकूल है।" दूसरा तरीका यह है कि ऐसी धारा को इस प्रकार पढ़ा जाए कि प्रमुख विधायन अपने विधायी संरक्षण के अंतर्गत अधीनस्थ विधि के कथित रूप से परस्पर-विरोधी प्रावधानों को सम्मिलित कर लेता है। किसी भी प्रकार से देखा जाए, धारा 31 के स्पष्ट शब्द तथा न्यायालयों का यह दायित्व कि जहाँ संभव हो विधायन का समन्वय करते हुए उसे वैध ठहराया जाए, इस निष्कर्ष की ओर ही ले जाते हैं कि राज्य द्वारा अधिरोपित बाजार शुल्क की संवैधानिक वैधता को स्वीकार किया जाए। [529- बी- ई]

8. बाजार शुल्क के अधिरोपण को बनाए रखने के पक्ष में एक और महत्वपूर्ण परिस्थिति यह है कि तंबाकू अधिनियम के अध्याय III के अनेक प्रावधान, विशेषतः नीलामी मंचों की स्थापना से संबंधित धाराएँ 13, 13क तथा तंबाकू की बिक्री पर शुल्क अधिरोपण से संबंधित धारा 14क, भारत के किसी भी राज्य में कर्नाटक राज्य को छोड़कर प्रवर्तित नहीं की गई हैं। केवल तर्क के लिए यह मान भी लिया जाए कि तंबाकू की बिक्री 'उद्योग' की

परिभाषा के अंतर्गत आती है, तब भी जब तक केंद्रीय सरकार प्रभावी विधायन द्वारा वास्तव में उस क्षेत्र को अधिग्रहित नहीं कर लेती, तब तक राज्य विधानमंडल को राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत उस क्षेत्र में विधायन करने का अधिकार बना रहेगा। ऐसी व्याख्या स्वीकार करना कठिन है जो राज्यों को यह अधिकार देने से वंचित कर दे कि वे केवल बाजार क्षेत्रों के भीतर तंबाकू की बिक्री की व्यवस्था करें और बाजार शुल्क अधिरोपित करें, जबकि संसद स्वयं उन राज्यों में धाराएँ 13, 13क और 14क को प्रवर्तित करने का प्रयास न करे या कभी न करे। [529- एफ- एच; 530- ए]

ईश्वरी खेतान शुगर मिल्स (प्रा.) लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1980) 4 एससीसी 136 तथा *बेलसंड शुगर कंपनी बनाम बिहार राज्य,* (1999) 9 एससीसी 620—पर अवलंबित।

9. यदि यह भी स्वीकार कर लिया जाए कि बाजार अधिनियम में निहित वह प्रावधान जो तंबाकू की बिक्री को बाजार क्षेत्र के बाहर निषिद्ध करता है और तंबाकू अधिनियम के अंतर्गत नीलामी मंचों की स्थापना के बीच कोई टकराव है, तथा बाजार अधिनियम के अंतर्गत राज्यों की बाजार शुल्क अधिरोपित करने की शक्ति और तंबाकू अधिनियम के अंतर्गत तंबाकू की बिक्री पर शुल्क अधिरोपण के बीच भी टकराव है, तब भी उन राज्यों में जहाँ तंबाकू अधिनियम की धाराएँ 13, 13क और 14क प्रवर्तित नहीं हैं, बाजार अधिनियम के प्रावधान ही प्रभावी होंगे। [530- जी]

10. *आईटीसी* के वाद में बहुमत का मत राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता के प्रश्न पर आधारित था, जिसमें कर्नाटक बाजार अधिनियम के उस भाग को निरस्त कर दिया गया था जो तंबाकू तथा उसके उत्पादों पर बाजार शुल्क अधिरोपित करने की शक्ति प्रदान करता था। यह मत छह आधारों पर आधारित था, जिनमें से प्रत्येक विधि के अनुरूप प्रतीत नहीं होता : (i) न्यायालय ने यह मानकर विचार किया कि तंबाकू अधिनियम पूर्णतः और केवल संघ सूची की प्रविष्टि 52 से संबंधित है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि जहाँ तक

तंबाकू के निस्तारण से संबंधित प्रावधानों का प्रश्न है, वे संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत नहीं आते; (ii) अनुच्छेद 246(4) का सहारा लेकर यह कहा गया कि संसद के पास "अपवादात्मक परिस्थितियों में राज्य सूची के विषयों पर भी विधायन करने की अधिरोहक शक्ति" है। अनुच्छेद 246(4) का वर्तमान विवाद से कोई संबंध नहीं है; (iii) यह कहा गया कि "यह स्थापित सिद्धांत है कि जब संसद और राज्य विधानमंडल द्वारा पारित दो अधिनियम परस्पर टकराते हैं और उनका सामंजस्य संभव नहीं होता, तब केंद्रीय विधायन प्रभावी होगा।" वास्तव में स्थापित सिद्धांत यह है कि यदि संसद और राज्य विधानमंडल समवर्ती सूची की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत एक ही विषय पर परस्पर-विरोधी विधायन करते हैं, तभी केंद्रीय विधायन प्रभावी होगा। अन्य परिस्थितियों में यह देखना होगा कि विरोधी विधायन राज्य सूची अथवा संघ सूची की किसी विशिष्ट प्रविष्टि से संबंधित है, जिसके आधार पर प्रमुख विधायन प्रभावी होगा; (iv) यह कहा गया कि यदि अल्पमत का मत स्वीकार कर लिया जाए तो इससे "1975 के अधिनियम की संपूर्ण प्रभावशीलता और मूल आशय समाप्त हो जाएगा क्योंकि विधायी शक्ति राज्य सरकार को सौंप दी जाएगी, जिसे संसद ने अनुच्छेद 246 के अंतर्गत अपने अधीन ले लिया है।" वास्तव में आईटीसी के वाद में अल्पमत के मत ने *टीका रामजी* के निर्णय का अनुसरण करते हुए यह सही रूप से कहा था कि तंबाकू अधिनियम और बाजार अधिनियम अपने-अपने क्षेत्र में कार्य करते हैं और यदि दोनों अधिनियमों को उनके वास्तविक स्वरूप एवं प्रकृति के प्रकाश में देखा जाए तो कोई प्रतिकूलता उत्पन्न नहीं होती। *टीका रामजी* तथा उसके पश्चात् आने वाले अन्य संविधान पीठ के निर्णयों का बहुमत द्वारा उल्लेख तक नहीं किया गया; (v) संघ सूची की प्रविष्टि 52 और राज्य सूची की प्रविष्टि 28 के प्रभाव का निर्धारण करते समय बहुमत ने संघ सूची की प्रविष्टि 54 और राज्य सूची की प्रविष्टि 23 से संबंधित निर्णयों पर निर्भर किया। इन प्रविष्टियों का क्षेत्र और स्वरूप भिन्न है, और बहुमत द्वारा जिन निर्णयों पर निर्भर किया गया—*हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी बनाम उड़ीसा राज्य; बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य; भारत कुकिंग*

कोल लिमिटेड बनाम बिहार राज्य तथा उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुल्लोच एंड कंपनी—**वे इस संदर्भ में उपयुक्त नहीं हैं; (vi) अंततः बहुमत ने यह भी कहा कि चूँकि राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त नहीं की गई थी, अतः कर्नाटक बाजार अधिनियम, 1980 पूर्णतः अयोग्य था। यह दृष्टिकोण अनुच्छेद 254(2) की गलत व्याख्या पर आधारित है, जिसका इस वाद से कोई संबंध नहीं है। अनुच्छेद 254(2) की भाषा स्पष्ट है यह केवल वरीयता के प्रश्न से संबंधित है, क्षमता से नहीं। समवर्ती सूची के अंतर्गत विरोधी विधायन की स्थिति में यदि राज्य विधायन को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हो जाती है, तो वह उस राज्य में केंद्रीय विधायन पर प्रभावी होगा। यह अनुच्छेद यह नहीं कहता कि राष्ट्रपति की स्वीकृति के बिना राज्य विधायन अयोग्य हो जाता है। [530- एच; 531- ए- एच; 532- ए- सी]**

टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, **[1956] एससीआर 393;** *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य,* **[1961] 2 एससीआर 537;** *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य,* **(1969) 3 एससीसी 838 तथा** *भारत कुकिंग कोल लिमिटेड बनाम बिहार राज्य,* **(1990) 4 एससीसी 557—संदर्भित।**

11. उपरोक्त के आलोक में यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि *आईटीसी बनाम कर्नाटक राज्य* **का निर्णय त्रुटिपूर्ण था; तंबाकू पर बाजार शुल्क अधिरोपित करने की राज्य विधानमंडल की क्षमता को स्वीकार किया जाता है। [532 - जी]**

आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य, **[1985] (पूरक) एससीसी 476—अमान्य किया गया।**

बृजेश कुमार, न्यायमूर्ति

1.1. यह सत्य है कि किसी सूची की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत किसी विषय पर विधायन करते समय, उसी सूची की किसी अन्य प्रविष्टि अथवा किसी अन्य सूची की प्रविष्टि से संबंधित विधायी क्षेत्र में प्रवेश करने अथवा उसे स्पर्श करने की संभावना बनी रहती है, विशेषकर उन विषयों के संदर्भ में जो उससे सहायक या आकस्मिक रूप से संबंधित हों। ऐसी

स्थिति में, अन्य बातों के साथ-साथ, सूची की किसी प्रविष्टि की व्यापक एवं उदार व्याख्या करना आवश्यक हो सकता है। [534- ई]

1.2. विधायन के विषयों का पूर्णतः पृथक अथवा अभेद्य वर्गीकरण संभव नहीं है, किंतु किसी अन्य प्रविष्टि के क्षेत्र में प्रवेश करने का अर्थ यह नहीं हो सकता कि उस प्रविष्टि का पूर्णतः लोप हो जाए, भले ही वह किसी अन्य विधायिका की विशिष्ट विधायी सूची में क्यों न हो। वर्तमान वाद में भी राज्य सूची की प्रासंगिक प्रविष्टियाँ, प्रविष्टि 24 को छोड़कर, इस प्रकार नहीं मानी जा सकतीं कि वे व्यावहारिक रूप से राज्य सूची से लुप्त हो गई हैं और संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत तंबाकू उद्योग की घोषणा के कारण पूर्णतः संघ सूची में स्थानांतरित हो गई हैं, केवल इस आधार पर कि राज्य सूची के विषयों को स्पर्श या प्रभावित किया गया है। [534- एफ- जी]

आई.टी.सी. लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य, **[1985] पूरक 1 एससीआर 145;** *उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुल्लोच एंड कंपनी,* **[1964] 4 एससीआर 461;** *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,* **(1969) 3 एससीसी 838 तथा** *टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* **[1956] एससीआर 393—संदर्भित।**

अल्पमत (जी.बी. पटनायक, स्वयं के लिए तथा भारत के मुख्य न्यायाधीश के लिए)

1.1. संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम संवैधानिक रूप से वैध है और उसमें निहित सभी प्रावधान, जिनमें तंबाकू की खेती तथा तंबाकू की बिक्री एवं क्रय से संबंधित प्रावधान भी सम्मिलित हैं, संसद की विधायी क्षमता के अंतर्गत आते हैं। संघ सूची की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ नहीं दिया जा सकता, विशेषतः जब संविधान की विभिन्न सूचियों की प्रविष्टियों की व्याख्या से संबंधित समस्त निर्णयों का समग्र अध्ययन जिसमें आईटीसी वाद का अल्पमत भी सम्मिलित है यह दर्शाता है कि सूचियों की प्रविष्टियों की व्याख्या उदार एवं व्यापक रूप से की जानी चाहिए। यह विधि का सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि संवैधानिक दस्तावेजों में विधायी

शक्तियाँ प्रदान करने वाले शब्दों की व्याख्या अत्यंत उदारता तथा उनके व्यापकतम अर्थ में की जानी चाहिए। [582- जी- एच; 583- ए]

1.2. यह निस्संदेह व्याख्या का एक सिद्धांत है कि जब दो प्रतिस्पर्धी विधायन हों— एक संसद द्वारा तथा दूसरा राज्य द्वारा तो न्यायालय प्रयास करेगा कि यदि संभव हो तो दोनों विधायनों को लागू रहने दिया जाए। किंतु यदि दोनों अधिनियमों के प्रावधानों की परीक्षा करने पर यह पाया जाए कि केंद्रीय विधायन और राज्य विधायन परस्पर टकराते हैं, तब दोनों को एक साथ लागू रखने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। ऐसी स्थिति में केंद्रीय विधायन प्रभावी होगा, बशर्ते कि वह अन्यथा संवैधानिक रूप से वैध हो, अर्थात् संसद को उस विधायन को अधिनियमित करने की विधायी क्षमता प्राप्त हो। इस दृष्टिकोण से तंबाकू बोर्ड अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों, विशेषतः धाराएँ 3, 8 और 32, तथा कृषि उपज बाजार अधिनियम के प्रावधानों, विशेषतः धारा 4(2) और धारा 15 जिसे *बेलसंड* के वाद में बाजार अधिनियम का मूल प्रावधान माना गया है का परीक्षण करने पर यह निष्कर्ष अपरिहार्य रूप से निकलता है कि दोनों अधिनियमों के प्रावधान प्रत्यक्ष रूप से परस्पर टकराते हैं और दोनों अधिनियमों के प्रावधानों का सामंजस्य स्थापित करना कठिन है। अतः तंबाकू बोर्ड अधिनियम, जो संसद द्वारा अधिनियमित है और जिसमें तंबाकू उद्योग से संबंधित सभी प्रावधान, जिनमें तंबाकू की खेती तथा कच्चे तंबाकू की बिक्री एवं क्रय से संबंधित प्रावधान भी सम्मिलित हैं, उस अधिनियम में निर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार विनियमित किए गए हैं, के आलोक में कृषि उपज बाजार अधिनियम के वे प्रावधान, जो बाजार समिति को बाजार क्षेत्र के भीतर कच्चे तंबाकू की बिक्री एवं क्रय पर शुल्क अधिरोपित करने का अधिकार प्रदान करते हैं, 'तंबाकू' नामक उपज के संबंध में लागू नहीं होंगे। अन्य शब्दों में, केंद्रीय अधिनियम प्रभावी होगा और तंबाकू उद्योग के संपूर्ण क्षेत्र को नियंत्रित करेगा। यह भी ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि जब संसद किसी विशेष उद्योग का नियंत्रण उस उद्योग के हित तथा राष्ट्रीय हित में अपने हाथ में लेने का निर्णय करती है, तो वह नियंत्रण प्रभावी

होना चाहिए और इस प्रकार होना चाहिए कि अपेक्षित उद्देश्य की पूर्ति हो सके। अतः ऐसा विधायन किया जाना चाहिए जो तंबाकू की खेती तथा उसकी बिक्री एवं क्रय दोनों पर नियंत्रण प्रदान करे, जिससे उस उद्देश्य की पूर्ति हो सके जिसके लिए संसद ने उस उद्योग का नियंत्रण अपने हाथ में लिया है। इस प्रकार तंबाकू बोर्ड अधिनियम और कृषि उपज बाजार अधिनियम परस्पर टकराते हैं और उन्हें एक साथ लागू नहीं किया जा सकता। तंबाकू बोर्ड अधिनियम प्रभावी होगा और कृषि उपज बाजार अधिनियम, जहाँ तक वह बाजार क्षेत्र के भीतर तंबाकू की बिक्री एवं क्रय पर शुल्क अधिरोपण से संबंधित है, उस अधिनियम के दायरे से बाहर हो जाएगा। [583- बी- एच; 584- ए]

1.3. दोनों अधिनियमों के मध्य असंगति और प्रतिकूलता के कारण केंद्रीय अधिनियम ही प्रभावी होगा। *आईटीसी* के वाद में बहुमत का निर्णय, यद्यपि भिन्न कारणों से, सही रूप से दिया गया था। [584 - बी]

आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य, [1985] पूरक 1 एस.सी.आर. 145—पुष्ट।

बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (1999) 9 एस.सी.सी. 620—संदर्भित।

2. व्याख्या के नियमों तथा इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के आलोक में यह नहीं कहा जा सकता कि सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाए ताकि राज्य सूची की प्रविष्टि 27 अथवा प्रविष्टि 14 के अंतर्गत आने वाले विधायन के विषय को उसकी परिधि से बाहर रखा जा सके। संविधान की उस रूपरेखा को ध्यान में रखते हुए जिसमें संसद की सर्वोच्चता का प्रावधान है, तथा संविधान की सातवीं अनुसूची की किसी भी सूची की प्रविष्टि की व्याख्या के सामान्य नियमों को ध्यान में रखते हुए, तंबाकू उद्योग पर नियंत्रण अपने हाथ में लेने के संसद के उद्देश्य तथा संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अपेक्षित घोषणा किए जाने के पश्चात् तंबाकू बोर्ड अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों की परीक्षा करने पर इस न्यायालय को सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ

देने का कोई औचित्य नहीं दिखाई देता। न ही राज्यों तथा विभिन्न बाजार समितियों की यह दलील स्वीकार्य है कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम में निहित वे प्रावधान जो तंबाकू की खेती तथा तंबाकू की बिक्री एवं क्रय की व्यवस्था से संबंधित हैं, संसद की विधायी क्षमता से परे हैं क्योंकि वे "उद्योग" शब्द के कथित संकीर्ण अर्थ के अंतर्गत नहीं आते। यह तर्क इस आधार पर दिया गया है कि अन्यथा राज्य विधानमंडल को राज्य सूची की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत बाजार, प्रविष्टि 14 के अंतर्गत कृषि तथा प्रविष्टि 27 के अंतर्गत वस्तुओं के संबंध में विधि बनाने की शक्ति से वंचित कर दिया जाएगा। ऐसी व्याख्या संविधान की मूल योजना तथा संसद की सर्वोच्चता के प्रतिकूल होगी और संघ सूची तथा राज्य सूची की प्रविष्टियों के बीच शक्तियों के विभाजन की व्याख्या करते समय इस प्रकार का दृष्टिकोण केंद्रीकरण की प्रवृत्ति के भी प्रतिकूल होगा। अतः सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ नहीं दिया जाना चाहिए, बल्कि उसकी ऐसी व्याख्या की जानी चाहिए जिससे संसद को उस विषय के संबंध में विधि बनाने की शक्ति प्राप्त हो सके जिसकी घोषणा की गई है और जिसका नियंत्रण अपने हाथ में लिया गया है, तथा उसमें वे सभी सहायक विषय भी सम्मिलित किए जा सकें जो युक्तिसंगत रूप से उस शक्ति के अंतर्गत आते हों और विधायन के विषय के आकस्मिक अंग हों, जिससे संसद प्रभावी विधि बना सके। इस प्रकार व्याख्या करने पर तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों की परीक्षा करने पर यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि संसद को उक्त अधिनियम के किसी भी प्रावधान को अधिनियमित करने में विधायी क्षमता का अभाव नहीं है, क्योंकि यह अधिनियम संघ द्वारा तंबाकू उद्योग के नियंत्रण को अपने हाथ में लेने की घोषणा के पश्चात् उस उद्योग के विकास के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया है। [571- एफ- एच; 572- ए- ई]

3.1. जिन मामलों का उल्लेख किया गया है, अर्थात् *टीकारामजी, कलकत्ता गैस, कन्ननदेवन तथा गंगा शुगर,* उनमें से किसी भी वाद में संघ सूची की प्रविष्टि 52 के संदर्भ में संसद की विधि बनाने की क्षमता पर प्रश्न नहीं उठाया गया था। *टीकारामजी* के वाद में

विचारणीय प्रश्न यह था कि क्या राज्य विधानमंडल द्वारा पारित अधिनियम तथा उसके अंतर्गत जारी अधिसूचना संसद के अधिनियम तथा उसके अंतर्गत जारी अधिसूचना के प्रतिकूल हैं। राज्य अधिनियम, अर्थात् गन्ना अधिनियम, के प्रावधानों की परीक्षा करने पर न्यायालय ने यह अभिलक्षित किया कि वह अधिनियम केवल गन्ने की आपूर्ति एवं क्रय के विनियमन से संबंधित है और किसी भी प्रकार से चीनी के संबंध में केंद्र सरकार के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करता। उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 18-जी का परीक्षण करने पर न्यायालय ने यह अभिलक्षित किया कि उक्त अधिनियम, विशेषतः धारा 18-जी, गन्ने को आच्छादित नहीं करती और न ही यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि संसद का उद्देश्य संपूर्ण क्षेत्र को आच्छादित करना था। न्यायालय को "किसी अनुसूचित उद्योग से संबंधित किसी वस्तु या वस्तुओं के वर्ग" अभिव्यक्ति का अर्थ निर्धारित करना था, जिसका प्रयोग धारा 18-जी में किया गया था, और न्यायालय ने यह अभिलक्षित किया कि यह अभिव्यक्ति कच्चे माल को नहीं बल्कि केवल तैयार उत्पादों को संदर्भित करती है। न्यायालय ने केंद्रीय अधिनियम के उद्देश्य की भी समीक्षा की, जो निर्मित वस्तुओं का समुचित वितरण तथा उचित मूल्य पर उनकी उपलब्धता सुनिश्चित करना था। राज्य सूची की प्रविष्टि 24 तथा प्रविष्टि 27 की सामग्री का परीक्षण करते हुए न्यायालय ने अभिलक्षित किया कि नियंत्रित उद्योगों को संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत रखा गया है, जो संसद के विशिष्ट अधिकार क्षेत्र में आते हैं, जबकि अन्य उद्योग राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत रहते हैं। उस वाद में न्यायालय को सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" अभिव्यक्ति की परिधि एवं सामग्री का परीक्षण करना आवश्यक नहीं था और वास्तव में न्यायालय ने यह कहा था कि विचारणीय प्रश्न यह था कि क्या किसी उद्योग के कच्चे माल, जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग होते हैं, "उद्योग" विषय के अंतर्गत आते हैं। उस वाद में विचाराधीन केंद्रीय विधायन तथा केंद्र सरकार द्वारा जारी अधिसूचनाएँ समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत संसद की विधायी शक्ति के प्रयोग के रूप में अधिनियमित की गई थीं और जब

संसद समवर्ती क्षेत्र में विधि बनाती है, तब उससे प्रांतीय विधानमंडलों की समान शक्तियाँ समाप्त नहीं हो जातीं। जब न्यायालय ने यह कहा कि "उद्योग" शब्द तीन भिन्न पहलुओं को समाहित कर सकता है—(i) कच्चा माल, जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, (ii) निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया, तथा (iii) उद्योग के उत्पादों का वितरण—और यह अभिलक्षित किया कि कच्चा माल राज्य सूची की प्रविष्टि 27 के अंतर्गत आएगा तथा निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत आएगी, सिवाय उस स्थिति के जब उद्योग नियंत्रित उद्योग हो और तब वह संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आएगा, तब न्यायालय वास्तव में सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" अभिव्यक्ति की सामग्री का परीक्षण नहीं कर रहा था। इसी कारण न्यायालय ने यह कहा कि चीनी तथा गन्ने के संबंध में केंद्र द्वारा किया गया विधायन संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत भी आ सकता है। चूँकि उस वाद में विचाराधीन विधायन को संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत विधायन नहीं माना गया था, अतः संसद की उस शक्ति के संदर्भ में *टीकारामजी* के निर्णय के अनुप्रयोग का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। अतः इस आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए। यह भी स्पष्ट है कि उस वाद में न्यायालय ने 'पिथ एंड सब्सटेंस' के सिद्धांत को लागू करने से यह कहते हुए इंकार किया था कि केंद्र तथा राज्य दोनों समवर्ती क्षेत्र में कार्य कर रहे थे और इसलिए संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत केंद्र के विशिष्ट अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप का प्रश्न नहीं उठता। दूसरे शब्दों में, *टीकारामजी* के वाद में न तो इस न्यायालय को सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" अभिव्यक्ति की सामग्री का परीक्षण करने के लिए कहा गया था और न ही विचाराधीन केंद्रीय अधिनियम उस प्रविष्टि के अंतर्गत अधिनियमित किया गया था। अतः *टीकारामजी* के वाद में की गई टिप्पणियाँ या निष्कर्ष यह निर्धारित करने में सहायक नहीं हो सकते कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द का अर्थ संकीर्ण होगा या व्यापक,

जबकि सामान्य नियम यह है कि प्रत्येक प्रविष्टि की व्याख्या व्यापक रूप में की जाती है। [573 - सी-एच; 574-ए-एच; 575-ए-एफ]

3.2. *कलकत्ता गैस* के वाद में निस्संदेह *टीका रामजी* के वाद का अनुसरण किया गया था और न्यायालय संविधान की सातवीं अनुसूची की राज्य सूची की दो प्रतिस्पर्धी प्रविष्टियों, अर्थात् प्रविष्टि 24 और प्रविष्टि 25, का परीक्षण कर रहा था। जहाँ राज्य सूची की प्रविष्टि 24 "उद्योग" से संबंधित है, वहीं प्रविष्टि 25 "गैस और गैस संयंत्र" से संबंधित है। प्रश्न यह था कि क्या राज्य विधानमंडल द्वारा "गैस और गैस संयंत्र" विषय पर बनाई गई विधि, "उद्योग" विषय पर बनाई गई विधि पर प्रभावी होगी। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि "गैस और गैस संयंत्र" एक विशिष्ट विषय है, अतः उसके अंतर्गत बनाई गई विधि सामान्य शीर्षक "उद्योग" के अंतर्गत बनाई गई विधि पर प्रभावी होगी। *कलकत्ता गैस* के वाद में यह भी अभिलक्षित किया गया कि "इस वाद में 'उद्योग' अभिव्यक्ति की सटीक परिभाषा करने अथवा उसके सभी अवयवों को पूर्ण रूप से निर्दिष्ट करने का प्रयास करना आवश्यक नहीं है।" उक्त अवलोकनों के आलोक में यह निर्णय वर्तमान वाद में विचाराधीन विषय, अर्थात् "उद्योग" अभिव्यक्ति के वास्तविक अर्थ और परिधि का निर्धारण करने के लिए उपयोगी नहीं है। [575- एफ- एच; 576- ए- बी]

3.3. *कन्ननदेवन हिल्स प्रोड्यूस* के वाद में राज्य विधानमंडल द्वारा अधिनियमित भूमि पुनरुद्धार अधिनियम, 1971 की वैधता को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि राज्य विधानमंडल के पास विधायी क्षमता का अभाव है। न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालते हुए अधिनियम की वैधता को स्वीकार किया कि उक्त विधि राज्य सूची की प्रविष्टि 18 भूमि तथा समवर्ती सूची की प्रविष्टि 42 संपत्ति के अधिग्रहण और अधिग्रहणाधिकार से संबंधित थी। इसी संदर्भ में न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि राज्य विधानमंडल की इन प्रविष्टियों के अंतर्गत विधि बनाने की शक्ति केवल इस आधार पर नकारा नहीं जा सकती कि उसका कुछ प्रभाव उस उद्योग पर पड़ता है जिसका नियंत्रण संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संघ

सरकार द्वारा अपने हाथ में ले लिया गया है। तथापि न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि "प्रभाव" और "विषय-वस्तु" समान नहीं होते। दूसरे शब्दों में, संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत "उद्योग" विषय वास्तव में उस वाद में विचाराधीन नहीं था। [576- B- D]

3.4. *गंगा शुगर निगम* के संविधान पीठ के निर्णय में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि वे न तो संघ सूची की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" अभिव्यक्ति की परिधि का निर्धारण करने में सहायक हैं और न ही यह निर्धारित करने में कि संसद को नियंत्रित उद्योग के संबंध में तंबाकू बोर्ड अधिनियम जैसी विधि बनाने की विधायी क्षमता है, जिसमें तंबाकू की खेती तथा कच्चे तंबाकू की खरीद एवं बिक्री से संबंधित प्रावधान भी सम्मिलित हों। *गंगा शुगर* के वाद में उत्तर प्रदेश गन्ना (क्रय कर) अधिनियम, 1961 की धारा 3 के अंतर्गत कारखाना स्वामी द्वारा क्रय किए गए गन्ने पर क्रय कर अधिरोपण की वैधता को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि यह विधायन एक नियंत्रित उद्योग से संबंधित है और अतः इसकी विधायी शक्ति संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत केवल संसद को प्राप्त है। न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार करते हुए कहा कि सातवीं अनुसूची की राज्य सूची की प्रविष्टि 54 राज्य को वस्तुओं के क्रय पर कर लगाने हेतु विधायन करने की शक्ति प्रदान करती है और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि उक्त विधायन संघ सूची की प्रविष्टि 52 में अतिक्रमण करता है। न्यायालय ने यह प्रश्न उठाया कि क्या क्रय कर अधिनियम केवल इसलिए अवैध है कि वह एक नियंत्रित उद्योग, अर्थात् चीनी उद्योग, से संबंधित है, और इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक में दिया, *टीका रामजी* के वाद में संविधान पीठ द्वारा की गई टिप्पणियों का अनुसरण करते हुए। इस प्रकार यह अतिशयोक्तिपूर्ण तर्क कि राज्य विधानमंडल किसी नियंत्रित उद्योग के संबंध में कोई भी विधि बनाने में अक्षम है, जब संघ सरकार ने घोषणा करके उसका नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया हो, अस्वीकार कर दिया गया। [577- बी- एफ]

3.5. अतः उपरोक्त किसी भी संविधान पीठ के निर्णय में संघ सूची की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" अभिव्यक्ति के वास्तविक अर्थ और परिधि का परीक्षण नहीं किया गया था, और न ही यह प्रश्न विचाराधीन था कि संसद को किसी नियंत्रित उद्योग के संबंध में ऐसी विधि बनाने की विधायी क्षमता है जिसमें निर्माण अथवा उत्पादन से पूर्व के चरण से संबंधित प्रावधान भी सम्मिलित हों। परिणामस्वरूप, ये निर्णय तंबाकू अधिनियम के उन प्रावधानों को निरस्त करने के लिए सहायक नहीं हो सकते जो तंबाकू की खेती अथवा कच्चे तंबाकू की बिक्री एवं क्रय से संबंधित हैं। [578- ए- बी]

टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, **[1956] एससीआर 393;** *कलकत्ता गैस कंपनी (मालिकाना) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य,* **[1962] पूरक 3 एससीआर 1;** *गंगा शुगर निगम लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,* **(1980) 1 एससीसी 223;** *कन्नन देवन हिल्स प्रोड्यूस बनाम केरल राज्य एवं एक अन्य,* **(1972) 2 एससीसी 218;** *बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,* **(1999) 9 एससीसी 620 तथा** *बी. विश्वनाथैया एंड कंपनी एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य,* **(1991) 3 एससीसी 358— संदर्भित।**

4. *ईश्वरी खेतान* **के वाद में न्यायालय सूची-II की प्रविष्टि 24 तथा सूची-I की प्रविष्टि 52 की परिधि और विस्तार की व्याख्या कर रहा था और उसने यह अभिलक्षित किया कि सूची-II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत राज्य की शक्ति केवल उसी सीमा तक क्षीण होगी जिस सीमा तक संसद द्वारा घोषित उद्योग के संबंध में की गई घोषणा के अनुसरण में संघ नियंत्रण ग्रहण करता है, जैसा कि विधायी अधिनियम द्वारा निर्धारित किया गया है और** *ऐसे अधिनियम द्वारा अधिगृहीत क्षेत्र ही राज्य की शक्ति के क्षरण का मापदंड होगा और उस सीमा तक क्षरण होने के पश्चात् शेष* **क्षेत्र में राज्य विधानमंडल को घोषित उद्योग के संबंध में विधायन करने की शक्ति बनी रहेगी, बशर्ते कि वह अधिगृहीत क्षेत्र में अतिक्रमण न करे। उक्त सिद्धांत को वर्तमान वाद में लागू करने पर तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रावधानों का**

परीक्षण करने पर यह निष्कर्ष अपरिहार्य रूप से निकलता है कि जब तंबाकू बोर्ड अधिनियम में तंबाकू की खेती तथा कच्चे तंबाकू की बिक्री और क्रय के संबंध में पहले से ही प्रावधान किए जा चुके हैं, तब राज्य विधानमंडल की इन विषयों के संबंध में कोई विधि बनाने की शक्ति समाप्त हो जाती है। [578- डी- जी]

ईश्वरी खेतान शुगर मिल्स (प्रा.) लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, (1980) 4 एससीसी 136—पर अवलंबित।

5. जब संसद किसी घोषित उद्योग के संबंध में घोषणा करके उसका नियंत्रण अपने हाथ में ले लेती है, तब जिस सीमा तक केंद्रीय विधायन उस क्षेत्र को अधिगृहीत करता है, उसी सीमा तक राज्य विधानमंडल की शक्ति समाप्त हो जाती है। यदि संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अपनी विधायी क्षमता का प्रयोग करते हुए उद्योग का नियंत्रण अपने हाथ में लेने के पश्चात् संसद किसी विधि में कच्चे माल की आपूर्ति के संबंध में कोई प्रावधान नहीं करती, तो केवल इस कारण कि उद्योग का नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया गया है, राज्य की कच्चे माल की आपूर्ति के संबंध में विधायन करने की शक्ति समाप्त नहीं हो जाती। किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि संसद उद्योग के उत्पादन और निर्माण के अतिरिक्त अन्य पहलुओं के संबंध में कोई विधि नहीं बना सकती। [579- सी- ई]

6. जहाँ तक *बेलसंड शुगर कंपनी* के वाद का प्रश्न है, वहाँ विचारणीय प्रश्न यह था कि क्या बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम के प्रावधान गन्ने की बिक्री और क्रय के संबंध में बाजार शुल्क अधिरोपण हेतु लागू होंगे, जबकि बिहार गन्ना आपूर्ति एवं क्रय विनियमन अधिनियम, 1981 में विशेष प्रावधान किए गए हैं। बाजार समिति अधिनियम भी राज्य सूची की प्रविष्टि 26, 27 तथा 28 के अंतर्गत अधिनियमित राज्य विधायन था। गन्ना आपूर्ति एवं क्रय विनियमन अधिनियम समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत अधिनियमित विधायन था। न्यायालय ने यह अभिलक्षित किया कि चूँकि गन्ने की बिक्री एवं क्रय से संबंधित विशेष अधिनियम विद्यमान है, अतः सामान्य अधिनियम अर्थात् बाजार समिति अधिनियम लागू

नहीं होगा और इसलिए बाजार समिति द्वारा बाजार शुल्क अधिरोपण को अवैध ठहराया गया। दोनों अधिनियमों के विभिन्न प्रावधानों का परीक्षण करने पर न्यायालय ने यह भी अभिलक्षित किया कि दोनों अधिनियमों के बीच प्रत्यक्ष टकराव है और उस टकराव से बचने का एकमात्र उपाय यह है कि यह माना जाए कि बाजार अधिनियम एक सामान्य अधिनियम है जो सभी प्रकार की कृषि उपज पर लागू होता है, जबकि गन्ना अधिनियम एक विशेष अधिनियम है जो गन्ने जैसी कृषि उपज की बिक्री, क्रय और भंडारण के विनियमन के लिए स्वतंत्र एवं विशिष्ट व्यवस्था प्रदान करता है। अतः विशेष अधिनियम सामान्य अधिनियम पर प्रभावी होगा और आवश्यक परिणामस्वरूप उक्त वस्तु को सामान्य अधिनियम की परिधि से बाहर कर देगा। यह निर्णय इस सिद्धांत के लिए प्राधिकार नहीं है कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" अभिव्यक्ति को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए। [579- एफ- एच; 580- ए- बी]

बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (1999) 9 एससीसी 620 —संदर्भित।

7.1. यह तर्क कि *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य; बेलसंड शुगर तथा उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुल्लोच एंड कंपनी* के निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धांत वर्तमान वाद में भी लागू होने चाहिए, स्वीकार्य नहीं है। उन सभी मामलों में न्यायालय राज्य सूची की प्रविष्टि 23 के अंतर्गत राज्य विधानमंडल की शक्ति तथा संघ सूची की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत केंद्रीय विधानमंडल की शक्ति का परीक्षण कर रहा था। दोनों प्रविष्टियाँ "खनिजों के विनियमन और विकास" विषय से संबंधित हैं। राज्य सूची की प्रविष्टि 23 स्वयं संघ सूची के प्रावधानों के अधीन है जहाँ संघ के नियंत्रण में विनियमन और विकास का प्रश्न आता है। अतः जब संघ सूची की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत संसद विधायन करके खनिजों के विकास पर नियंत्रण अपने हाथ में ले लेती है, तब राज्य विधानमंडल की प्रविष्टि 23 के अंतर्गत उस विषय पर विधायन करने की शक्ति समाप्त हो जाती है। किंतु वर्तमान वाद में न्यायालय संघ

सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा बनाए गए तंबाकू बोर्ड अधिनियम तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 28 अथवा उससे संबंधित अन्य सहायक प्रविष्टियों, जैसे प्रविष्टि 14 या प्रविष्टि 27 के अंतर्गत राज्य विधानमंडल द्वारा बनाए गए बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम के बीच संबंध का परीक्षण कर रहा है। ऐसी स्थिति में न्यायालय के विचार का केंद्र यह होगा कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 की परिधि और सामग्री क्या है। एक बार यह निर्धारित हो जाए कि "उद्योग" अभिव्यक्ति को संकीर्ण अर्थ नहीं दिया जा सकता और संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम विधायी क्षमता के अंतर्गत वैध है, तब राज्य का विधायन, अर्थात् बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम, जहाँ तक वह तंबाकू वस्तु से संबंधित है, राज्य अधिनियम के अंतर्गत अधिसूचित सभी कृषि उपजों के सामान्य दायरे से बाहर हो जाएगा, क्योंकि उस विषय के संबंध में प्रावधान केंद्रीय विधायन में किए जा चुके हैं। संविधान के अनुच्छेद 246 के अनुप्रयोग से केंद्रीय अधिनियम प्रभावी होगा।[580 - ई-एच; 580-ए-सी]

7.2. यह नहीं कहा जा सकता कि यदि सूची-II में विधायन का विषय-शीर्षक सूची-I की संबंधित प्रविष्टि के अधीन नहीं है, तो उस विषय के संबंध में विधायन करने की राज्य विधानमंडल की शक्ति सर्वोपरि और सर्वोच्च है, और इसलिए बाजार समिति अधिनियम, जो सूची-II की प्रविष्टि 14 तथा 28 से संबंधित है और जो सूची-I की किसी भी प्रविष्टि के अधीन नहीं हैं, उसे प्रभावी माना जाना चाहिए। संसद द्वारा बनाए गए विधि अथवा राज्य विधानमंडल द्वारा बनाए गए विधि की वैधता का परीक्षण करने का यह दृष्टिकोण सही नहीं है। प्रविष्टियाँ केवल विधायन के विषय-शीर्षक हैं और विधि बनाने की शक्ति अनुच्छेद 246 से प्राप्त होती है। यदि संसद द्वारा बनाई गई कोई विधि सूची-I की किसी प्रविष्टि के संदर्भ में संसद की विधायी क्षमता के अंतर्गत आती है, तो राज्य विधानमंडल को सूची-II की किसी अन्य प्रविष्टि के आधार पर उसी विषय के संबंध में विधि बनाने की क्षमता नहीं होगी। [581- ई- जी]

बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, **(1999) 9 एससीसी 620 तथा** *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य,* **[1961] 2 एससीआर 537—से भिन्न किया गया।**

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2001 की दीवानी अपील सं. 6453।

पटना उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश दिनांक 16.08.1984, 1979 की सी.डब्ल्यू.जे.सी. सं. 3248 से।

(साथ में दीवानी अपील सं. 540, 541/1987, 3872/1990, 3024, 3023, 1535, 1194, 1394, 1536, 1980, 1981, 3715, 2464/1988, 6619/1997, 2088-89/1999, 671, 673-675/2002 तथा विनिर्दिष्ट आदेश याचिका (दीवानी) सं. 8614/1982।)

आर.एन. त्रिवेदी, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल; शांति भूषण; एस. गणेश; सुश्री शोभा दीक्षित; एल. नागेश्वर राव; जी.एल. सांघी; एस.के. गंभीर; ए.के. गांगुली; डॉ. ए.एम. सिंहवी; एस.बी. सान्याल; राकेश द्विवेदी; पी.पी. मल्होत्रा; वी.ए. बोबडे; नीलाव दत्ता; अधिवक्ता जनरल, असम; बीरन, अतिरिक्त ए.जी., केरल; पल्लव शिशोदिया; संजय आर. पाठक; बडी ए. रंगनाथन; प्रदीप मिश्रा; सुश्री इंदु मिश्रा; आर.पी. गुप्ता; सुश्री रश्मि जैन; शुशेंद्र चौहान; एस.के. अग्निहोत्री; अनिल के. पांडेय; साकेश कुमार; सुश्री विभा दत्ता मखीजा; रोहित के. सिंह; एच.के. पुरी; अवनीश सिन्हा; एस.के. पुरी; राजेश श्रीवास्तव; उज्ज्वल बनर्जी; सुश्री अनिंदिता गुप्ता; विकास सिंह; यूनुस मलिक; सुनील रॉय; ए. सुब्बा राव; एस.बी. उपाध्याय; जी. उमापति; कृष्णमूर्ति स्वामी; पी.के. बंसल; राजन नारायण; अशोक माथुर; सुश्री कृष्णा शर्मा; सुश्री आशा जी. नायर; वी.के. सिद्धार्थन; महाबीर सिंह; एस.पी. सिंह चौहान; साकेत सिंह; सुश्री निरंजना सिंह; बी.बी. सिंह; सुश्री इंदु शर्मा; सुश्री रचना श्रीवास्तव; मनोज प्रसाद; प्रमोद स्वरूप; प्रवीण स्वरूप; सुश्री परीना स्वरूप; एल.के. पांडेय; एस.वी. देशपांडे; सुश्री अनुराधा रस्तोगी; प्रमित सक्सेना; मनीष सिंहवी; रमेश सिंह; सुश्री बीना गुप्ता; सुश्री दिव्या रॉय; विवेक गंभीर; बी.जी. श्रीधरन; जी.सी. चंद्रशेखर; पी.पी. सिंह; संजय आर. हेगड़े; सत्य

मित्रा; प्रकाश श्रीवास्तव; ए. मरिआर्पुथम; सुश्री अरुणा माथुर; अनुराग डी. माथुर; टी. राजा; हेमंत शर्मा; एस.एन. तेरडोल; ख. नोबिन सिंह; सुश्री ए. सुभाषिणी; रमेश बाबू एम.आर.; अनिल श्रीवास्तव; टी.वी. रत्नम; के. सुब्बा राव तथा एस.के. द्विवेदी—उपस्थित पक्षकारों की ओर से।

न्यायालय के निर्णय जिनके द्वारा दिए गए—

न्यायालय द्वारा : सभरवाल, रूमा पाल तथा बृजेश कुमार, न्यायमूर्तिगण के बहुमत में व्यक्त निष्कर्षों के अनुसार यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि—

1. *आईटीसी* का वाद [1985] पूरक 1 एससीसी 476 सही रूप से निर्णयित नहीं किया गया था।
2. राज्य विधानमंडल बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपित करने तथा उसके संग्रह के लिए विधायन करने के लिए सक्षम हैं। परिणामस्वरूप राज्यों द्वारा अधिनियमित बाजार अधिनियम वैध हैं।
3. राज्य विधायन और तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 जहाँ तक वे बाजार क्षेत्रों में तंबाकू की बिक्री से संबंधित हैं, साथ-साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते और राज्य विधायन प्रभावी होंगे।

तदनुसार अपीलें तथा विनिर्दिष्ट आदेश याचिका का निस्तारण किया जाता है। व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं।

वाई. के. सभरवाल, न्यायमूर्ति— इन वादों में विचारणीय प्रश्न यह है कि बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम, 1960 तथा कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 की वैधता और लागूता क्या है, जहाँ तक ये राज्य विधायन बाजार क्षेत्रों में तंबाकू की बिक्री तथा उस पर बाजार शुल्क अधिरोपण से संबंधित हैं, विशेषतः संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 के पश्चात्। इसी प्रकार का प्रश्न उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश राज्यों द्वारा अधिनियमित समान विधानों के संबंध में भी उत्पन्न हुआ है। ये सभी प्रश्न

आईटीसी लिमिटेड एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य, [1985] पूरक एससीसी 476 में विचाराधीन थे।

हमें यह निर्धारित करना है कि क्या *आईटीसी* का वाद सही रूप से निर्णयित हुआ था या नहीं। वह निर्णय तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिया गया था। बहुमत ने आईटीसी के पक्ष में निर्णय दिया था। पश्चात् दो न्यायाधीशों की पीठ ने यह अस्थायी मत व्यक्त किया कि *आईटीसी* के वाद में दिए गए निर्णय पर पुनर्विचार आवश्यक है। इसी कारण ये वाद इस पीठ के समक्ष प्रस्तुत हुए हैं।

अपीलकर्ताओं की ओर से यह तर्क कि आईटीसी का निर्णय सही है, श्री शांति भूषण द्वारा प्रस्तुत किया गया, जिसका समर्थन भारत संघ तथा तंबाकू बोर्ड की ओर से उपस्थित अन्य अधिवक्ताओं ने किया। बिहार राज्य तथा अन्य पक्षकारों की ओर से यह तर्क कि आईटीसी का निर्णय सही नहीं है, श्री आर.के. द्विवेदी द्वारा प्रस्तुत किया गया, जिसका समर्थन अन्य राज्यों तथा बाजार समितियों की ओर से उपस्थित अधिवक्ताओं ने किया।

यह प्रश्न कि क्या आईटीसी का निर्णय सही है या नहीं, संविधान की सप्तम अनुसूची की संघ सूची की प्रविष्टि 52 के क्षेत्र और विशेषतः उसमें प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द के अर्थ पर निर्भर करता है, साथ ही राज्य सूची की प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त उसी अभिव्यक्ति के अर्थ पर भी।

आईटीसी के वाद में बहुमत ने यह अभिनिर्धारित किया था कि कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 के प्रावधान संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 से प्रतिकूल हैं और इसलिए उस अधिनियम की अनुसूची से तंबाकू को हटाया जाना चाहिए। अल्पमत में न्यायमूर्ति सब्यसाची मुखर्जी ने यह कहा कि राज्य विधायन और तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 साथ-साथ अस्तित्व में रह सकते हैं।

सबसे पहला प्रश्न यह निर्धारित किया जाना है कि क्या कृषि उपज विपणन अधिनियमों के ढाँचे के अंतर्गत बाजार क्षेत्रों में तंबाकू की बिक्री के संबंध में राज्य विधायन

और तंबाकू बोर्ड अधिनियम साथ-साथ अस्तित्व में रह सकते हैं। यदि हमारा उत्तर यह हो कि दोनों विधायन साथ-साथ चल सकते हैं, तो विधायी क्षमता के प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं होगा। किंतु यदि हमारा उत्तर यह हो कि राज्य विधायन और संसदीय विधायन का सामंजस्य संभव नहीं है और दोनों साथ-साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते, तब अगला प्रश्न राज्य विधायनों की वैधता का परीक्षण होगा।

प्रस्तावित निर्णय में माननीय न्यायमूर्ति पटनायक ने यह निष्कर्ष निकाला है कि कृषि उपज बाजार अधिनियम और तंबाकू बोर्ड अधिनियम परस्पर प्रत्यक्ष टकराव में हैं और उन्हें एक साथ लागू नहीं किया जा सकता।

राज्य विधायन और संसदीय विधायन साथ-साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते—यह दोनों विधानों के विभिन्न प्रावधानों से स्पष्ट है। उदाहरणार्थ, एक ओर बिहार अधिनियम की धारा 4(2) तथा अन्य राज्यों के विधानों में समान प्रावधानों का उल्लेख किया जा सकता है और दूसरी ओर उन राज्यों में तंबाकू बोर्ड अधिनियम की धारा 13, जहाँ यह लागू की गई है, तथा धारा 8(2)(सीसी) का भी उल्लेख किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त तंबाकू बोर्ड नियम, 1976 के नियम 32 का भी उल्लेख किया जा सकता है, जो धारा 32 के अधीन निर्मित है और वर्जीनिया तंबाकू की खरीद से संबंधित है, जिसकी तुलना बिहार अधिनियम की धारा 15 से की जा सकती है, जो यह अपेक्षा करती है कि कृषि उपज, जिसमें तंबाकू भी सम्मिलित है, को बाजार प्रांगण में लाया जाए और नीलामी अथवा निविदा द्वारा उच्चतम बोलीदाता को बेचा जाए। नियम 32 के अंतर्गत उत्पादकों से खरीदने की तंबाकू बोर्ड की शक्ति नीलामी अथवा निविदा द्वारा बिक्री के साथ सह-अस्तित्व में नहीं रह सकती। यहाँ तक कि मूल्य निर्धारण, भुगतान की विधि, अनुज्ञप्ति तथा नीलामी की प्रक्रिया के संबंध में दोनों विधानों और उनके अधीन बनाए गए नियमों से भी यह स्पष्ट है कि दोनों साथ-साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते। इस संबंध में तंबाकू बोर्ड (नीलामी) नियम, 1984 तथा तंबाकू बोर्ड (नीलामी) विनियम, 1984 का भी उल्लेख किया जा सकता है। स्पष्ट है कि एक के

प्रावधानों का पालन करने से दूसरे के प्रावधानों का उल्लंघन होगा। दोनों विधानों के प्रावधानों का उल्लेख मेरे माननीय सहकर्मी न्यायमूर्ति पटनायक ने अपने निर्णय में किया है। मैं उनके इस मत से पूर्ण सम्मान के साथ सहमत हूँ कि दोनों विधायन एक साथ संचालित नहीं हो सकते और सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते। अतः इस दृष्टि से राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता का प्रश्न परीक्षण के लिए उठता है।

आईटीसी के वाद में दो माननीय न्यायाधीशों ने राज्य विधायन को अवैध ठहराया था। राज्य विधानमंडल की यह शक्ति कि वह बाजार क्षेत्रों में तंबाकू की बिक्री तथा बाजार शुल्क अधिरोपण के संबंध में विधायन करे—अनुच्छेद 246(3) तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 14, 28 और 66 के आलोक में—विवादित नहीं है। विवाद इसलिए उत्पन्न हुआ क्योंकि आईटीसी के अनुसार संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 की धारा 2 में की गई घोषणा तथा उस अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के परिणामस्वरूप तंबाकू की बिक्री का क्षेत्र, जो तंबाकू उद्योग का अभिन्न अंग कहा जाता है, राज्य सूची की प्रविष्टि 24 से संघ सूची की प्रविष्टि 52 में स्थानांतरित हो गया है—प्रविष्टि 24 स्वयं संघ सूची की प्रविष्टि 7 और 52 के अधीन है। इस प्रकार यह तर्क दिया गया कि राज्य विधानमंडल बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री और बाजार शुल्क अधिरोपण के संबंध में विधायन करने की क्षमता से वंचित हो गया है। ऐसी स्थिति में तंबाकू की बिक्री के संबंध में राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता इस प्रश्न के उत्तर पर निर्भर करेगी कि क्या संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद कच्चे तंबाकू की बिक्री के संबंध में विधायन करने के लिए सक्षम है या नहीं। यदि इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है, तो राज्य विधायन को विधायी क्षमता के अभाव में अमान्य ठहराना होगा। किंतु इसका उत्तर 'उद्योग' शब्द की परिधि पर निर्भर करेगा, जो संघ सूची की प्रविष्टि 52 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त हुआ है। यदि यह पाया जाए कि 'उद्योग' शब्द इतना व्यापक है कि उसमें उद्योग के कच्चे माल को भी सम्मिलित किया जा सकता है और इस प्रकार संसद संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत

कच्चे माल के संबंध में भी विधायन करने के लिए सक्षम है, तो अनुच्छेद 246(1) के अनुसार संसदीय विधायन अर्थात् तंबाकू बोर्ड अधिनियम प्रभावी होगा और राज्य विधायन अमान्य हो जाएगा। इस वाद में विवाद संसदीय सर्वोच्चता के विषय में नहीं है, क्योंकि अनुच्छेद 246(1) के आलोक में किसी ने भी उस पर संदेह व्यक्त नहीं किया है। विवाद इस बात का है कि क्या संसद को कच्चे तंबाकू के संबंध में विधायन करने की विधायी क्षमता है या वह विषय राज्य के अधिकार क्षेत्र में आता है। यदि यह अभिनिर्धारित किया जाए कि उद्योग के क्षेत्र में, जैसा कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 में वर्णित है, विधायन करते समय संसद उद्योग के पूर्ववर्ती क्षेत्र अर्थात् कच्चे माल के संबंध में विधायन करने के लिए सक्षम नहीं है और वह केवल निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया के संबंध में ही विधायन कर सकती है, तो राज्य विधायन को संवैधानिक, *वैध* तथा लागू माना जाएगा।

प्रस्तावित निर्णय में न्यायमूर्ति पटनायक ने यह अभिनिर्धारित किया है कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द को संकीर्ण अर्थ नहीं दिया जा सकता, जिससे सूची-II की प्रविष्टि 27 या 14 के अंतर्गत आने वाले विषयों को बाहर रखा जाए, और इस प्रकार संसदीय विधायन अर्थात् तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 संवैधानिक रूप से वैध है। परिणामस्वरूप राज्य विधायन, जो बाजार समिति को बाजार क्षेत्र में कच्चे तंबाकू की बिक्री और क्रय पर शुल्क अधिरोपण का अधिकार देता है, तंबाकू उपज के संबंध में लागू नहीं होगा और *आईटीसी* के वाद का बहुमत निर्णय सही माना जाएगा। मैं इस विषय पर न्यायमूर्ति पटनायक द्वारा व्यक्त मत से आदरपूर्वक असहमति व्यक्त करता हूँ और इस कारण यह पृथक निर्णय लिख रहा हूँ।

संसद और राज्य विधानसभाएँ भारत के संविधान के प्रावधानों से विधायन करने की शक्ति प्राप्त करती हैं। यहाँ हम अनुच्छेद 246 से संबंधित हैं। अनुच्छेद 246(1) यह प्रावधान करता है कि उपबंध (2) और (3) में निहित किसी बात के होते हुए भी संसद को सप्तम

अनुसूची की सूची-I में वर्णित किसी भी विषय के संबंध में विधि बनाने की विशिष्ट शक्ति प्राप्त है।

उक्त सूची को संविधान में 'संघ सूची' कहा गया है।

संघ सूची की प्रविष्टि 52 है— "उद्योग, जिनका नियंत्रण संघ द्वारा संसद द्वारा विधि बनाकर लोकहित में आवश्यक घोषित किया गया हो।" इस प्रविष्टि के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र के संबंध में संसद ने तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 अधिनियमित किया है। तंबाकू बोर्ड अधिनियम की धारा 2 में यह घोषणा की गई है कि लोकहित में यह आवश्यक है कि संघ तंबाकू उद्योग का नियंत्रण अपने हाथ में ले।

अनुच्छेद 246(2) यह प्रावधान करता है कि उपबंध (3) में निहित किसी बात के होते हुए भी, संसद तथा उपबंध (1) के अधीन किसी राज्य का विधानमंडल भी सप्तम अनुसूची की सूची-III में वर्णित किसी भी विषय के संबंध में विधि बनाने की शक्ति रखेगा। उक्त सूची को संविधान में "समवर्ती सूची" कहा गया है।

अनुच्छेद 246(3) यह प्रावधान करता है कि उपबंध (1) और (2) के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधानमंडल उस राज्य या उसके किसी भाग के लिए सप्तम अनुसूची की सूची-II में वर्णित किसी भी विषय के संबंध में विधि बनाने की विशिष्ट शक्ति रखेगा। उक्त सूची को संविधान में "राज्य सूची" कहा गया है।

अनुच्छेद 246(3) के अंतर्गत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए विभिन्न राज्य विधानमंडलों ने कृषि उपज विपणन अधिनियम अधिनियमित किए हैं, जिनका उद्देश्य कृषि उपज की बिक्री और क्रय का विनियमन करना तथा उन अधिनियमों की रूपरेखा के अंतर्गत बाजार शुल्क अधिरोपित करना है। इन अधिनियमों के अंतर्गत अन्य बातों के साथ-साथ बाजार शुल्क के अधिरोपण और संग्रह का भी प्रावधान है। संबंधित अधिनियमों के अंतर्गत तंबाकू को कृषि उपज के रूप में अधिसूचित किया गया है।

आईटीसी के वाद में बहुमत द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि तंबाकू उद्योग को संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत तंबाकू बोर्ड अधिनियम बनाकर केंद्र सरकार द्वारा अपने नियंत्रण में ले लेने के कारण राज्य विधानमंडल की उस क्षेत्र में विधायन करने की कोई अधिकारिता शेष नहीं रहती। अतः कर्नाटक कृषि उपज विपणन अधिनियम के वे प्रावधान, जो बाजार समिति को बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री और क्रय पर बाजार शुल्क लगाने का अधिकार देते हैं, तंबाकू बोर्ड अधिनियम से टकराते हैं। परिणामस्वरूप राज्य अधिनियम को, जहाँ तक वह तंबाकू से संबंधित है, निरस्त कर दिया गया। अल्पमत यह था कि राज्य और केंद्रीय दोनों अधिनियम अपने-अपने क्षेत्रों में कार्य कर सकते हैं और यदि दोनों अधिनियमों को उनके वास्तविक स्वरूप और प्रकृति के आलोक में देखा जाए तो उनमें कोई प्रतिकूलता नहीं है।

आईटीसी के वाद में बहुमत निर्णय ने मुख्यतः इस न्यायालय की दो संविधान पीठों के निर्णयों— *उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुल्लोच एंड कंपनी,* [1964] 4 एससीआर 461 तथा *बैजनाथ काडियो बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,* [1969] 3 एससीसी 838—पर निर्भर करते हुए यह मत व्यक्त किया था कि यदि केंद्रीय अधिनियम और राज्य अधिनियम परस्पर टकराते हैं, तो अनिवार्य परिणाम यह होगा कि केंद्रीय अधिनियम प्रभावी होगा और राज्य अधिनियम को उसके आगे झुकना पड़ेगा। इसी आधार पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 के प्रावधान तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 से प्रतिकूल हैं और इसलिए तंबाकू को उस अधिनियम की अनुसूची से हटाया जाना चाहिए।

किन्तु अल्पमत यह था कि राज्य अधिनियम या उसके नियमों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह संकेत मिलता हो कि वह विपणन विनियमों के साथ असंगत है या उनके साथ संचालित नहीं हो सकता। दोनों अधिनियम अपने-अपने क्षेत्रों में कार्य कर सकते हैं और यदि

उन्हें उनके वास्तविक स्वरूप और प्रकृति के आलोक में देखा जाए तो उनमें कोई प्रतिकूलता नहीं है।

आईटीसी के वाद में चुनौती कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) (संशोधन) अधिनियम, 1980 की संवैधानिक वैधता के विरुद्ध थी। इस संशोधन अधिनियम द्वारा कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 के प्रयोजनों के लिए तंबाकू को कृषि उपज के रूप में सम्मिलित किया गया था। उच्च न्यायालय का मत था कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम तंबाकू के विपणन के पूरे क्षेत्र को आच्छादित नहीं करता, बल्कि केवल उसके एक भाग को ही नियंत्रित करता है, और इस प्रकार दोनों विधायन— तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 तथा कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम—सह-अस्तित्व में रह सकते हैं और साथ-साथ संचालित हो सकते हैं। उच्च न्यायालय ने यह भी अभिलक्षित किया कि उच्चतर विधानमंडल द्वारा तंबाकू के विपणन के संबंध में समग्र कानून बनाने के लिए पूरे क्षेत्र को आच्छादित करने की कोई स्पष्ट मंशा विधायन से प्रकट नहीं होती।

आईटीसी के वाद में इस न्यायालय के समक्ष यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि केंद्रीय अधिनियम के कारण राज्य विधानमंडल को राज्य अधिनियम के अंतर्गत तंबाकू को सम्मिलित करने की विधायी क्षमता नहीं थी, क्योंकि यह विषय संविधान की सप्तम अनुसूची की संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आच्छादित है। उस वाद में मूल प्रश्न यह था कि तंबाकू के विपणन के संबंध में क्या राज्य सरकार विधायन करने के लिए सक्षम थी या संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा के कारण राज्य विधानमंडल तंबाकू के संबंध में विधायन करने के लिए सक्षम नहीं था और इस प्रकार विवादित विधायन *अधिकारातीत* था।

अल्पमत में न्यायमूर्ति मुखर्जी ने यह अभिलक्षित किया कि कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 राज्य सूची की प्रविष्टि 28 को प्रविष्टि 66 के साथ पढ़कर बाजार विषय से संबंधित है और यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि प्रविष्टि 28 को

संसद द्वारा संघ सूची में स्थानांतरित किए जाने के अधीन नहीं बनाया गया है। राज्य अधिनियम समवर्ती सूची के किसी विषय से संबंधित नहीं है और न ही केंद्रीय अधिनियम समवर्ती सूची के किसी विषय से संबंधित है। अतः प्रतिकूलता का कोई प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। दोनों अधिनियमों की प्रकृति और स्वरूप का परीक्षण करने पर यह स्पष्ट है कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में संचालित हो सकते हैं। अल्पमत में यह भी कहा गया कि यद्यपि विधायन के क्षेत्र में केंद्र की सर्वोच्चता को उचित महत्व दिया जाना चाहिए, तथापि राज्यों के वैध विधायी क्षेत्र को अनावश्यक रूप से सीमित नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसा करना संविधान में शक्तियों के विभाजन की मूल भावना के प्रतिकूल होगा। यह केवल शक्तियों का आवंटन नहीं है, बल्कि संसदीय विधायन द्वारा अतिक्रमण से बचाव भी है। यद्यपि स्पष्ट रूप से निर्धारित क्षेत्रों में संसद की सर्वोच्चता है, किंतु जहाँ विधायन अपने वास्तविक स्वरूप और प्रकृति में राज्य क्षेत्र से संबंधित है, वहाँ राज्य विधानमंडल को उसकी विधायी शक्ति से वंचित करने में अत्यधिक सावधानी बरती जानी चाहिए, क्योंकि ऐसा करना भारत के राज्यों के संघ होने की मूल भावना के प्रतिकूल होगा। राज्यों को अपने विशिष्ट क्षेत्रों में संसाधन एकत्र करने और उनका उपयोग करने की शक्ति होनी चाहिए। विपणन अधिनियम मूलतः कृषि उपज के विपणन के विनियमन से संबंधित अधिनियम है। न्यायमूर्ति मुखर्जी ने कहा कि "अतः यह माना जाना चाहिए कि राज्य अधिनियम प्रभावी रहेगा। राज्य की विधायी शक्तियों के क्षेत्र को क्षीण करने से बचना चाहिए, क्योंकि इससे अंततः भारत के राज्यों के संघ होने की मूल अवधारणा का क्षरण होगा।"

बहुमत न्यायमूर्ति एस. मुरतज़ा फ़ज़ल अली द्वारा व्यक्त किया गया था, जिनसे न्यायमूर्ति ए. वरदराजन सहमत थे। बहुमत में यह प्रश्न विचाराधीन था कि क्या कर्नाटक राज्य को संघ सूची की प्रविष्टि 52 की सीमा में अतिक्रमण करने का अधिकार था। *टुल्लोच तथा बैजनाथ काडियो* के निर्णयों पर निर्भर करते हुए यह निष्कर्ष निकाला गया कि जब केंद्र ससम अनुसूची की सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत किसी उद्योग को अपने नियंत्रण में ले

लेता है और उस विषय के विनियमन के लिए अधिनियम बनाता है, तब राज्य विधानमंडल की उस क्षेत्र में विधायन करने की अधिकारिता समाप्त हो जाती है। यदि वह ऐसा करता है तो वह विधायन राज्य विधानमंडल के लिए *अधिकारातीत* होगा। यह भी कहा गया कि यदि अल्पमत को स्वीकार किया जाए तो केंद्रीय अधिनियम का समस्त सार और उद्देश्य समाप्त हो जाएगा, क्योंकि विधायन की शक्ति राज्य सरकार को सौंप दी जाएगी जबकि वह शक्ति अनुच्छेद 246 के अधीन संसद द्वारा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 के माध्यम से पहले ही अपने हाथ में ली जा चुकी है। बहुमत में *बैजनाथ काडियो* के वाद से निम्नलिखित उद्धरण पर निर्भर किया गया था—

> "संसद के लिए यह खुला है कि वह यह घोषित करे कि लोकहित में यह आवश्यक है कि नियंत्रण केंद्र सरकार के पास हो। ऐसी घोषणा किस सीमा तक की जाए, यह संसद निर्धारित करेगी और यह लोकहित के अनुरूप होना चाहिए। एक बार यह घोषणा कर दी जाती है और उसकी सीमा निर्धारित कर दी जाती है, तो उस सीमा तक का विधायन विषय संसद के लिए विशिष्ट विषय बन जाता है। ऐसी घोषणा के पश्चात् यदि राज्य उस क्षेत्र में विधायन करता है तो वह असंवैधानिक होगा, क्योंकि वह क्षेत्र राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता से बाहर हो जाता है।"

बहुमत में *चौधरी टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,* [1956] एससीआर 393 के संविधान पीठ के निर्णय तथा प्रविष्टि 52 की परिधि से संबंधित अन्य निर्णयों पर विचार नहीं किया गया। इसके स्थान पर *एम.ए. टुल्लोच तथा बैजनाथ काडियो* के निर्णयों पर निर्भर करते हुए यह कहा गया कि जब संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत लोकहित में घोषणा की जाती है और उसकी सीमा निर्धारित कर दी जाती है, तब उस सीमा तक का विधायन विषय संसद का विशिष्ट विषय बन जाता है। ऐसी घोषणा के पश्चात् यदि राज्य उस क्षेत्र में विधायन करता है तो वह आवश्यक रूप से असंवैधानिक होगा, क्योंकि वह क्षेत्र राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता से बाहर हो जाता है। इसी आधार पर यह कहा

गया कि कर्नाटक सरकार को तंबाकू पर बाजार शुल्क लगाने का कोई अधिकार नहीं था, क्योंकि उस सीमा तक राज्य अधिनियम 1975 के केंद्रीय अधिनियम से टकराता है।

बैजनाथ काडियो तथा *टुल्लोच* के निर्णयों पर श्री शांति भूषण द्वारा भी निर्भर किया गया है। अधिवक्ता द्वारा *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य,* [1961] 2 एससीआर 537 पर भी निर्भर किया गया। श्री शांति भूषण का तर्क था कि विधि और सिद्धांत की दृष्टि से संघ सूची की प्रविष्टि 52 से संबंधित मामलों और उसी सूची की प्रविष्टि 54 से संबंधित मामलों में कोई अंतर नहीं है। उनका तर्क था कि इन दोनों प्रविष्टियों की व्याख्या के उद्देश्य से इस न्यायालय ने उन्हें समान माना है, और इस संदर्भ में *ईश्वरी खेतान शुगर मिल्स (प्रा.) लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,* (1980) 4 एससीसी 136 पर निर्भर किया गया।

राज्य सरकारों तथा कृषि उपज विपणन समितियों की ओर से *टीका रामजी* के वाद पर विशेष निर्भरता व्यक्त की गई है। अब हम इन निर्णयों के सिद्धांत का परीक्षण करेंगे।

उपरोक्त निर्णयों पर विचार करने से पूर्व यह स्पष्ट करना उचित होगा कि इन वादों में न्यायालय ऐसे वाद का परीक्षण नहीं कर रहा है जहाँ विधायन का क्षेत्र समवर्ती सूची में हो और जहाँ अनुच्छेद 246(2) लागू होता हो। न्यायालय उस स्थिति पर भी विचार नहीं कर रहा है जहाँ एक या दूसरे विधानमंडल द्वारा किसी क्षेत्र में सहायक अथवा आकस्मिक अतिक्रमण हुआ हो। न्यायालय यहाँ विधायी क्षमता के प्रश्न से संबंधित है। हम ऐसे वाद का परीक्षण कर रहे हैं जहाँ राज्य सूची के किसी क्षेत्र में बनाए गए विधायन की वैधता पर प्रश्न उठाया गया है, जिस पर अनुच्छेद 246(3) लागू होता है। राज्य सूची के अंतर्गत आने वाले विधायन की वैधता और लागूता संसद द्वारा संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत बनाए गए विधायन— अर्थात् तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975—के कारण संदेह के घेरे में आ गई है। इसी अधिनियम में प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा के कारण यह संदेह उत्पन्न हुआ है कि क्या बाजार क्षेत्रों में तंबाकू की कृषि उपज की बिक्री तथा उस पर बाजार शुल्क लगाने के

संबंध में राज्य विधायन वैध और लागू है, जबकि ये विषय राज्य सूची की प्रविष्टि 14, 27, 28 और 66 के अंतर्गत आते हैं। राज्य सूची की प्रविष्टि 24 संघ सूची की प्रविष्टि 7 और 52 के अधीन है। वर्तमान वाद में हम प्रविष्टि 7 से संबंधित नहीं हैं। यहाँ प्रश्न यह है कि राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत विधायन के क्षेत्र के संघ सूची की प्रविष्टि 52 में स्थानांतरण का राज्य सूची की अन्य प्रविष्टियों— अर्थात् प्रविष्टि 14, 27, 28 और 66—पर क्या प्रभाव पड़ता है और वास्तव में कौन-सा क्षेत्र स्थानांतरित किया जा सकता है।

बैजनाथ काडियो का वाद ऐसा मामला था जिसमें राज्य विधायन की वैधता को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि संसद ने खनिज और खदान (विनियमन एवं विकास) अधिनियम, 1957 के माध्यम से संघ सूची की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत घोषणा कर दी थी। केंद्रीय अधिनियम की धारा 2 में यह घोषणा की गई थी कि लोकहित में यह आवश्यक है कि खदानों के विनियमन और खनिजों के विकास का नियंत्रण संघ अपने हाथ में ले।

संघ सूची की प्रविष्टि 54 खदानों के विनियमन और खनिजों के विकास दोनों से संबंधित है और राज्य सूची की प्रविष्टि 23 प्रविष्टि 54 के अधीन है। यह अभिनिर्धारित किया गया कि संसद के लिए यह घोषित करना खुला है कि लोकहित में नियंत्रण केंद्र सरकार के पास होना चाहिए। ऐसी घोषणा किस सीमा तक की जाएगी, यह संसद निर्धारित करेगी और वह लोकहित के अनुरूप होना चाहिए। एक बार यह घोषणा कर दी जाए और उसकी सीमा निर्धारित कर दी जाए, तो उस सीमा तक का विधायन विषय संसद के लिए विशिष्ट विषय बन जाता है। ऐसी घोषणा के पश्चात् यदि राज्य उस क्षेत्र में विधायन करता है तो वह असंवैधानिक होगा, क्योंकि वह क्षेत्र राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता से बाहर हो जाता है। इस मत के समर्थन में संविधान पीठ ने हिंगिर तथा टुल्लोच के पूर्ववर्ती निर्णयों का अनुसरण किया था। ये दोनों वाद भी संघ सूची की प्रविष्टि 54 और राज्य सूची की प्रविष्टि 23 की परिधि से संबंधित थे। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, आईटीसी के बहुमत

निर्णय ने बैजनाथ काडियो के निर्णय का अनुसरण किया और उसी उद्धरण को अपने निर्णय में सम्मिलित किया।

यह ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य है कि *हिंगिर* के वाद में *टीका रामजी* के वाद पर विचार नहीं किया गया था। इसका कारण संभवतः यह है कि एक प्रकार के मामलों में संघ सूची की प्रविष्टि 54 और राज्य सूची की प्रविष्टि 23 की परिधि पर विचार किया गया—जैसे *हिंगिर, टुल्लोच और बैजनाथ काडियो*—जबकि दूसरे प्रकार के मामलों में संघ सूची की प्रविष्टि 52 और राज्य सूची की प्रविष्टि 24 की परिधि पर विचार किया गया—जैसे *टीका रामजी* और उसके पश्चात् दिए गए निर्णय।

श्री शांति भूषण ने *ईश्वरी खेतान* के वाद पर निर्भर करते हुए यह तर्क दिया कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 को प्रविष्टि 54 के समान माना गया है। दोनों पक्षों ने ईश्वरी खेतान के वाद पर निर्भर किया है। अतः अब हम उस वाद का परीक्षण करेंगे।

ईश्वरी खेतान के वाद में यह तर्क प्रस्तुत किया गया था कि संसद ने संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत औद्योगिक (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 अधिनियमित किया है और उसमें शक्कर उद्योग को घोषित उद्योग के रूप में सम्मिलित किया है। अतः यह उद्योग राज्य सूची की प्रविष्टि 24 से बाहर हो गया और इसलिए राज्य विधानमंडल को शक्कर उद्योग के संबंध में विधायन करने की शक्ति नहीं रही। विवादित विधायन शक्कर उद्योग के अंतर्गत आने वाले उपक्रम के अधिग्रहण से संबंधित था। महान्यायवादी ने यह तर्क दिया कि संपत्ति के अधिग्रहण की शक्ति समवर्ती सूची की प्रविष्टि 42 से प्राप्त होती है। *ईश्वरी खेतान* के वाद में केवल संघ सूची की प्रविष्टि 52 और राज्य सूची की प्रविष्टि 24 की परिधि का निर्धारण किया गया था। इन प्रविष्टियों का राज्य सूची की प्रविष्टि 26 और 27 तथा समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के साथ संबंध उस वाद में विचाराधीन नहीं था। *ईश्वरी खेतान* के वाद के अनुच्छेद 7, 8 और 11 में संविधान पीठ ने बार-बार यह कहा कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा राज्य विधानमंडल की शक्ति को केवल राज्य सूची की

प्रविष्टि 24 तक ही सीमित करती है। यह अभिलक्षित किया गया कि शक्कर एक घोषित उद्योग है। प्रश्न यह था— "क्या यह कहना सही है कि एक बार प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा हो जाने पर वह उद्योग पूरी तरह से राज्य सूची की प्रविष्टि 24 से बाहर हो जाता है?" संविधान पीठ ने उत्तर दिया कि यह कहना सही नहीं है कि घोषणा होने के पश्चात् वह उद्योग पूर्णतः राज्य सूची की प्रविष्टि 24 से बाहर हो जाता है। उद्योग एक विधायी शीर्षक के रूप में स्वयं राज्य सूची की प्रविष्टि 24 में निहित है। संसद द्वारा प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा किए जाने की सीमा तक ही राज्य विधानमंडल को प्रविष्टि 24 के अंतर्गत विधायन करने से रोका जा सकता है। ऐसी घोषणा से संसद केवल उसी सीमा तक विधायन करने की शक्ति प्राप्त करती है, जितनी सीमा तक उस घोषणा को विधायी अधिनियम में अभिव्यक्त किया गया है, उससे अधिक नहीं। पीठ ने आगे कहा कि राज्य की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत विधायी शक्ति केवल उसी सीमा तक क्षीण होती है जिस सीमा तक संघ घोषणा के आधार पर नियंत्रण ग्रहण करता है। राज्य विधानमंडल, जो अन्यथा प्रविष्टि 24 के अंतर्गत उद्योग से संबंधित विधायन करने के लिए सक्षम है, वह सूची-II और सूची-III की अन्य प्रविष्टियों के अंतर्गत उपलब्ध शक्तियों का प्रयोग करके उसी उद्योग से संबंधित विषयों पर विधायन कर सकता है और राज्य को इस शक्ति से वंचित नहीं किया जा सकता। इस वाद में न्यायालय यह परीक्षण कर रहा था कि शक्कर उद्योग के उपक्रम के अधिग्रहण से संबंधित विधायन राज्य सूची की प्रविष्टि 24 से संबंधित है या समवर्ती सूची की प्रविष्टि 42 से। न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि संपत्ति का अधिग्रहण समवर्ती सूची की प्रविष्टि 42 से संबंधित है। *ईश्वरी खेतान* के वाद में 'उद्योग' शब्द की परिधि का परीक्षण नहीं किया गया था। उस निर्णय में 'उद्योग' अभिव्यक्ति की व्याख्या पर कोई चर्चा नहीं है और संभवतः इसी कारण *टीका रामजी* के वाद का उल्लेख नहीं किया गया। *ईश्वरी खेतान* के वाद में बैजनाथ काडियो के निर्णय पर निर्भरता केवल इस बात को दर्शाने के लिए थी कि राज्य की शक्ति का क्षरण केवल नियंत्रण की सीमा तक ही होता है। *बैजनाथ काडियो* का वाद राज्य सूची की प्रविष्टि 23 से संबंधित था, जबकि

ईश्वरी खेतान का वाद राज्य सूची की प्रविष्टि 24 से संबंधित था। अन्य प्रविष्टियों का विषय उस निर्णय में विचाराधीन नहीं था। संघ सूची की प्रविष्टि 54 की संरचना को प्रविष्टि 52 के समान नहीं माना गया, जैसा कि श्री शांति भूषण द्वारा तर्क दिया गया। उस निर्णय में खनिज और खदान संबंधी मामलों को प्रविष्टि 52 की परिधि के निर्धारण के लिए आधार नहीं बनाया गया। हमारे मत में खनिज और खदान संबंधी निर्णय संघ सूची की प्रविष्टि 52 की परिधि का परीक्षण करने में अधिक सहायक नहीं हैं।

आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम मैकडॉवेल एंड कंपनी एवं अन्य, (1996) 3 एससीसी 709 में भी यह अभिनिर्धारित किया गया कि किसी संवैधानिक प्रविष्टि की परिधि और विस्तार का निर्धारण किसी संसदीय अधिनियम के संदर्भ में नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा किया जाए तो परिणाम यह होगा कि संसद किसी अधिनियम को अधिनियमित या संशोधित करके संवैधानिक प्रावधान की परिधि और विस्तार को नियंत्रित करने लगेगी, जो विधि नहीं हो सकती। जिस विधायी शक्ति से हम यहाँ संबंधित हैं, वह अनुच्छेद 246 में निहित है। विभिन्न प्रविष्टियों में विधायन के क्षेत्र निर्धारित किए गए हैं। दोनों को पढ़कर यह निर्धारित करना होता है कि जब किसी विधायन की वैधता पर प्रश्न उठाया जाए तो संबंधित विधानमंडल को विधायन करने की क्षमता है या नहीं। किसी प्रविष्टि की परिधि और विस्तार का निर्धारण किसी संसदीय अधिनियम के संदर्भ में नहीं किया जा सकता।

टीका रामजी के वाद का कुछ विस्तार से परीक्षण आवश्यक है, क्योंकि इस पर गंभीर और विस्तृत तर्क प्रस्तुत किए गए हैं। उस वाद में उत्तर प्रदेश राज्य के अनेक गाँवों के गन्ना उत्पादकों द्वारा उत्तर प्रदेश गन्ना (आपूर्ति एवं क्रय का विनियमन) अधिनियम, 1953 तथा उसके अंतर्गत जारी अधिसूचनाओं की वैधता को चुनौती दी गई थी। उस वाद में केंद्र तथा उत्तर प्रदेश प्रांत द्वारा चीनी और गन्ने के संबंध में अधिनियमित विधानों का संक्षिप्त इतिहास भी प्रस्तुत किया गया।

यह अभिलक्षित किया गया कि 8 अप्रैल 1932 को केंद्रीय विधानमंडल ने गन्ना कारखाना (संरक्षण) अधिनियम, 1932 अधिनियमित किया। इस अधिनियम के परिणामस्वरूप चीनी कारखानों की संख्या में तीव्र वृद्धि हुई और गन्ने की खेती में भी व्यापक विस्तार हुआ। चीनी के निर्माण में प्रयुक्त किए जाने वाले गन्ने की खरीद की कीमत को विनियमित करने के उद्देश्य से केंद्रीय विधानमंडल ने 1 मई 1934 को गन्ना अधिनियम, 1934 अधिनियमित किया। किसी नियंत्रित क्षेत्र में किसी कारखाने द्वारा या उसके लिए प्रयुक्त होने वाले गन्ने की खरीद के लिए न्यूनतम मूल्य निर्धारण का अधिकार प्रांतीय सरकारों को दिया गया, जिन्हें इस अधिनियम के उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिए नियम बनाने का अधिकार भी प्रदान किया गया, जिसमें गन्ना उत्पादकों को सहकारी समितियों में संगठित करना भी सम्मिलित था ताकि वे गन्ने को कारखानों को बेच सकें।

भारत शासन अधिनियम, 1935 के प्रवर्तन के साथ ही स्वायत विधानमंडल और प्रांतीय विधानमंडलों के बीच विधायी शक्तियों का विभाजन किया गया। कृषि (प्रविष्टि 20), प्रांत के भीतर व्यापार और वाणिज्य (प्रविष्टि 27) तथा वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण तथा उद्योगों का विकास, बशर्ते कि कुछ उद्योगों के विकास के संबंध में स्वायत नियंत्रण से संबंधित सूची के प्रावधानों के अधीन (प्रविष्टि 29) — इन सभी को सूची-II अर्थात् प्रांतीय विधायी सूची में सम्मिलित किया गया। सूची-I की प्रविष्टि 34 थी— "उद्योगों का विकास जहाँ स्वायत नियंत्रण के अंतर्गत विकास को लोकहित में घोषित किया गया हो।"

विधायी शक्तियों के इस विभाजन के परिणामस्वरूप गन्ना अधिनियम, 1934 का पूरा विषय प्रांतीय विधायी सूची के अंतर्गत आ गया। बाद में यह अनुभव किया गया कि यह अधिनियम चीनी उद्योग की समस्याओं से निपटने के लिए पर्याप्त व्यापक नहीं था। अतः इसे प्रतिस्थापित करना आवश्यक समझा गया ताकि चीनी कारखानों को गन्ने की आपूर्ति का बेहतर संगठन किया जा सके। परिणामस्वरूप उत्तर प्रदेश विधानमंडल ने 10 फरवरी 1938 को उत्तर प्रदेश शुगर फैक्ट्रीज कंट्रोल अधिनियम, 1938 अधिनियमित किया, जिसका उद्देश्य

चीनी कारखानों के लाइसेंसिंग का प्रावधान करना तथा उन कारखानों में प्रयुक्त होने वाले गन्ने की आपूर्ति और क्रय तथा उसके मूल्य का विनियमन करना तथा अन्य सहायक विषयों का प्रावधान करना था। इसके साथ ही गन्ना अधिनियम, 1934 को निरस्त कर दिया गया। 1938 का अधिनियम प्रारंभ में 30 जून 1947 तक प्रभावी रहने वाला था, किंतु इसकी अवधि पहले 30 जून 1950 और फिर 30 जून 1952 तक बढ़ा दी गई।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 102 के अंतर्गत गवर्नर जनरल द्वारा आपातकाल की घोषणा की गई। इसके परिणामस्वरूप स्वायत विधानमंडल को प्रांतीय विधायी सूची में वर्णित किसी भी विषय के संबंध में प्रांतों के लिए विधि बनाने की शक्ति प्राप्त हो गई। यह आपातकाल तब तक प्रभावी रहने वाला था जब तक कि इसे किसी बाद की घोषणा द्वारा निरस्त न कर दिया जाए, और इस अवधि में बनाए गए कानून उस घोषणा के समाप्त होने के छह महीने बाद तक प्रभावी रहने वाले थे। इस अवधि में रक्षा भारत अधिनियम तथा उसके अंतर्गत बनाए गए नियम प्रभावी रहे। वर्ष 1942 में चीनी को नियंत्रित वस्तु घोषित किया गया और उसके उत्पादन, वितरण तथा मूल्य निर्धारण का विनियमन शुगर कंट्रोलर द्वारा किया जाने लगा। 1 अप्रैल 1946 को आपातकाल की घोषणा समाप्त कर दी गई और स्वायत विधानमंडल द्वारा प्रांतीय विधायी सूची के क्षेत्र में बनाए गए कानून 30 सितंबर 1946 के पश्चात् प्रभावहीन हो जाने वाले थे। 26 मार्च 1946 को ब्रिटिश संसद ने भारत (केंद्रीय सरकार और विधानमंडल) अधिनियम, 1946 अधिनियमित किया, जिसकी धारा 2(1)(क) में यह प्रावधान किया गया कि भारत शासन अधिनियम, 1935 में निहित किसी बात के होते हुए भी भारतीय विधानमंडल को धारा 4 में उल्लिखित अवधि के दौरान निम्नलिखित विषयों के संबंध में विधि बनाने की शक्ति होगी—

> "(क) व्यापार और वाणिज्य (चाहे वह किसी प्रांत के भीतर हो या नहीं) तथा कपास और ऊनी वस्त्र, कागज (समाचारपत्र सहित), खाद्य पदार्थ (जिसमें खाद्य तेल बीज और तेल सम्मिलित हैं), पेट्रोलियम और पेट्रोलियम उत्पाद, यांत्रिक वाहनों के स्पेयर

पाट्र्स, कोयला, लोहा, इस्पात और अभ्रक के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण से संबंधित विषय।"

उक्त धारा 2(1)(क) के अंतर्गत आरक्षित शक्ति का प्रयोग करते हुए केंद्रीय विधानमंडल ने 19 नवंबर 1946 को आवश्यक आपूर्ति (अस्थायी शक्तियाँ) अधिनियम, 1946 अधिनियमित किया, जिसका उद्देश्य सीमित अवधि के लिए कुछ वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति, वितरण तथा व्यापार और वाणिज्य के नियंत्रण की शक्तियों को जारी रखना था। गवर्नर जनरल ने 3 मार्च 1947 को अधिसूचना जारी करके इस अधिनियम को 31 मार्च 1948 तक प्रभावी बनाए रखा। 18 जुलाई 1947 को भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम पारित हुआ, जिसके अंतर्गत गवर्नर जनरल ने एक आदेश पारित करके भारत (केंद्रीय सरकार और विधानमंडल) अधिनियम, 1946 की धारा 4 के उपबंध में "दोनों सदनों की संसद" के स्थान पर "स्वायत विधानमंडल" शब्द प्रतिस्थापित किए और धारा 4क जोड़ी, जिसके अनुसार स्वायत विधानमंडल की शक्तियों का प्रयोग संविधान सभा द्वारा किया जाएगा। संविधान सभा द्वारा प्रस्ताव पारित किए जाने के पश्चात् इस अधिनियम की अवधि बढ़ाई गई और बाद में संविधान लागू होने पर संसद को अनुच्छेद 369 के अंतर्गत पाँच वर्षों की अवधि के लिए निम्नलिखित विषयों पर विधि बनाने की शक्ति प्रदान की गई, मानो वे समवर्ती सूची में वर्णित हों—

"(क) किसी राज्य के भीतर व्यापार और वाणिज्य तथा खाद्य पदार्थों (जिसमें खाद्य तेल बीज और तेल सम्मिलित हैं) के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण से संबंधित विषय। इस प्रकार संसद द्वारा पारित अधिनियमों के माध्यम से इस अधिनियम की अवधि समय-समय पर बढ़ाई जाती रही और अंततः 26 जनवरी 1955 तक प्रभावी रही।"

उक्त 1946 अधिनियम के अंतर्गत खाद्य फसलों में गन्ने की फसल भी सम्मिलित थी।

केंद्रीय सरकार ने 1946 के अधिनियम की धारा 3 के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए शुगर एंड गुड़ कंट्रोल ऑर्डर, 1950 जारी किया, जिसके अंतर्गत अन्य बातों के साथ

यह शक्ति प्रदान की गई कि किसी क्षेत्र से गन्ने के निर्यात को प्रतिबंधित या सीमित किया जा सके तथा यह निर्देश दिया जा सके कि गन्ने से गुड़ या चीनी का निर्माण केवल अनुज्ञप्ति की शर्तों के अनुसार ही किया जाए। इसके अतिरिक्त न्यूनतम मूल्य निर्धारण की शक्ति भी प्रदान की गई, जिसके अंतर्गत समय-समय पर अधिसूचनाएँ जारी करके चीनी उत्पादकों द्वारा खरीदे जाने वाले गन्ने के लिए न्यूनतम मूल्य निर्धारित किया जाता था।

31 अक्टूबर 1951 को संसद ने औद्योगिक (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 अधिनियमित किया, जिसका उद्देश्य कुछ उद्योगों के विकास और विनियमन का प्रावधान करना था। इस अधिनियम की धारा 2 के अंतर्गत यह घोषणा की गई कि प्रथम अनुसूची में निर्दिष्ट उद्योगों का नियंत्रण संघ द्वारा अपने हाथ में लेना लोकहित में आवश्यक है। उक्त अनुसूची में चीनी के निर्माण या उत्पादन से संबंधित उद्योग को भी सम्मिलित किया गया था।

उत्तर प्रदेश विधानमंडल ने आक्षेपित अधिनियम अधिनियमित किया। इस अधिनियम का उद्देश्य निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया गया था—

> "औद्योगिक (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 के 8 मई 1952 से प्रभावी होने के पश्चात् चीनी उद्योग का विनियमन पूर्णतः केंद्रीय विषय बन गया है। राज्य सरकारें अब केवल चीनी कारखानों को गन्ने की आपूर्ति के विषय से संबंधित हैं। अतः यह विधेयक इस उद्देश्य से प्रस्तुत किया जा रहा है कि चीनी कारखानों को गन्ने की युक्तिसंगत आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके, उसकी वैज्ञानिक पद्धति से संगठित खेती को प्रोत्साहित किया जा सके, गन्ना उत्पादकों और उद्योग के हितों की रक्षा की जा सके तथा नए अधिनियम को स्थायी रूप से विधि-पुस्तक में सम्मिलित किया जा सके।"

उक्त अधिनियम के अंतर्गत प्रदत्त नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग करते हुए उत्तर प्रदेश सरकार ने नियम बनाए तथा उत्तर प्रदेश गन्ना आपूर्ति एवं क्रय आदेश, 1954 जारी किया। ये सभी प्रावधान उत्तर प्रदेश में गन्ने की आपूर्ति और क्रय से संबंधित थे।

राज्य अधिनियम की वैधता को चुनौती देते हुए *टीका रामजी* के वाद में संविधान पीठ के समक्ष एक तर्क यह प्रस्तुत किया गया था—

> "(i) कि उत्तर प्रदेश राज्य को आक्षेपित अधिनियम अधिनियमित करने की कोई शक्ति नहीं थी, क्योंकि यह अधिनियम 'उद्योग' विषय से संबंधित है, जिसका नियंत्रण संघ द्वारा संसद द्वारा विधि बनाकर लोकहित में आवश्यक घोषित किया गया है, जैसा कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में वर्णित है। अतः यह विषय संसद के विशिष्ट क्षेत्राधिकार में आता है। इसलिए आक्षेपित अधिनियम राज्य विधानमंडल की शक्तियों से अधिकारातीत है और यह राज्य द्वारा विधायी शक्ति का छद्म प्रयोग है।"

यह भी तर्क दिया गया कि 'उद्योग' शब्द अत्यंत व्यापक है और इसमें केवल निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया ही नहीं, बल्कि उससे संबंधित आवश्यक तत्व भी सम्मिलित हैं, जैसे उद्योग के लिए आवश्यक कच्चा माल तथा उस उद्योग के उत्पाद। इस प्रकार यह शब्द कच्चे माल के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण को भी सम्मिलित करता है, जो चीनी उद्योग के संदर्भ में गन्ना है। इसलिए जहाँ तक विवादित अधिनियम गन्ने के संबंध में विधायन करता है, जो चीनी उत्पादन का आवश्यक घटक है, वहाँ तक यह राज्य द्वारा विधायी शक्ति का छद्म प्रयोग है, जो औपचारिक रूप से राज्य सूची II की प्रविष्टि 27 के अंतर्गत कार्य करता हुआ प्रतीत होता है, किंतु वास्तव में संघ सूची I की प्रविष्टि 52 के क्षेत्र में अतिक्रमण करता है।

यह सत्य है कि चुनौती राज्य विधायन की वैधता को दी गई थी, न कि संसदीय विधायन को; किंतु साथ ही चुनौती का संपूर्ण आधार यह था कि गन्ने के संबंध में विधायन करने की शक्ति केवल संसद को है, क्योंकि यह क्षेत्र सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आ जाता है, जिसमें चीनी उद्योग सम्मिलित है, और 'उद्योग' शब्द की परिधि इतनी व्यापक है

कि उसमें कच्चा माल, अर्थात् गन्ना भी सम्मिलित है। इस प्रकार संसद की विशिष्ट विधायी शक्ति का तर्क ही राज्य विधायन को अमान्य घोषित कराने का मुख्य आधार बनाया गया था, यह कहते हुए कि गन्ने के विषय में विधायन करने का क्षेत्र राज्य विधानमंडल के लिए उपलब्ध नहीं है।

उपरोक्त विवाद की पृष्ठभूमि में यह तथ्य कि *टीका रामजी* के वाद में संसदीय विधायन की वैधता प्रश्नगत नहीं थी, उस निर्णय के अनुपात को किसी प्रकार प्रभावित नहीं करता। उस वाद में भी निर्धारण हेतु मुख्य प्रश्न वर्तमान वाद के समान ही था, अर्थात् सूची-I की प्रविष्टि 52 और सूची-II की प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द की परिधि क्या है। वहाँ भी प्रश्न यह था कि 'उद्योग' शब्द का संकीर्ण या व्यापक अर्थ ग्रहण किया जाए। इसके अतिरिक्त यह तथ्य कि वह औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम के अंतर्गत विनिर्माण उद्योग का मामला था, उस निर्णय के अनुपात को प्रभावित नहीं करता। *टीका रामजी* के वाद में की गई व्याख्या को केवल औद्योगिक विकास एवं विनियमन अधिनियम के अंतर्गत आने वाले उद्योगों तक सीमित नहीं किया जा सकता। उस निर्णय में ऐसी कोई स्पष्ट या निहित संकेतना नहीं है और न ही ऐसा करने का कोई युक्तिसंगत कारण है।

टीका रामजी के वाद के समान ही इन वादों में भी राज्य विधायनों को इस आधार पर चुनौती दी गई है कि सूची-I की प्रविष्टि 52 के कारण तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 के अधिनियमन के पश्चात् राज्य विधानमंडल को तंबाकू की बिक्री के संबंध में विधायन करने की क्षमता नहीं रहती और इस कारण विद्यमान राज्य विधायन लागू नहीं रह सकते। परिणामतः सूची-II की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत विपणन से संबंधित विधायन भी कृषि उपज 'तंबाकू' के संबंध में लागू नहीं होंगे।

इसके विपरीत यह तर्क दिया गया कि राज्य सूची की प्रविष्टि 14 के अंतर्गत राज्य को कृषि उपज के संबंध में विधायन करने की शक्ति है और तंबाकू एक कृषि उपज है; इस उपज के लिए बाजार स्थापित करना प्रविष्टि 28 के अंतर्गत तथा उस पर शुल्क अधिरोपित करना

प्रविष्टि 66 के अंतर्गत आता है; और समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अधीन रहते हुए वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण (प्रविष्टि 27) भी राज्य का विषय है। यह भी कहा गया कि सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद की शक्ति केवल 'उद्योग' तक सीमित है और उसमें उद्योग का कच्चा माल सम्मिलित नहीं है; कृषि उपज के रूप में तंबाकू की बाजारों में बिक्री और उस पर बाजार शुल्क लगाना किसी भी प्रकार से औद्योगिक प्रक्रिया का भाग नहीं हो सकता, क्योंकि औद्योगिक प्रक्रिया केवल निर्माण और उत्पादन तक सीमित है। श्री द्विवेदी का तर्क था कि राज्य की संबंधित गतिविधि औद्योगिक गतिविधि नहीं है और इसलिए वह राज्य सूची की प्रविष्टि 24 तथा संघ सूची की प्रविष्टि 52 के क्षेत्र से बाहर है।

टीका रामजी के वाद में राज्य अधिनियम को चुनौती देने हेतु मुख्य तर्क यह था कि 'उद्योग' शब्द का अर्थ केवल निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया तक सीमित न होकर उससे पूर्व की गतिविधियाँ—जैसे कच्चे माल का अधिग्रहण—और उसके पश्चात् की गतिविधियाँ—जैसे तैयार उत्पाद का निस्तारण—भी सम्मिलित करता है। यह भी कहा गया कि कच्चे माल का अधिग्रहण औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है और इसलिए 'उद्योग' शब्द के अंतर्गत आता है। अतः जब केंद्रीय विधानमंडल को सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत चीनी उद्योग के संबंध में विधायन करने की शक्ति प्राप्त हुई, तो उसमें उस उद्योग के कच्चे माल, अर्थात् गन्ने, के संबंध में विधायन करने की शक्ति भी सम्मिलित है; और गन्ने का उत्पादन, आपूर्ति और वितरण चीनी के निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया का आवश्यक घटक होने के कारण केंद्रीय विधानमंडल के विधायी क्षेत्राधिकार में आता है।

टीका रामजी के वाद में याचिकाकर्ताओं ने 'उद्योग' शब्द की व्यापक व्याख्या के समर्थन में औद्योगिक विवाद अधिनियम के संदर्भ में इस शब्द की व्याख्या करने वाले विभिन्न निर्णयों का भी सहारा लिया। *टीका रामजी* के वाद में उन मामलों पर विचार करते हुए न्यायालय ने कहा—

"यहाँ हमारा सरोकार 'उद्योग' शब्द की व्यापक व्याख्या से नहीं है, बल्कि इस प्रश्न से है कि क्या किसी उद्योग के कच्चे माल, जो प्रक्रिया का अभिन्न अंग होते हैं, 'उद्योग' विषय के अंतर्गत आते हैं, जो सूची-I की प्रविष्टि 52 का विषय है, एक सहायक या गौण विषय के रूप में, जिसे युक्तिसंगत रूप से उस विषय में समाहित माना जा सकता है, और क्या केंद्रीय विधानमंडल, जब वह चीनी उद्योग के संबंध में विधायन कर रहा था, तो सूची-I की प्रविष्टि 52 के दायरे में रहते हुए गन्ने के संबंध में भी विधायन कर सकता था।"

इस न्यायालय ने कहा कि यदि गन्ने के संबंध में विधायन सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत केंद्रीय विधानमंडल के विशिष्ट क्षेत्राधिकार में आता है, तो प्रांतीय विधानमंडल द्वारा पारित अधिनियम अधिकारातीत होगा। यह कहा गया:

"यदि केंद्रीय विधानमंडल और प्रांतीय विधानमंडल दोनों ही गन्ने के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण के विषय में विधायन करने के अधिकारी हों, तो प्रांतीय विधानमंडल द्वारा आक्षेपित अधिनियम अधिनियमित करने की विधायी क्षमता का प्रश्न उत्पन्न ही नहीं होता। विवाद केवल इस व्याख्या के कारण उत्पन्न हुआ कि सूची-I की प्रविष्टि 52 और सूची-II की प्रविष्टि 27 को साथ-साथ रखकर यह कहा गया कि प्रविष्टि 52 में न केवल चीनी उद्योग के संबंध में विधायन सम्मिलित है, बल्कि गन्ने के संबंध में भी, क्योंकि वह चीनी के निर्माण या उत्पादन की औद्योगिक प्रक्रिया का आवश्यक घटक है और इस प्रकार उससे सहायक रूप से संबद्ध है। यदि गन्ने के संबंध में विधायन केंद्रीय विधानमंडल के विशिष्ट क्षेत्राधिकार में आता है, तो प्रांतीय विधानमंडल प्रविष्टि 27 के आधार पर उस विषय में विधायन करने के लिए सक्षम नहीं होगा।"

टीका रामजी के वाद में 'उद्योग' शब्द की व्यापक व्याख्या के तर्क पर विचार करते हुए न्यायालय ने कहा कि व्यापक अर्थ में 'उद्योग' शब्द में तीन भिन्न पहलू सम्मिलित हो

सकते हैं: (1) कच्चा माल, जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न भाग है, (2) निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया, और (3) उद्योग के उत्पादों का वितरण। इन तीनों पहलुओं का उल्लेख करने के पश्चात् न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि "कच्चा माल वस्तुएँ हैं, जो राज्य सूची की प्रविष्टि 27 में सम्मिलित होंगी।" निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया तथा उत्पादों के वितरण के संबंध में न्यायालय ने कहा—

> "निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया राज्य सूची की प्रविष्टि 24 में सम्मिलित होगी, सिवाय उस स्थिति के जब उद्योग नियंत्रित उद्योग हो, जिस दशा में वह सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आएगा; और उद्योग के उत्पादों का वितरण राज्य सूची-II की प्रविष्टि 27 में आएगा, सिवाय उस स्थिति के जब वे नियंत्रित उद्योगों के उत्पाद हों, जिस दशा में वे समवर्ती सूची-III की प्रविष्टि 33 में आएँगे।"

न्यायालय ने आगे यह भी कहा कि "किसी भी दशा में चीनी और गन्ने के संबंध में विधायन को सूची-I की प्रविष्टि 52 में सम्मिलित नहीं किया जा सकता।"

इस प्रकार न्यायालय ने यह तर्क अस्वीकार कर दिया कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द इतना व्यापक है कि उसमें औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग कहे जाने वाले कच्चे माल के संबंध में विधायन करने की शक्ति भी सम्मिलित हो जाती है। परिणामस्वरूप यह दलील भी अस्वीकार कर दी गई कि राज्य अधिनियम अधिकारातीत है, क्योंकि चीनी उद्योग का नियंत्रण संसद द्वारा लोकहित में अपने अधीन घोषित किया गया है।

कलकत्ता गैस कंपनी (मालिकाना) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य, [1962] पूरक 3 एससीआर 1 में ओरिएंटल गैस कंपनी अधिनियम, 1960 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी गई थी। चुनौती का एक आधार यह था कि औद्योगिक (विकास एवं विनियमन) अधिनियम के अंतर्गत सूची-I की प्रविष्टि 52 के अनुसार घोषणा किए जाने के कारण पश्चिम बंगाल विधानमंडल को गैस उद्योग को विनियमित करने का कानून बनाने की शक्ति नहीं थी, क्योंकि राज्य सूची की प्रविष्टि 24 संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अधीन है। यह

भी तर्क दिया गया कि राज्य सूची-II की प्रविष्टि 25 (गैस एवं गैस कार्य) को उसी सूची की प्रविष्टि 24 से भिन्न विषयों तक सीमित किया जाना चाहिए।

वाद के तथ्यों तथा संविधान पीठ के अन्य निष्कर्षों के कारण न्यायालय ने 'उद्योग' शब्द की सटीक परिभाषा देना आवश्यक नहीं समझा, किंतु *टीका रामजी* के वाद का अनुसरण करते हुए यह मान लिया कि 'उद्योग' शब्द का अर्थ केवल निर्माण या उत्पादन है। कलकत्ता गैस के वाद में, जिसमें सूची-I की प्रविष्टि 52 और सूची-II की प्रविष्टि 24 का विचार किया गया, पीठ ने कहा कि सामान्यतः 'उद्योग' राज्य विधायन के क्षेत्र में आता है और सभी प्रविष्टियों में इसे एक ही अर्थ दिया जाना चाहिए। न्यायालय ने *टीका रामजी* के वाद का अनुमोदन करते हुए कहा—

> "*चौ. टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* में 'उद्योग' शब्द को निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है और इसमें उद्योग में प्रयुक्त कच्चा माल अथवा उद्योग के उत्पादों का वितरण सम्मिलित नहीं है। यह तर्क प्रस्तुत किया गया था कि 'उद्योग' शब्द व्यापक अर्थ वाला है और इसमें न केवल निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया बल्कि उससे पूर्व की गतिविधियाँ जैसे कच्चे माल का अधिग्रहण तथा उसके पश्चात् की गतिविधियाँ जैसे तैयार उत्पादों का निस्तारण भी सम्मिलित हैं; किंतु इस तर्क को स्वीकार नहीं किया गया।"

श्री शांति भूषण ने तर्क दिया कि एक बार जब प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आवश्यक घोषणा करके संसद ने विधायन कर दिया और उस क्षेत्र को आच्छादित कर लिया, तब उस उद्योग के सभी पहलुओं—चाहे वह कच्चा माल हो या उत्पाद—पर राज्य विधानमंडल की विधायी शक्ति समाप्त हो जाती है। उनका तर्क था कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द में उद्योग के सभी पहलू सम्मिलित हैं—कच्चे माल की प्राप्ति से लेकर अंतिम उत्पाद के निस्तारण तक—और केवल निर्माण या उत्पादन तक सीमित नहीं है। उनका यह भी कहना था कि यदि 'उद्योग' शब्द को इस प्रकार व्यापक अर्थ न दिया जाए, तो लोकहित

में उद्योग पर नियंत्रण स्थापित करने का संसद का उद्देश्य निष्फल हो जाएगा। इसके विपरीत यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि यदि श्री शांति भूषण के दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिया जाए, तो राज्य सूची की अनेक प्रविष्टियों—जो किसी अन्य प्रविष्टि के अधीन नहीं हैं—पर राज्य विधानमंडल की विधायी शक्ति समाप्त हो जाएगी, और यह संविधान का पुनर्लेखन करने के समान होगा। मैं इस मत से सहमत हूँ। संविधान निर्माताओं का उद्देश्य राज्य सूची की प्रविष्टि 14, 27, 28 और 66 को संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अधीन बनाना नहीं था। यदि श्री शांति भूषण का दृष्टिकोण स्वीकार कर लिया जाए तो यही परिणाम होगा। अतः 'उद्योग' शब्द की व्याख्या उनके द्वारा सुझाए गए तरीके से नहीं की जा सकती।

यह सत्य है कि अनुच्छेद 246(1) और (2) के अनुसार संसदीय विधायन को सर्वोच्चता प्राप्त है; किंतु यह मुख्यतः उस स्थिति में प्रासंगिक होता है जब विधायन का क्षेत्र समवर्ती सूची में हो। संसदीय सर्वोच्चता को स्वीकार करते हुए भी संघीय व्यवस्था की उपेक्षा नहीं की जा सकती, जिसे इस न्यायालय ने *एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ*, (1994) 3 एससीसी 1 में संविधान की मूल संरचना का अंग माना है।

अतः भारत के संविधान की व्याख्या ऐसी होनी चाहिए जहाँ भाषा इसकी अनुमति देती हो कि राज्य विधानमंडलों की शक्तियाँ अनावश्यक रूप से संकुचित न हों और संघीय ढाँचा सुरक्षित रहे, साथ ही संविधान द्वारा परिकल्पित केंद्रीय सर्वोच्चता भी अक्षुण्ण बनी रहे।

इस पृष्ठभूमि में अब हम संक्षेप में उन संबंधित प्रविष्टियों के संवैधानिक इतिहास और संरचनात्मक परस्पर संबंध का उल्लेख करते हैं, जैसा कि वे भारत शासन अधिनियम, 1935 में थीं और जैसा कि वे वर्तमान में सप्तम अनुसूची में हैं। भारत शासन अधिनियम, 1935 की राज्य सूची की प्रविष्टि 27 और 29 इस प्रकार थीं—

> "मद 27. प्रांत के भीतर व्यापार और वाणिज्य; बाजार और मेले; साहूकारी और साहूकार।

मद 29. वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति और वितरण; उद्योगों का विकास, बशर्ते कि सूची-I में संघीय नियंत्रण के अंतर्गत कुछ उद्योगों के विकास से संबंधित प्रावधानों के अधीन।"

अब, सप्तम अनुसूची में प्रविष्टि 27 का एक भाग राज्य सूची की प्रविष्टि 26 में है; बाजार एवं मेले सूची-II की प्रविष्टि 28 हैं; साहूकारी एवं साहूकार (सूची-II की प्रविष्टि 30); वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण, समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अधीन (सूची-II की प्रविष्टि 27); उद्योग, सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन (सूची-II की प्रविष्टि 24)। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि 1935 के अधिनियम के अंतर्गत वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण तथा उद्योगों का विकास, दोनों ही प्रविष्टि 29 के माध्यम से सूची-I के प्रावधानों के अधीन थे। हमारे संविधान निर्माताओं ने, तथापि, प्रविष्टि 29 को दो भागों में विभाजित कर दिया। उद्योगों को सूची-II की प्रविष्टि 24 में रखा गया, जो सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन है। वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण को सूची-II की प्रविष्टि 27 में रखा गया और इसे सूची-III की प्रविष्टि 33 के अधीन किया गया। श्री शांति भूषण के तर्क को स्वीकार करने का अर्थ यह होगा कि ऐसे विभाजन से कोई उद्देश्य प्राप्त नहीं किया गया। स्पष्ट है कि दो प्रविष्टियों को पृथक किया गया है। एक को सूची-III की प्रविष्टि 33 के प्रावधानों के अधीन तथा दूसरी को सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के प्रावधानों के अधीन बनाया गया है। अतः 'उद्योग' अभिव्यक्ति की ऐसी व्याख्या करना जिसमें कच्चे माल का पहलू भी सम्मिलित हो जाए, उसी तर्क से वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के विषय को भी उसमें सम्मिलित करना होगा और वास्तव में यही श्री शांति भूषण का तर्क था। क्या उस तर्क को स्वीकार करना संविधान निर्माताओं की मंशा को निष्फल नहीं कर देगा। मेरा मत है कि ऐसा ही होगा। अतः यह तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता। यही तर्क राज्य सूची की प्रविष्टि 14, जो कृषि से संबंधित है और किसी सूची के अधीन नहीं है, पर भी समान रूप से लागू होगा। यदि श्री शांति भूषण की दलील स्वीकार की जाए तो वह भी अधीन हो जाएगी। आगे, पूर्व में

जब संसद ने कच्चे माल पर नियंत्रण आवश्यक समझा, तब उसने संविधान तृतीय संशोधन अधिनियम, 1954 द्वारा "कच्चा जूट एवं कच्चा कपास" को सूची-III की प्रविष्टि 33 में सम्मिलित किया। यहाँ तक कि अनुच्छेद 369 भी यह इंगित करता है कि कृषि कच्चा माल राज्य सूची में है, क्योंकि वह कच्चा कपास, कपास बीज एवं खाद्य तिलहन का उल्लेख करता है और उन्हें अस्थायी रूप से, एक विधिक कल्पना द्वारा, समवर्ती सूची में रखने का प्रयास करता है ताकि संसद विधायन कर सके। 'उद्योग' अभिव्यक्ति को सूची-II की प्रविष्टि 24 अथवा सूची-I की प्रविष्टि 52 में इस प्रकार व्याख्यायित नहीं किया जा सकता जिससे सप्तम अनुसूची की सूची-II की अन्य प्रविष्टियाँ संघ के नियंत्रण के अधीन हो जाएँ, जबकि वास्तव में वे नहीं हैं। जहाँ कहीं ऐसा अभिप्रेत था कि उन्हें इस प्रकार के नियंत्रण के अधीन किया जाए, चाहे सूची-I का हो अथवा सूची-III का, वहाँ ऐसा स्पष्ट रूप से कहा गया है। सूची-II का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि जब भी किसी विशेष प्रविष्टि को सूची-I या सूची-III की किसी प्रविष्टि के अधीन करना अभिप्रेत था, उसे विशेष रूप से उल्लेखित किया गया है। अतः ऐसी व्याख्या जिससे किसी प्रविष्टि को किसी अन्य प्रविष्टि के अधीन बना दिया जाए, जबकि उस प्रविष्टि में ऐसा नहीं कहा गया है, से बचना चाहिए, जब तक कि वही एकमात्र संभव व्याख्या न हो। हम नहीं समझते कि विचाराधीन प्रविष्टियों, अर्थात् संघ सूची की प्रविष्टि 52 एवं राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के संबंध में ऐसी व्याख्या की जानी चाहिए।

व्याख्या के सिद्धांत सुव्यवस्थित हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सप्तम अनुसूची की सूचियों की प्रविष्टियाँ विधायिका को विधायन करने की शक्ति प्रदान नहीं करतीं, जिसका स्रोत संविधान का अनुच्छेद 246 है। विधायी क्षमता के प्रश्न का निर्णय करते समय यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि संविधान की व्याख्या संकीर्ण या रूढ़िवादी दृष्टिकोण से नहीं की जानी चाहिए। इसे केवल एक विधि के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसी संरचना के रूप में देखा जाना चाहिए जिसके माध्यम से विधियाँ बनाई जाती हैं। व्याख्या व्यापक एवं उदार होनी चाहिए। प्रविष्टियाँ केवल संबंधित विधायिकाओं के विधायी क्षेत्र का सीमांकन करती हैं और स्वयं

विधायी शक्ति प्रदान नहीं करतीं, और यदि यह पाया जाए कि कुछ प्रविष्टियाँ परस्पर आच्छादित हैं या अन्य प्रविष्टियों से टकराव में हैं, तो न्यायालय का कर्तव्य है कि ऐसी प्रविष्टियों में सामंजस्य स्थापित करे और एक समन्वित व्याख्या प्रस्तुत करे। किन्तु जब सामंजस्य संभव न हो, जैसा कि यहाँ है, तब न्यायालय को संविधान में निहित विधायी शक्ति के संदर्भ में प्रविष्टियों का परीक्षण करना होगा।

यहाँ विवाद का विषय सप्तम अनुसूची की सूची-। की प्रविष्टि 52 की व्याख्या से संबंधित है। यह संसद से अपेक्षा करती है कि वह विधि द्वारा किसी उद्योग की पहचान करते हुए यह घोषणा करे कि उस उद्योग पर संघ का नियंत्रण लोकहित में अपेक्षित है। उक्त प्रविष्टि के अंतर्गत केवल 'उद्योग' को ही ऐसा उद्योग घोषित किया जा सकता है, जिसका नियंत्रण संघ द्वारा लोकहित में आवश्यक माना गया हो। अतः यह निहित है कि यदि कोई गतिविधि 'उद्योग' नहीं मानी जा सकती, तो प्रविष्टि 52 उस गतिविधि पर लागू नहीं होगी। प्रश्न सूची-। की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' की अवधारणा का है। जैसा कि पूर्व में कहा गया है, विधायी सूची की प्रविष्टियों की व्याख्या व्यापक अर्थ में की जानी चाहिए, किन्तु यह भी ध्यान में रखना होगा कि ऐसी व्याख्या अन्य प्रविष्टियों को पूर्णतः निरर्थक न बना दे। 'उद्योग' शब्द का विभिन्न शब्दकोशों में जो अर्थ दिया गया है, जिस पर श्री शांति भूषण ने निर्भरता रखी, वह इस शब्द के संवैधानिक अर्थ का निर्धारण करने में सहायक नहीं है। संसद के पास निर्माण गतिविधियों के अतिरिक्त अन्य गतिविधियों के संबंध में विधायन करने की शक्ति पर कोई प्रतिबंध या सीमा नहीं हो सकती, किन्तु वह शक्ति सूची-। की प्रविष्टि 52 में निहित नहीं है। वह अन्यत्र हो सकती है। इस संदर्भ में सूची-।।। की प्रविष्टि 33 का उल्लेख किया जा सकता है, जिसमें खाद्य पदार्थ तथा कुछ कच्चे माल सम्मिलित हैं। तंबाकू, तथापि, निर्विवाद रूप से खाद्य पदार्थ नहीं है।

श्री शांति भूषण द्वारा जिन अन्य अधिनियमों, जैसे कि इलायची अधिनियम, 1965; केन्द्रीय रेशम बोर्ड अधिनियम, 1958; कॉफी अधिनियम, 1942; रबर अधिनियम, 1947;

चाय अधिनियम, 1953; कोयर उद्योग अधिनियम, 1953 तथा नारियल विकास बोर्ड अधिनियम, 1979 का संदर्भ दिया गया है, उनकी वैधता का परीक्षण विवादित राज्य विधानों की विधायी क्षमता के निर्धारण के उद्देश्य से आवश्यक नहीं है। संसद की इन विधानों को बनाने की विधायी क्षमता इस न्यायालय के समक्ष विवादित नहीं है, अतः हम इन विधानों के संबंध में केवल शैक्षणिक दृष्टिकोण से विधायी क्षमता के प्रश्न की जांच करना आवश्यक नहीं समझते। तथापि, *प्रथम दृष्टया*, इस आशंका में कोई सार नहीं है कि 'उद्योग' की संकीर्ण अवधारणा अपनाने से ये अधिनियम संसद की विधायी क्षमता से परे हो जाएंगे और *अधिकारातीत* हो जाएंगे। जब और यदि इन अधिनियमों को चुनौती दी जाएगी, तब विधायी क्षमता का प्रश्न परीक्षण किया जाएगा। आगे यह भी उल्लेखनीय है कि उपरोक्त अधिनियमों में से दो, अर्थात् कॉफी अधिनियम, 1942 तथा रबर अधिनियम, 1947 संविधान-पूर्व अधिनियम हैं, जो भारत शासन अधिनियम, 1935 के अंतर्गत बनाए गए थे, जहाँ प्रविष्टियाँ भिन्न थीं। उस अधिनियम की सूची-II की प्रविष्टि 29 का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। कोयर उद्योग अधिनियम के संबंध में, उसमें निहित प्रावधानों के परीक्षण से यह तर्क संभव है कि वह निर्माण प्रक्रिया से संबंधित है और नारियल के वृक्षों के रोपण एवं संरक्षण या नारियल के उत्पादन को नियंत्रित नहीं करता। केन्द्रीय रेशम बोर्ड अधिनियम का इस न्यायालय द्वारा *बी. विश्वनाथैया एंड कंपनी एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य*, [1991] 3 एससीसी 358 में विचार किया गया है और मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि कृषि उपज विपणन अधिनियमों की वैधता को बनाए रखने से इस अधिनियम की वैधता पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इलायची अधिनियम के संबंध में प्रतीत होता है कि वह निर्यात के उद्देश्य से लागू किया जा रहा है और वह बीज की तैयारी से संबंधित नहीं है। नारियल विकास अधिनियम के संबंध में, वह वर्तमान वाद की भाँति नीलामी मंच स्थापित करने तथा विपणन को नियंत्रित करने की परिकल्पना नहीं करता। वह अधिनियम मुख्यतः विपणन सुधार हेतु सिफारिश करने, आधुनिक प्रौद्योगिकी अपनाने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने तथा

उत्पादकों को प्रोत्साहन मूल्य दिलाने से संबंधित क्षेत्र से संबंधित है। तथापि, इस न्यायालय को इन अधिनियमों के संबंध में विधायी क्षमता के प्रश्न का विस्तृत परीक्षण करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि जैसा कि पूर्व में कहा गया है, वह यहाँ विवाद का विषय नहीं है और उपरोक्त प्रकार से केवल प्रथम दृष्टया दृष्टिकोण व्यक्त करना पर्याप्त होगा जिससे श्री शांति भूषण द्वारा व्यक्त आशंका का निराकरण हो सके।

हरकचंद रतनचंद बनथिया एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, [1970] 1 एससीआर 479 पर श्री शांति भूषण ने 'उद्योग' अभिव्यक्ति की व्यापक व्याख्या के समर्थन में प्रबल निर्भरता रखी है। वहाँ मुख्य प्रश्न संसद की विधायी क्षमता का था कि क्या वह स्वर्ण (नियंत्रण) अधिनियम, 1968 बना सकती है। उक्त अधिनियम में 'स्वर्ण' को परिभाषित किया गया है, जिसमें उसका मिश्र धातु (चाहे शुद्ध, पिघला हुआ या पुनः पिघलाया गया, ढला या अढला) किसी भी रूप में, जिसकी शुद्धता नौ कैरेट से कम न हो, सम्मिलित है तथा इसमें प्राथमिक स्वर्ण, आभूषण एवं अलंकार भी सम्मिलित हैं [धारा 2 (ज)]। धारा 2 की उपधारा (आर) में 'प्राथमिक स्वर्ण' को ऐसे स्वर्ण के रूप में परिभाषित किया गया है जो अधूरा या अर्ध-निर्मित हो तथा इसमें इन्गट, बार, ब्लॉक, स्लैब, बिलेट, शॉट, पेलेट, रॉड, शीट, फॉयल तथा तार सम्मिलित हैं। स्वर्ण (नियंत्रण) अधिनियम की संवैधानिक वैधता को चुनौती देते हुए यह तर्क दिया गया कि सुनारों का कार्य कौशल पर आधारित हस्तकला है तथा स्वर्ण आभूषण बनाना ससम अनुसूची की सूची-। की प्रविष्टि 52 के अर्थ में 'उद्योग' नहीं है। संविधान पीठ ने यह स्थापित सिद्धांत प्रतिपादित किया कि सभी प्रविष्टियों को व्यापक अर्थ दिया जाना चाहिए तथा यदि विभिन्न सूचियों में या एक ही सूची में कुछ प्रविष्टियाँ परस्पर आच्छादित या टकराव की स्थिति में प्रतीत हों, तो न्यायालय का कर्तव्य है कि उनमें सामंजस्य स्थापित करे। वर्तमान वाद में, तथापि, न तो किसी प्रकार का आच्छादन है और न ही ऐसा टकराव, क्योंकि स्वयं श्री शांति भूषण का यह निवेदन है कि यहाँ विचाराधीन सीमा तक दोनों विधायन सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते।

श्री शांति भूषण ने बनथिया के वाद से निम्नलिखित अंश पर निर्भरता रखी है:

"किन्तु हम वर्तमान वाद में संतुष्ट हैं कि भारत में सुनारों द्वारा स्वर्ण आभूषणों का निर्माण 'व्यापार या निर्माण के लिए एक व्यवस्थित उत्पादन प्रक्रिया' है और इस प्रकार यह उपयुक्त विधायी प्रविष्टियों में 'उद्योग' शब्द के अंतर्गत आता है। अतः विवादित अधिनियम को बनाते समय संसद ने सूची-I की प्रविष्टि 52 तथा सूची-III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आने वाले विषयों पर अपनी विधायी शक्ति का वैध रूप से प्रयोग किया है।"

विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि *हरकचंद रतनचंद बनथिया* के वाद में यह माना गया है कि व्यापार या निर्माण हेतु व्यवस्थित उत्पादन की प्रक्रिया 'उद्योग' शब्द के अंतर्गत आती है तथा यह तर्क कि 'उद्योग' शब्द की व्यापक व्याख्या करने से सूची-II की प्रविष्टि 27 निरर्थक हो जाएगी, अस्वीकार कर दिया गया था। उनका निवेदन है कि वर्तमान वाद में भी वही दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए। उक्त दृष्टिकोण इस आधार पर अपनाया गया था कि संबंधित गतिविधि निर्माण या उत्पादन थी और इस प्रकार 'उद्योग' की परिधि में आती थी। *बनथिया* के वाद में संविधान पीठ ने वास्तव में *टीका रामजी* के वाद को अनुमोदन सहित उद्धृत किया और इस प्रकार संदर्भित किया:

"*टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* में 'उद्योग' अभिव्यक्ति को निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया था और इसमें उद्योग में प्रयुक्त कच्चा माल या उद्योग के उत्पादों के वितरण को सम्मिलित नहीं किया गया था।"

बनथिया के वाद में न्यायालय उस अधिनियम की वैधता पर विचार कर रहा था जिसका उद्देश्य स्वर्ण, स्वर्ण आभूषणों एवं लेखों के उत्पादन, निर्माण, आपूर्ति, वितरण, उपयोग एवं स्वामित्व तथा उनसे संबंधित व्यापार को नियंत्रित करना था तथा उससे संबंधित या सहायक विषयों को विनियमित करना था। स्वर्ण (नियंत्रण) अधिनियम, 1968 में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो यह विनियमित करता हो कि प्राथमिक स्वर्ण पृथ्वी से किस प्रकार

निकाला जाएगा। अधिनियम प्राथमिक स्वर्ण के उत्खनन से संबंधित नहीं है। वहाँ प्रश्न यह था कि क्या सुनारों का कार्य कौशल पर आधारित हस्तकला है और क्या स्वर्ण आभूषण बनाने की कला सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत 'उद्योग' नहीं है। उस वाद में यह प्रश्न नहीं था कि उद्योग के कच्चे माल से संबंधित विषय 'उद्योग' की अवधारणा में आएगा या नहीं। आगे, न्यायालय ने यह भी कहा कि 'उद्योग' अभिव्यक्ति को सटीक रूप से परिभाषित करना या उसके सभी पहलुओं का पूर्ण विवरण देना आवश्यक नहीं है। तथ्यों के आधार पर संविधान पीठ ने यह निष्कर्ष निकाला कि सुनारों द्वारा स्वर्ण आभूषणों का व्यवस्थित उत्पादन व्यापार या निर्माण हेतु 'उद्योग' की परिधि में आता है। *टीका रामजी* के वाद से विचलन नहीं किया गया, बल्कि उसका संदर्भ दिया गया। औद्योगिक विवाद अधिनियम में 'उद्योग' शब्द की परिभाषा को अपनाने का प्रयास अस्वीकार कर दिया गया। यह निष्कर्ष स्वीकार किया गया कि स्वर्ण आभूषणों का निर्माण सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत 'उद्योग' है। यह निर्णय इस प्रश्न के निर्धारण में सहायक नहीं है कि तंबाकू की बिक्री की प्रक्रिया तंबाकू उद्योग का भाग मानी जा सकती है या नहीं, ताकि वह सूची-। की प्रविष्टि 52 एवं सूची-।। की प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द के अंतर्गत आ सके। *बनथिया* के वाद में यह अवलोकन कि सूची-।। की प्रविष्टि 27 एक सामान्य प्रविष्टि है, उस संदर्भ में किया गया था जहाँ सुनारों द्वारा स्वर्ण आभूषणों का निर्माण 'उद्योग' की परिधि में आता है, जैसा कि सूची-।। की प्रविष्टि 24 एवं सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त है। *बनथिया* का निर्णय सूची-। की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द के दायरे पर कोई मत व्यक्त नहीं करता और *टीका रामजी* का वाद अभी भी प्रभावी है, जिसमें यह कहा गया है कि 'उद्योग' का अर्थ निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया है और इसमें उद्योग में प्रयुक्त कच्चा माल या उत्पादों के वितरण को सम्मिलित नहीं किया जाता।

श्री शांति भूषण ने संविधान पीठ के एक अन्य निर्णय, *चतुरभाई एम. पटेल बनाम भारत संघ एवं अन्य*, [1960] 2 एससीआर 362 पर भी निर्भरता रखी है, विशेष रूप से

उसमें *सर मॉरिस ग्वायर, मुख्य न्यायाधीश द्वारा सुब्रमण्यन चेट्टियार बनाम मुथुस्वामी गौंडन*, (1940) एफसीआर 188 में किए गए अवलोकनों पर, जिन्हें *पटेल* के वाद में उद्धृत किया गया है। उक्त अवलोकन इस प्रकार हैं:

> "यह अनिवार्यतः समय-समय पर होगा कि कोई विधायन, यद्यपि किसी एक सूची के विषय से संबंधित प्रतीत होता है, दूसरी सूची के किसी विषय को भी स्पर्श करता है, और अधिनियम के विभिन्न प्रावधान इस प्रकार निकट रूप से परस्पर जुड़े हो सकते हैं कि शब्दों की कठोर व्याख्या का अंधानुकरण अनेक विधियों को अवैध घोषित करने की स्थिति उत्पन्न कर दे, क्योंकि जिस विधायिका ने उन्हें बनाया है, वह निषिद्ध क्षेत्र में विधायन करती हुई प्रतीत हो सकती है।"

राजस्थान राज्य बनाम जी. चावला एवं एक अन्य, एआईआर 1959 एससी 544 में न्यायमूर्ति हिदायतुल्लाह द्वारा व्यक्त अवलोकनों, जिन्हें चतुरभाई एम. पटेल के वाद में अनुमोदन सहित उद्धृत किया गया, पर भी निर्भरता रखी गई। वे अवलोकन इस प्रकार हैं:

> "यह भी समान रूप से स्थापित है कि किसी विधायी विषय पर विधायन करने की शक्ति में उस सहायक विषय पर विधायन करने की शक्ति भी निहित होती है, जिसे युक्तिसंगत रूप से प्रदत्त शक्ति में सम्मिलित माना जा सकता है।"

उपरोक्त अवलोकनों को स्वीकार करने में हमें कोई कठिनाई नहीं है, जिन्हें सर मॉरिस ग्वायर, मुख्य न्यायाधीश तथा न्यायमूर्ति हिदायतुल्लाह (तत्कालीन) ने व्यक्त किया है, किन्तु यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि *चतुरभाई एम. पटेल* के वाद में विचारणीय प्रश्न विवादित अधिनियम की वास्तविक प्रकृति एवं स्वरूप अथवा उसके मूल तत्व का था, अर्थात् केन्द्रीय उत्पाद शुल्क एवं नमक अधिनियम, 1944 की धाराएँ 6, 8, 9 एवं 10 तथा केन्द्रीय उत्पाद शुल्क नियमों के नियम 140 से 148, 150, 171 से 181, 215 एवं 226, जिनकी संवैधानिक वैधता को चुनौती दी गई थी। संविधान पीठ तंबाकू पर उत्पाद शुल्क अधिरोपण एवं वसूली हेतु राजकोषीय उपाय की संवैधानिक वैधता पर विचार कर रही थी। यह तर्क दिया गया कि

विवादित अधिनियम की धाराएँ 6 एवं 8 तथा उनके अधीन बनाए गए नियम, भारत शासन अधिनियम, 1935 के अंतर्गत केन्द्रीय विधानमंडल की विधायी क्षमता से परे हैं। न्यायालय यह परीक्षण कर रहा था कि क्या विवादित अधिनियम 1935 के अधिनियम की सूची-। की प्रविष्टि 45 में वर्णित विषय से संबंधित विधि है या सूची-॥ की प्रविष्टि 27 एवं 29 में वर्णित विषयों से संबंधित है। प्रविष्टि 27 एवं 29 का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। ये राज्य की उस शक्ति से संबंधित थीं, जिसके अंतर्गत वह व्यापार एवं वाणिज्य, बाजार एवं मेले, साहूकारी एवं साहूकारों के संबंध में विधायन कर सकती है। प्रविष्टि 29 वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण तथा उद्योगों के विकास के संबंध में विधायन की शक्ति से संबंधित थी, जो संघ नियंत्रण के अधीन कुछ उद्योगों के विकास से संबंधित सूची-। के प्रावधानों के अधीन थी। प्रश्न यह था कि क्या विवादित अधिनियम अपने वास्तविक स्वरूप एवं सार में तंबाकू पर उत्पाद शुल्क से संबंधित है, जैसा कि प्रविष्टि 45 में निहित है, अथवा वह प्रांतीय सूची की प्रविष्टि 27 एवं 29 के क्षेत्र में आता है। संघीय न्यायालय के निर्णय का संदर्भ लेते हुए यह कहा गया कि इन प्रविष्टियों के क्षेत्र की व्याख्या करते समय प्रयुक्त शब्दों को यथासंभव व्यापक अर्थ दिया जाना चाहिए तथा प्रत्येक सामान्य शब्द को उन सहायक या गौण विषयों तक विस्तारित माना जाना चाहिए जिन्हें युक्तिसंगत रूप से उसमें समाहित कहा जा सके। केन्द्रीय उत्पाद शुल्क अधिनियम के प्रावधानों का परीक्षण करने पर न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अधिनियम एवं नियमों के विभिन्न प्रावधान मूलतः उत्पाद शुल्क के अधिरोपण एवं वसूली से संबंधित हैं और अपने वास्तविक स्वरूप एवं सार में यह अधिनियम सूची-। की प्रविष्टि 45 के अंतर्गत ही आता है, तथा प्रविष्टि 27 या 29 के प्रांतीय क्षेत्र में उसका आकस्मिक अतिक्रमण उसकी संवैधानिक वैधता को प्रभावित नहीं करता, क्योंकि प्रांतीय क्षेत्र में अतिक्रमण की सीमा वास्तविक स्वरूप निर्धारित करने हेतु एक परिस्थिति हो सकती है, किन्तु एक बार वह प्रश्न निर्धारित हो जाने पर अधिनियम को संघ क्षेत्र में ही माना जाएगा, न कि प्रांतीय क्षेत्र में। अतः यह स्पष्ट है कि चूँकि अपने वास्तविक स्वरूप में

विषय उत्पाद शुल्क से संबंधित था, इसलिए वह सूची-I की प्रविष्टि 45 के अंतर्गत आता है और प्रविष्टि 27 या 29 की गैर-कर प्रविष्टियों को लागू नहीं किया जा सकता। संविधान में भी प्रविष्टि 84 तंबाकू एवं अन्य वस्तुओं पर उत्पाद शुल्क से संबंधित है, जो भारत में निर्मित या उत्पादित होती हैं।

याचिकाकर्ता द्वारा नियम 181 के आधार पर दिए गए तर्क का उल्लेख करते हुए, जो अनुज्ञप्ति के निरस्तीकरण एवं निलंबन से संबंधित था और लाइसेंसिंग प्राधिकरण को कुछ परिस्थितियों में अनुज्ञप्ति निरस्त या निलंबित करने का अधिकार देता था, तथा यह तर्क दिया गया कि यह क्षेत्र प्रांतीय विधानमंडल के अधिकार क्षेत्र में आता है, न्यायालय ने कहा कि यह नियम किसी बंधित गोदाम के स्वामी को ऐसा गोदाम रखने के विशेषाधिकार से अप्रत्यक्ष रूप से वंचित कर सकता है, किन्तु इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि अधिनियम का उद्देश्य उत्पाद शुल्क का अधिरोपण, संग्रह या वसूली नहीं है। इस नियम को "उत्पाद शुल्क की प्रभावी वसूली सुनिश्चित करने का साधन तथा शुल्क की वसूली हेतु प्रभावी विधायन का आवश्यक सहायक" माना गया। वर्तमान वाद में किसी आकस्मिक अतिक्रमण का प्रश्न ही नहीं उठता। यह नहीं कहा जा सकता कि बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री से संबंधित विधि, तंबाकू बोर्ड अधिनियम द्वारा अधिनियमित तंबाकू संबंधी विधि की सहायक है। चतुरभाई एम. पटेल का निर्णय, हमारे मत में, वर्तमान उद्देश्य के लिए प्रासंगिक नहीं है, और इसी प्रकार *भारतीय स्टेट बैंक बनाम यासंगी वेंकटेश्वर राव,* [1999] 2 एससीसी 375 का निर्णय भी प्रासंगिक नहीं है। यहाँ प्रत्यक्ष रूप से जो प्रश्न विचाराधीन है, वह संघ सूची की प्रविष्टि 52 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत 'उद्योग' शब्द की व्याख्या से संबंधित है।

गंगा शुगर निगम लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, [1980] 1 एससीसी 223 में उत्तर प्रदेश गन्ना क्रय अधिनियम की संवैधानिक वैधता को इस आधार पर चुनौती दी गई कि यह सूची-I की प्रविष्टि 52 का अतिक्रमण करता है, जो चीनी उद्योग से संबंधित है

और जो उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 के अंतर्गत एक नियंत्रित उद्योग है। वहाँ उठाया गया प्रश्न यह था: "क्या यह विधायन *अधिकारातीत* है क्योंकि राज्य ने नियंत्रित उद्योग के क्षेत्र में प्रवेश कर निषिद्ध क्षेत्र में विधायन किया है?" यह निर्विवाद था कि चीनी उद्योग सप्तम अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 52 के अर्थ में एक नियंत्रित उद्योग है और अतः संविधान के अनुच्छेद 246(1) के आलोक में संसद की विधायी शक्ति उद्योगों से संबंधित विधानों को आच्छादित करती है। न्यायालय ने कहा कि यदि आक्षेपित अधिनियम प्रविष्टि 52 का अतिक्रमण करता है तो उसे न्यायालय द्वारा निरस्त किया जाना चाहिए। तथापि, न्यायालय ने *टीका रामजी* के वाद में संविधान पीठ के निर्णय के होते हुए भी अधिनियम की अवैधता के तर्क पर आश्चर्य व्यक्त किया। न्यायालय ने कहा कि संविधान पीठ का निर्णय अंतिम रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए, जब तक कि विषय राष्ट्रीय जीवन के लिए इतना मौलिक न हो या तर्क इतने स्पष्ट रूप से बाद के विचारों के आलोक में त्रुटिपूर्ण न हों कि निरंतर गलत रहने की अपेक्षा अंततः सही होना अधिक उचित हो। यह भी कहा गया कि संविधान पीठों के निर्णयों के साथ इतना हल्के ढंग से व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए कि उन्हें बार-बार परिवर्तित किया जाए। *संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश रॉबर्ट्स द्वारा स्मिथ बनाम ऑलराइट*, 321 यूएस 649, पृष्ठ 669 में कहे गए शब्दों का उल्लेख करते हुए कहा गया कि "न्यायालय के निर्णय तीव्र गति से उस श्रेणी में जा रहे थे जैसे सीमित रेल टिकट, जो केवल उसी दिन और उसी गाड़ी के लिए मान्य हो।" *टीका रामजी* के वाद के उस भाग का उल्लेख किया गया जिसमें 'उद्योग' शब्द की व्यापकता के संबंध में यह तर्क कि इसमें न केवल निर्माण बल्कि कच्चा माल भी सम्मिलित है, तथा उस तर्क का अस्वीकार किया गया था। कंडिका 31, 31क एवं 32 में *टीका रामजी* के वाद का उल्लेख करते हुए यह विचार किया गया कि क्या उद्योग का कच्चा माल, जो प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, 'उद्योग' विषय के अंतर्गत आता है, जो सूची-I की प्रविष्टि 52 का विषय है। पीठ ने कहा:

"इस प्रकार निर्मित संसद की अनन्य विधायी अधिकारिता की संरचना अस्थिर आधार पर खड़ी थी। प्रविष्टि 52 की शब्दार्थगत व्यापकता राज्य विधायिका को अपने क्षेत्र के विषयों पर, जो सीधे उद्योग के मूल पर आघात नहीं करते, विधायन करने से नहीं रोकती।"

गंगा शुगर निगम के वाद में उपस्थित श्री शांति भूषण द्वारा *टीका रामजी* के निर्णय पर पुनर्विचार का आग्रह अस्वीकार कर दिया गया। न्यायालय ने कहा:

"*टीका रामजी* के होते हुए भी, श्री शांति भूषण ने यह तर्क दिया कि 'उद्योग' एक व्यापक अभिव्यक्ति है जो उद्योग में प्रयुक्त कच्चे माल को भी समाहित करती है और इस प्रकार चीनी उद्योग, विधायी विषय के रूप में, संसद को चीनी मिलों के लिए गन्ने की आपूर्ति पर विधायन करने की अनन्य शक्ति प्रदान करता है, और इस विस्तृत तर्क को आगे बढ़ाते हुए, गन्ने की आपूर्ति पर कोई भी कराधान चीनी उद्योग पर विधायन होगा। अतः क्रय कर अधिनियम उत्तर प्रदेश विधायिका द्वारा संविधान के अनुच्छेद 246(1) को सूची-I की प्रविष्टि 52 के साथ पढ़ते हुए उसकी सीमाओं का अतिक्रमण था। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि कोई भी ऐसा विधायन जो कच्चे माल पर कर लगाकर चीनी उद्योग को प्रभावित करता है, उस उद्योग के संबंध में विधायन है। *टीका रामजी* का सिद्धांत इस तर्क के बिल्कुल विपरीत है और जो निर्णय इतने लंबे समय से प्रभावी है तथा जिसे 1973 में *कन्नन देवन् हिल्स कंपनी बनाम केरल राज्य*, [1973] 1 एससीआर 356 में संविधान पीठ द्वारा पुनः अनुसरण किया गया है, उसकी तर्कशक्ति को हम आदरपूर्वक स्वीकार करते हैं और केवल पुनर्विचार की अपील से उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। श्री शांति भूषण ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि यदि *टीका रामजी* विधि का सही प्रतिपादन है, तो उनका तर्क स्वतः ही निष्प्रभावी हो जाता है। हम सहमत हैं।"

न्यायालय ने आगे कहा:

"'उद्योग' एक विधायी विषय के रूप में व्यापक एवं उदार अर्थ रखता है, यह सत्य है। किन्तु जो परिधीय रूप से प्रभावित करता है उसे उस वस्तु के साथ नहीं मिलाया जा सकता जो उसके मूल पर आघात करता है। चीनी मिलों के लिए भूमि का अधिग्रहण या स्वयं चीनी मिलों का अधिग्रहण उद्योग को प्रभावित कर सकता है, परन्तु यह राज्य के लिए निषिद्ध विधायी क्षेत्र में आने वाला कार्य नहीं है (*कन्नन देवन् हिल्स प्रोड्यूस कंपनी लिमिटेड का मामला देखें)*। *कारखाने में प्रयुक्त कच्चे माल पर बिक्री कर निर्माण की लागत प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है, किन्तु यह औद्योगिक प्रक्रिया या उससे संबंधित विषयों पर विधायन नहीं है, जो संसद के लिए सुरक्षित हैं; अन्यथा स्थिति अतार्किक परिणाम तक पहुँच जाएगी।"* (उल्लेख हमारा है)

श्री शांति भूषण के तर्क को स्वीकार करने का परिणाम यह भी हो सकता है कि राज्य तंबाकू पर बिक्री कर लगाने की अपनी शक्ति से भी वंचित हो जाए। इस प्रकार के तर्क को *गंगा शुगर निगम* के वाद में विशेष रूप से अस्वीकार किया गया था।

कन्नन देवन् हिल्स प्रोड्यूस बनाम केरल राज्य एवं एक अन्य, [1972] 2 एससीसी 218 में कन्नन देवन् हिल्स (भूमि पुनरार्जन) अधिनियम, 1971 की संवैधानिक वैधता को राज्य की विधायी क्षमता के अभाव के आधार पर चुनौती दी गई थी। यह तर्क दिया गया कि उक्त अधिनियम की धाराएँ 4 एवं 5 सप्तम अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आने वाला विधायन हैं क्योंकि ये प्रावधान चाय उद्योग के संचालन को विनियमित करते हैं, जो संसद की विधायी क्षमता के अंतर्गत आता है, क्योंकि ये चाय बागानों की भूमि को नियंत्रित करते हैं। यह तर्क दिया गया कि यदि किसी विधायन का प्रभाव चाय बागानों के संचालन को नियंत्रित करना है, तो उसे सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत माना जाना चाहिए। *टीका रामजी* के वाद का अनुमोदन सहित उल्लेख किया गया। इस तर्क को अस्वीकार करते हुए यह कहा गया कि राज्य के पास सूची-II की प्रविष्टि 18 एवं सूची-III की प्रविष्टि 42 के अंतर्गत विधायन करने की विधायी क्षमता है और केवल इस आधार पर कि उसका कुछ

प्रभाव सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत नियंत्रित उद्योग पर पड़ता है, राज्य की इस शक्ति को नकारा नहीं जा सकता। संविधान पीठ ने आगे कहा कि यदि कोई राज्य अधिनियम अन्यथा वैध है और उसका प्रभाव सूची-। के किसी विषय पर पड़ता है, तो इससे वह सूची-।। या सूची-।।। की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत विधायन होना समाप्त नहीं हो जाता। यह कहा गया कि प्रभाव और विषय-वस्तु एक ही बात नहीं हैं। धाराएँ 4 एवं 5 का उद्देश्य प्रतीत होता है कि राज्य को उन सभी भूमियों का अधिग्रहण करने में सक्षम बनाया जाए जो धारा 4(1) की श्रेणियों (क), (ख) एवं (ग) में नहीं आतीं। ये प्रावधान अधिग्रहण की शक्ति के प्रयोग के लिए सहायक हैं। राज्य को यह निर्धारित करने की शक्ति से वंचित नहीं किया जा सकता कि लोकहित में कौन-सी भूमि अधिग्रहित की जानी चाहिए।

बी. विश्वनाथैया एंड कंपनी एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य, [1991] 3 एससीसी 358 में मैसूर रेशम कीट बीज एवं कोकून (उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) अधिनियम, 1959 (अधिनियम संख्या 5, 1960) के प्रावधानों की वैधता को चुनौती दी गई थी। याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि रेशम उद्योग के संबंध में कोई भी विधायन केवल संसद ही कर सकती है और राज्य विधायिका इस विषय पर विधायन करने में अक्षम है, क्योंकि केन्द्रीय रेशम बोर्ड अधिनियम की धारा 2 ने सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत एक घोषणा कर दी है। इसका प्रभाव यह हुआ कि रेशम उद्योग राज्य विधायिका के अधिकार क्षेत्र से बाहर हो गया और इस प्रकार राज्य विधायिका उस विषय पर विधायन करने में अक्षम हो गई। उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के *टीका रामजी, गंगा शुगर निगम लिमिटेड, हरकचंद रतनचंद बनथिया तथा कन्नन देवन् हिल्स प्रोड्यूस कंपनी* के निर्णयों पर निर्भर करते हुए चुनौती को अस्वीकार कर दिया। उच्च न्यायालय द्वारा इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के आधार पर सूची-। की प्रविष्टि 52 के दायरे की व्याख्या करते हुए चुनौती को अस्वीकार किए जाने के पश्चात, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण से पूर्णतः सहमति व्यक्त की। यह कहा गया कि संसद में निहित उद्योग पर नियंत्रण

रेशम सूत या रेशम के उत्पादन एवं निर्माण के पहलू तक सीमित है। यह स्पष्ट रूप से उद्योग के पूर्ववर्ती चरण, अर्थात् कच्चे माल की आपूर्ति को सम्मिलित नहीं करता। उदाहरणार्थ, रेशम उद्योग के संदर्भ में भी रेशम कीट के बीज एवं कोकून का उत्पादन, विकास एवं वितरण राज्य अधिनियम द्वारा विनियमित किया गया था। ये वस्तुएँ रेशम उद्योग के कच्चे माल के रूप में मानी जा सकती हैं। प्रविष्टि 52 के अंतर्गत रेशम उद्योग पर संसद के नियंत्रण का इन कच्चे माल पर नियंत्रण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह भी कहा गया कि उद्योग द्वारा उत्पादित वस्तुओं का नियंत्रण, आपूर्ति एवं वितरण उद्योग का तृतीय पहलू है, जो प्रविष्टि 52 के अंतर्गत निहित नियंत्रण के दायरे से बाहर है। दूसरे शब्दों में, यद्यपि केन्द्रीय अधिनियम के प्रावधानों तथा धारा 2 में की गई घोषणा के कारण कच्चे रेशम के उत्पादन एवं निर्माण पर राज्य विधायिका विधायन नहीं कर सकती, तथापि वह घोषणा किसी भी प्रकार से राज्य विधायिका की उस शक्ति को सीमित नहीं करती जिससे वह रेशम उद्योग के उत्पादों के संबंध में विधायन कर सके। इस न्यायालय ने कहा कि "प्रविष्टि 52 की अन्यथा व्याख्या करने से संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची-III की प्रविष्टि 33 निरर्थक एवं निष्प्रभावी हो जाएगी।" वर्तमान वाद में भी यही स्थिति होगी।

श्री शांति भूषण के तर्क को स्वीकार करने से राज्य सूची की विभिन्न प्रविष्टियाँ निष्प्रभावी एवं निरर्थक हो जाएँगी और उन्हें सूची-I की प्रविष्टि 52 के अधीन बना दिया जाएगा, जबकि प्रविष्टियाँ इस प्रकार शब्दबद्ध नहीं हैं।

इंडियन एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड एवं एक अन्य बनाम कर्नाटक विद्युत बोर्ड एवं अन्य, [1992] 3 एससीसी 580 में, राज्य द्वारा संशोधन अधिनियम को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष यह तर्क रखा गया था कि:

> "एल्युमिनियम उद्योग, उद्योग विकास एवं विनियमन अधिनियम द्वारा घोषित भारत सरकार के नियंत्रणाधीन अनुसूचित उद्योग है और इस कारण यह संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आता है। अतः भारत सरकार की नीति

राज्य सरकार के लिए निर्देश के समान है जिसका पालन करना उनके लिए बाध्यकारी है। फलस्वरूप, 1976 का समझौता ऐसा समझौता है जो सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आने वाले विधि द्वारा संरक्षित है, जिसकी शर्तों को समवर्ती सूची (सप्तम अनुसूची की सूची-III) के अंतर्गत प्रदत्त शक्ति के आधार पर राज्य द्वारा बनाए गए विधि द्वारा परिवर्तित नहीं किया जा सकता। संशोधन अधिनियम की व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि वह केंद्र सरकार के विधि, वैधानिक आदेश या संवैधानिक निर्देश का अतिक्रमण या ह्रास न करे, अन्यथा उक्त संशोधन अधिनियम विधायी क्षमता से रहित होगा।"

उच्च न्यायालय ने *टीका रामजी* के वाद में दिए गए फ़ैसले पर अवलंबन करते हुए, जिसमें कानून बनाने के विषय के तौर पर 'उद्योग' की अवधारणा को समझाया गया था, ऊपर कही गई दलील को खारिज कर दिया। *टीका रामजी* के वाद में समझाए गए 'उद्योग' की अवधारणा से जुड़े संशोधन अधिनियम की वैधता को सही ठहराते हुए हाई न्यायालय ने जो फ़ैसला और तर्क दिए थे, उन्हें इस न्यायालय ने भी सही माना।

मेसर्स श्रीराम इंडस्ट्रियल एंटरप्राइजेज लिमिटेड बनाम भारत संघ एवं अन्य, एआईआर (1996) इलाहाबाद 135 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने उत्तर प्रदेश शीरा नियंत्रण अधिनियम, 1964 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 24, 1964) की वैधता का परीक्षण राज्य विधायिका की विधायी क्षमता के प्रश्न पर किया। इसकी वैधता को चीनी उद्योग द्वारा चुनौती दी गई थी। यह तर्क दिया गया कि उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 18 जी के कारण राज्य विधायिका की शक्ति, शीरा जो कि चीनी उद्योग का उत्पाद है, की आपूर्ति एवं वितरण को विनियमित करने हेतु विधायन करने से वंचित हो गई है और इस प्रकार उक्त राज्य अधिनियम की धाराएँ 7, 8 एवं 10 बनाने की वह सक्षम नहीं थी। पूर्ण पीठ ने संविधान निर्माण से पूर्व की विधायी इतिहास का अनुसरण करते हुए यह कहा कि यदि राज्य विधायिका की शक्ति के लोप का यह तर्क स्वीकार किया जाए, तो सूची-II एवं

सूची-III की अधिकांश प्रविष्टियाँ निरर्थक हो जाएँगी। जैसे ही संसद सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा करेगी, उदाहरणार्थ, प्रविष्टियाँ 20, 21, 22, 23 एवं 24 निरर्थक हो जाएँगी। उच्च न्यायालय ने कहा कि न तो यह संविधान निर्माताओं की मंशा थी और न ही यह प्रविष्टि 52 तथा सप्तम अनुसूची की सूची-II एवं सूची-III की अन्य प्रविष्टियों के अवलोकन से परिलक्षित होता है। इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का उल्लेख करते हुए उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष दिया:

> "उपरोक्त मामलों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों को लागू करने पर यह स्पष्ट है कि राज्य विधायिका, सप्तम अनुसूची की सूची-II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत उद्योग विषय पर, सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन रहते हुए, विधि बनाने के लिए सक्षम है तथा वह 'राज्य के भीतर व्यापार एवं वाणिज्य तथा वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण' विषय पर सूची-II की प्रविष्टि 26 एवं प्रविष्टि 27 के अंतर्गत, जो कि सूची-III की प्रविष्टि 33 के अधीन हैं, विधायन करने के लिए भी सक्षम है। किन्तु जब संसद द्वारा सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत यह घोषणा की जाती है कि किसी उद्योग का नियंत्रण लोकहित में संघ द्वारा किया जाना आवश्यक है, तब तीन परिणाम उत्पन्न होते हैं। प्रथम, ऐसी घोषणा के उपरांत नियंत्रित उद्योगों के संबंध में राज्य विधायिका की शक्ति, सूची-II की प्रविष्टि 24 से हटकर सूची-I की प्रविष्टि 52 में स्थानांतरित हो जाती है, उस सीमा तक जिस सीमा तक अधिनियम में नियंत्रण का प्रावधान किया गया है। द्वितीय, ऐसी घोषणा के परिणामस्वरूप राज्य विधायिका की प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत विधायन करने की शक्ति, सूची-III की प्रविष्टि 33 का भाग बन जाती है, जो समवर्ती सूची है। तृतीय परिणाम यह होता है कि नियंत्रित उद्योगों के उत्पाद सूची-III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आ जाते हैं।
>
> मेरे समक्ष विवाद को यदि संवैधानिक बहस, विधायी इतिहास, संबंधित प्रविष्टियों की संरचना एवं योजना तथा संविधान की मूल संरचना को ध्यान में रखकर

देखा जाए, तो एकमात्र अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि उद्योग विकास एवं विनियमन अधिनियम की धारा 18 जी सप्तम अनुसूची की सूची-III की प्रविष्टि 33 से संबंधित है। चूँकि नियंत्रित उद्योगों के उत्पादों के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के संबंध में विधायन करने की शक्ति समवर्ती विषय है, अतः उत्तर प्रदेश विधायिका 1964 के अधिनियम को बनाने के लिए सक्षम है।"

संघ सूची की प्रविष्टि 54 एवं राज्य सूची की प्रविष्टि 23 की संरचना एवं परस्पर संबंध, राज्य सूची की प्रविष्टि 24 एवं संघ सूची की प्रविष्टि 52 की संरचना एवं दायरे से पर्याप्त रूप से भिन्न हैं। खनिज एवं खदानों से संबंधित प्रविष्टि में उद्योग तथा उसका उत्पाद, दोनों सम्मिलित हैं और इस कारण, घोषणा के पश्चात खदान एवं खनिज दोनों ही संघ सूची की प्रविष्टि 54 में समाहित हो जाते हैं। अतः इस न्यायालय ने निरंतर यह माना है कि प्रविष्टि 54 के अंतर्गत घोषणा के द्वारा संसद पूरे क्षेत्र को अधिग्रहित करने की मंशा प्रकट करती है। मेरे मत में पूर्ण पीठ ने यह सही कहा कि खनिज एवं खदानों से संबंधित मामलों पर आधारित निर्णय, राज्य विधायन को चुनौती देने के समर्थन में सहायक नहीं हैं। पूर्ण पीठ के निर्णय को इस न्यायालय ने *सील लिमिटेड एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य,* [1998] 7 एससीसी 26 में अनुमोदित किया।

बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, [1999] 9 एससीसी 620 में संविधान पीठ ने बिहार कृषि उपज विपणन अधिनियम, 1960 के प्रावधानों के अंतर्गत विभिन्न वस्तुओं, जिनमें गन्ना, चीनी, शीरा, गेहूँ एवं चाय सम्मिलित हैं, पर बाजार शुल्क की वैधता के प्रश्न का परीक्षण किया। न्यायालय ने सर्वप्रथम उन लेन-देन का परीक्षण किया जिनमें बाजार क्षेत्रों में स्थित चीनी मिलों द्वारा गन्ने की खरीद की जाती थी, जो संबंधित बाजार समितियों के अधिकार क्षेत्र में आती थीं। न्यायालय ने यह ध्यान दिया कि उक्त अधिनियम बिहार विधानमंडल द्वारा संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची-II की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 के अंतर्गत प्रदत्त विधायी शक्ति के आधार पर बनाया गया था। न्यायालय ने

यह भी पाया कि यह अधिनियम वस्तुओं की आपूर्ति एवं वितरण तथा व्यापार एवं वाणिज्य से संबंधित है, क्योंकि यह निर्दिष्ट बाजारों में कृषि उपज की खरीद एवं बिक्री को विनियमित करता है। इस सीमा तक न्यायालय ने कहा कि सूची-III की प्रविष्टि 33 के प्रावधान, व्यापार एवं वाणिज्य तथा वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण से संबंधित विधायनों के संबंध में राज्य विधायिका की विधायी शक्ति को अधिरोहित करते हैं। अतः जिस सीमा तक यह अधिनियम गन्ना एवं चीनी, जो कि खाद्य पदार्थ हैं, की खरीद एवं बिक्री तथा उससे संबंधित व्यापार एवं वाणिज्य को विनियमित करता है, उस सीमा तक यह माना जाना चाहिए कि सूची-II की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 के अंतर्गत बनाया गया यह अधिनियम समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत किसी अन्य विधायन के अधीन होगा। श्री द्विवेदी का यह तर्क कि चूँकि तंबाकू खाद्य पदार्थ नहीं है और सूची-III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत नहीं आता, अतः संविधान में 1953 के संशोधन के समान संसद यदि चाहे तो आगे संशोधन कर तंबाकू—जो उद्योग का कच्चा माल है—को सूची-III की प्रविष्टि 33 में सम्मिलित कर सकती है और इस प्रकार स्वयं को तंबाकू के संबंध में विधायन करने की शक्ति प्रदान कर सकती है, इस न्यायालय द्वारा विचारणीय नहीं है क्योंकि यह अनावश्यक है। तथापि, यह उल्लेखनीय है कि संविधान पीठ ने अधिनियम एवं नियमों के विभिन्न प्रावधानों का परीक्षण करने के पश्चात यह निष्कर्ष निकाला कि गन्ने की खरीद, बिक्री, भंडारण एवं प्रसंस्करण के विनियमन की आवश्यकता, जो एक कृषि उपज है, उसी विधानमंडल द्वारा बनाए गए गन्ना अधिनियम में प्रदत्त व्यापक व्यवस्था द्वारा पूर्ण रूप से पूरी की गई है, जिसने सामान्य अधिनियम अर्थात् विपणन अधिनियम बनाया था।

बेलसंड शुगर कंपनी लिमिटेड के वाद में एक तर्क यह भी दिया गया था कि उद्योग विकास एवं विनियमन अधिनियम के अंतर्गत, लोकहित में, भारत संघ ने गेहूँ उद्योग का नियंत्रण अपने अधीन ले लिया है, जो अधिनियम की प्रथम अनुसूची में निर्दिष्ट है और फलस्वरूप उस उद्योग के उत्पाद की खरीद एवं बिक्री से संबंधित कोई भी लेन-देन राज्य

अधिनियम द्वारा विनियमित नहीं किया जा सकता। संविधान पीठ ने यह ध्यान दिया कि संसद ने सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अपनी विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए उक्त अधिनियम बनाया है और आटा उद्योग को "खाद्य प्रसंस्करण उद्योग" शीर्षक के अंतर्गत अनुसूचित उद्योगों में सम्मिलित किया गया है। पीठ ने कहा कि कच्चे माल के रूप में गेहूँ का उत्पादन या उसकी बिक्री उक्त अधिनियम के अंतर्गत नहीं आती और इस प्रकार जहाँ तक गेहूँ 'कृषि उपज' के रूप में है, वह उद्योग विकास एवं विनियमन अधिनियम के क्षेत्र से बाहर है। प्रश्न यह शेष रहा कि क्या आटे या गेहूँ से बने अन्य उत्पादों की बिक्री उक्त अधिनियम के अंतर्गत आती है। यह पाया गया कि केंद्र सरकार ने धारा 18 जी के अंतर्गत कोई वैधानिक आदेश जारी नहीं किया था जिससे उक्त क्षेत्र आच्छादित होता। न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार कर दिया कि अधिनियम में ऐसी वैधानिक व्यवस्था का मात्र अस्तित्व, जिससे केंद्र सरकार को आदेश जारी करने की शक्ति प्राप्त हो, उस क्षेत्र को आच्छादित करने के लिए पर्याप्त है। *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी* के निर्णय, जिस पर अपीलकर्ताओं ने निर्भरता रखी थी, का परीक्षण करते हुए संविधान पीठ ने कहा कि यह ध्यान में रखना होगा कि सूची-। की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए कोई भी विधायन संसद को खनिज एवं खदानों के विकास को लोकहित में संघ के नियंत्रण में लेने का अधिकार देता है। अतः खनन उद्योग के सभी पहलू ऐसी घोषणा के व्यापक क्षेत्र में आ जाते हैं। किन्तु यह भी देखा गया कि उद्योग विकास एवं विनियमन अधिनियम सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत बनाया गया है। यह कहा गया कि संघ सूची की प्रविष्टि 54 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 23 की योजना, सूची-। की प्रविष्टि 52 तथा सूची-॥ की प्रविष्टि 24 की योजना से पूर्णतः भिन्न है, जिनसे न्यायालय उस वाद में संबंधित था। इन दोनों प्रविष्टियों के संयुक्त पठन से यह कहा गया कि *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी* के निर्णय का अनुपात प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जा सकता।

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, *आईटीसी* के वाद में बहुमत निर्णय ने अपने दृष्टिकोण के समर्थन में बैजनाथ काडियो के निर्णय पर निर्भरता रखी थी, जिसने *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी* के वाद का अनुसरण किया था।

इसके अतिरिक्त, *बेलसंड शुगर कंपनी* के वाद में संविधान पीठ ने *सील* वाद के निर्णय को अनुमोदन सहित उद्धृत किया और पुनः यह प्रतिपादित किया कि केवल इस कारण कि किसी उद्योग को उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 2 के अंतर्गत घोषणा द्वारा नियंत्रित किया गया है, राज्य विधायिका को उस उद्योग के उत्पादों को विनियमित करने की अपनी शक्ति से वंचित नहीं किया जा सकता, जो उसे राज्य सूची के अंतर्गत प्राप्त है। *बेलसंड शुगर कंपनी* के निर्णय के कंडिका 119 का उद्धरण उपयोगी होगा:

> "जहाँ तक उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम का संबंध है, यह प्रथम अनुसूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत बनाया गया है, जो सामान्यतः उद्योगों से संबंधित है। साथ ही, राज्य सूची में प्रविष्टि 24 है, जो उद्योगों से संबंधित है, परंतु यह सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन है। *फलस्वरूप, ऐसे नियंत्रित उद्योगों के उत्पाद अनिवार्यतः संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आने वाले सामान्य विधायन के क्षेत्र में नहीं आते। उक्त संविधान पीठ का निर्णय राज्य विधायन से संबंधित प्रविष्टि 24 के अंतर्गत किसी अधिनियम से संबंधित नहीं था, बल्कि यह संघ संसद द्वारा प्रविष्टि 54 के अंतर्गत बनाए गए विधायन से संबंधित था, जिसे राज्य सूची की प्रविष्टि 23 के साथ पढ़ा गया था। इन प्रविष्टियों की योजना, सूची-I की प्रविष्टि 52 एवं सूची-II की प्रविष्टि 24 की योजना से पूर्णतः भिन्न है, जिनसे हम यहाँ संबंधित हैं।* अतः इन दोनों प्रविष्टियों के संयुक्त पठन से यह स्पष्ट है कि उक्त वाद में संविधान पीठ के निर्णय का अनुपात श्री रंजीत कुमार के तर्क के समर्थन में प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जा सकता। इस संदर्भ में हम इस न्यायालय के *सील* लिमिटेड के निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें हममें से एक, सुजाता वी. मनोहर, न्यायमूर्ति थीं। उसमें

हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी के निर्णय के अनुपात को उचित रूप से भिन्न बताया गया और यह कहा गया कि केवल इस कारण कि कोई उद्योग उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 2 के अंतर्गत घोषणा द्वारा नियंत्रित है, राज्य विधायिका को राज्य सूची की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत अपनी विधायी शक्ति के प्रयोग द्वारा उस उद्योग के उत्पादों को विनियमित करने की शक्ति से वंचित नहीं किया जा सकता। उस वाद में प्रश्न यह था कि क्या उत्तर प्रदेश शीरा नियंत्रण अधिनियम, 1964 को उद्योग विकास एवं विनियमन अधिनियम की धारा 18 जी के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा जारी शीरा (नियंत्रण) आदेश से प्रतिकूल माना जा सकता है, जो शीरा की बिक्री पर प्रतिबंध लगाता है और उसकी अधिकतम कीमत निर्धारित करता है। इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक दिया गया और *यह कहा गया कि प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द में व्यापार एवं वाणिज्य या वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण सम्मिलित नहीं है, जो सूची-II की प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत आते हैं। इसी प्रकार, सूची-I की प्रविष्टि 52, जो उद्योग से संबंधित है, वह भी उन उद्योगों के उत्पादों के व्यापार एवं वाणिज्य या उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण को आच्छादित नहीं करती।* ऐसे उद्योगों के लिए ये विषय पृथक कर दिए गए हैं और स्पष्ट रूप से सूची-III की प्रविष्टि 33 में रखे गए हैं। यह भी कहा गया कि चूँकि केंद्र सरकार द्वारा धारा 18 जी के अंतर्गत 1961 का शीरा (नियंत्रण) आदेश उत्तर प्रदेश या बिहार राज्य में किसी भी समय लागू नहीं किया गया, अतः 1961 के शीरा (नियंत्रण) आदेश और उत्तर प्रदेश शीरा नियंत्रण अधिनियम, 1964 के बीच प्रतिकूलता का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। फलस्वरूप, यह माना जाना चाहिए कि धारा 18 जी के अंतर्गत कोई वैधानिक आदेश जारी न होने की स्थिति में, आटा उद्योग के उत्पादों जैसे आटा, मैदा, सूजी, चोकर आदि की बिक्री एवं खरीद के विनियमन का क्षेत्र राज्य विधायिका के अधिकार क्षेत्र से बाहर नहीं माना जा सकता।"

(हमने जोर दिया)

उपरोक्त सिद्धांत सूची-II की प्रविष्टि 14, 27, 28 एवं 66 पर समान रूप से लागू होंगे। यह भी उल्लेखनीय है कि *बेलसंड शुगर कंपनी* के वाद के कंडिका 170 में संविधान पीठ ने *टीका रामजी* के वाद में व्यक्त दृष्टिकोण तथा *सील* के वाद में व्यक्त दृष्टिकोण, जिसमें इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा मेसर्स श्रीराम इंडस्ट्रियल एंटरप्राइजेज (उपरोक्त) के निर्णय की पुष्टि की गई थी, को पुनः दोहराया है।

उपरोक्त के आलोक में, मुझे ऐसा कोई बाध्यकारी कारण दृष्टिगोचर नहीं होता—चाहे वह किसी पूर्व संविधान पीठ के बाध्यकारी निर्णय के रूप में हो, या संविधान निर्माण का इतिहास एवं पृष्ठभूमि, या विभिन्न प्रविष्टियों में प्रयुक्त शब्द, अथवा संविधान के किसी अनुच्छेद की भाषा—जिसके आधार पर ऐसा दृष्टिकोण अपनाया जाए जिससे राज्य विधानसभाओं की विधायन करने की शक्ति का ह्रास हो जाए, न केवल प्रविष्टि 24 के अंतर्गत आने वाले विधायी क्षेत्र में, बल्कि राज्य सूची की अन्य प्रविष्टियों द्वारा आच्छादित विधायी क्षेत्रों में भी, केवल इस कारण कि संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा की गई है। *टीका रामजी* के वाद में संविधान पीठ के निर्णय तथा उसके अनुसरण में दिए गए अन्य निर्णय 'उद्योग' के विधायी क्षेत्र को 'निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया' तक सीमित करते हैं और उसे 'कच्चे माल', जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग हो सकता है, अथवा 'उद्योग के उत्पादों के वितरण' तक विस्तारित नहीं करते।

उपरोक्त के आलोक में, मैं निम्नलिखित निष्कर्ष निकालता हूँ:

1. राज्य विधायन तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975, बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री के संबंध में, साथ-साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते।
2. राज्य विधानसभाएँ तंबाकू नामक कृषि उपज की बाजार क्षेत्र में बिक्री के लिए तथा उस उपज पर बाजार शुल्क के अधिरोपण एवं वसूली के लिए विधायन करने के लिए सक्षम हैं।

3. संसद, संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आने वाले विधायी क्षेत्र में विधायन करते हुए, उपरोक्त निष्कर्ष संख्या 2 में उल्लिखित वस्तुओं के संबंध में विधायन करने के लिए सक्षम नहीं है, क्योंकि प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद केवल 'उद्योग', अर्थात् 'निर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया' के संबंध में ही विधायन कर सकती है, जैसा कि *टीका रामजी* के वाद में निर्धारित किया गया है। तंबाकू बोर्ड अधिनियम में निहित कच्चे तंबाकू की बिक्री से संबंधित गतिविधि को 'उद्योग' नहीं माना जा सकता।

4. *आईटीसी* का मामला [1985] पूरक एससीसी 476 सही रूप से निर्णयित नहीं है।

विशेष अनुमति याचिकाओं में अनुमति प्रदान की जाती है। उपरोक्त कारणों से राज्य विधायनों को वैध विधायन माना जाता है। अपीलें तथा विर्निदष्ट आदेश याचिका तदनुसार निपटाई जाती हैं। पक्षकार अपने-अपने व्यय वहन करेंगे।

रूमा पाल, न्यायमूर्ति—मैं अपने माननीय सहकर्मी पटनायक, न्यायमूर्ति द्वारा दिए गए इस निष्कर्ष से सहमत होने में असमर्थ हूँ कि संसद द्वारा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 बनाए जाने के कारण राज्य अधिनियम, अर्थात् बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम, 1960, जहाँ तक वह तंबाकू की बिक्री एवं खरीद पर शुल्क के अधिरोपण से संबंधित है, अवैध है।

संविधान के अंतर्गत कुछ क्षेत्रों में संसद की विधायी शक्ति सर्वोपरि है, इस पर कोई विवाद नहीं है। विवाद इन क्षेत्रों की सीमाओं को लेकर है, जैसा कि न्यायालयों द्वारा परिभाषित किया गया है। सामान्यतः संसद की सर्वोच्चता संविधान के अनुच्छेद 246 एवं 254 में निहित है। संविधान के अनुच्छेद 246 के प्रथम तीन खंड संसद एवं राज्य विधानसभाओं के बीच विधायी शक्तियों के विभाजन से संबंधित हैं। खंड (1) के अंतर्गत, खंड (2) एवं (3) में निहित किसी बात के होते हुए भी, संसद को सप्तम अनुसूची की सूची-। या संघ सूची में उल्लिखित किसी भी विषय के संबंध में विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्रदान की

गई है। खंड (2) के अंतर्गत, खंड (1) के अधीन रहते हुए, संसद तथा राज्य विधानसभाओं को सप्तम अनुसूची की सूची-III में उल्लिखित विषयों के संबंध में, जिसे संविधान में 'समवर्ती सूची' कहा गया है, विधि बनाने की शक्ति प्रदान की गई है, खंड (3) में निहित किसी बात के होते हुए भी। खंड (3) के अंतर्गत, राज्य विधानसभाओं को सप्तम अनुसूची की सूची-II में उल्लिखित विषयों के संबंध में, जिसे 'राज्य सूची' कहा गया है, विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्रदान की गई है, किन्तु यह खंड (1) एवं (2) के अधीन है। ये तीनों सूचियाँ, विधायी विषयों का विस्तार से उल्लेख करते हुए, संसद (सूची-I) तथा राज्य (सूची-II) के बीच विधायी अधिकार के क्षेत्रों का सावधानीपूर्वक वितरण करती हैं। संसद की सर्वोच्चता अनुच्छेद 246(1) में प्रयुक्त 'नॉटविथस्टैंडिंग' उपवाक्य तथा अनुच्छेद 246(2) एवं (3) में प्रयुक्त 'सब्जेक्ट टू' शब्दों द्वारा सुनिश्चित की गई है। अतः अनुच्छेद 246(1) के अंतर्गत यदि तीनों सूचियों की प्रविष्टियों में कोई आच्छादन हो, तो सूची-I की प्रविष्टि प्रबल होगी[1]। इसके अतिरिक्त, राज्य सूची की कुछ प्रविष्टियों को स्पष्ट रूप से संसद की विधायी शक्ति के अधीन बनाया गया है, चाहे वह सूची-I के अंतर्गत हो या सूची-III के अंतर्गत। यद्यपि सप्तम अनुसूची की सूचियों की प्रविष्टियों की उदार व्याख्या की गई है, तथापि न्यायालयों ने इस संतुलन को व्याख्या की प्रक्रिया द्वारा इस प्रकार विघटित करने से परहेज किया है जिससे किसी प्रविष्टि की सार्थकता समाप्त हो जाए और वह 'निष्प्रयोज्य' बन जाए।[2] खंड (3) में 'अनन्य' शब्द का प्रयोग यह दर्शाता है कि सूची-II में निहित विधायी क्षेत्रों के भीतर राज्य विधानसभाएँ उतनी ही पूर्ण एवं व्यापक शक्ति का प्रयोग करती हैं जितनी संसद करती है। "यह तथ्य कि हमारे संविधान की योजना के अंतर्गत केंद्र को राज्यों की अपेक्षा अधिक शक्ति प्रदान की गई है, इसका अर्थ यह नहीं है कि राज्य केंद्र के मात्र परिशिष्ट हैं। उन्हें आवंटित क्षेत्र के भीतर राज्य सर्वोच्च हैं। केंद्र उनकी शक्तियों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। विशेषतः न्यायालयों को ऐसा

---

1 *एम.पी.वी. सुंदरामियर एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, [1958] एससीआर 1422, 1480-82।*

2 *द कलकत्ता गैस कंपनी (मालिकाना) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1962] 3 एससीआर 1।*

दृष्टिकोण या व्याख्या नहीं अपनानी चाहिए जिसका प्रभाव यह हो या जो राज्य के लिए सुरक्षित शक्तियों को कम कर दे।[3]"

यद्यपि संसद राज्य सूची की किसी भी प्रविष्टि पर विधायन नहीं कर सकती, तथापि वह ऐसा सहायक रूप से कर सकती है जब वह मूलतः संघ सूची की प्रविष्टियों के अंतर्गत विधायन कर रही हो। इसके विपरीत, राज्य विधानसभाएँ भी संघ सूची में अतिक्रमण कर सकती हैं, जब ऐसा अतिक्रमण केवल राज्य सूची के अंतर्गत निहित शक्ति के प्रयोग का सहायक परिणाम हो। ऐसे अतिक्रमण का तथ्य विधि की वैधता को प्रभावित नहीं करता, यहाँ तक कि उस क्षेत्र में भी नहीं जहाँ अतिक्रमण हुआ है।[4] यह सिद्धांत, जिसे सामान्यतः 'मूल तत्व एवं सार' का सिद्धांत कहा जाता है, विधायी क्षेत्रों के विस्तार का द्योतक नहीं है। अतः इस प्रकार का सहायक अतिक्रमण किसी भी स्थिति में राज्य विधानसभाओं या संसद को उनके संबंधित प्रविष्टियों के अंतर्गत प्राप्त अनन्य शक्तियों से वंचित नहीं करता। यदि ऐसा सहायक अतिक्रमण उस क्षेत्र में वास्तविक रूप से बनाए गए विधायन से टकराता है, तो प्रमुख विधायन प्रभावी होगा।

संसद की सर्वोच्चता के विषय पर लौटते हुए, इसका दूसरा पहलू अनुच्छेद 254(1) में निहित है, जो यह उपबंध करता है:

> अनुच्छेद 254: "संसद द्वारा बनाए गए विधियों और राज्यों की विधानसभाओं द्वारा बनाए गए विधियों के बीच असंगति—(1) यदि राज्य की विधानमंडल द्वारा बनाए गए किसी विधि का कोई प्रावधान, संसद द्वारा बनाए गए ऐसे किसी विधि के प्रावधान से, जिसे संसद बनाने के लिए सक्षम है, अथवा समवर्ती सूची में उल्लिखित किसी विषय

---

3 *एस.आर. बोम्मई एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, [1994] 3 एससीसीआर 1, पृष्ठ 216।*

4 *ए.एस. कृष्णा बनाम मद्रास राज्य, [1957] एससीआर 399; चतुरभाई एम. पटेल बनाम भारत संघ एवं अन्य, [1960] 2 एससीआर 362, 373; राजस्थान राज्य बनाम जी. चावला, एआईआर (1959) एससी 544; तथा ईश्वरी खेतान शुगर मिल्स (प्रा.) लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1980] 4 एससीसी 136, 147।*

के संबंध में किसी विद्यमान विधि के प्रावधान से प्रतिकूल है, तो, खंड (2) के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, संसद द्वारा बनाया गया विधि, चाहे वह राज्य के विधि से पूर्व पारित हुआ हो या पश्चात, या जैसा भी मामला हो, वह विद्यमान विधि, प्रबल होगा और राज्य की विधानमंडल द्वारा बनाया गया विधि उस सीमा तक, जहाँ तक वह प्रतिकूल है, शून्य होगा।"

दूसरे शब्दों में, जब समवर्ती सूची के अंतर्गत विधायी शक्तियों के विधिवत प्रयोग में विधानों के बीच असंगत टकराव उत्पन्न होता है, तो केंद्रीय विधायन प्रभावी होगा। प्रतिकूलता का सिद्धांत इसी संदर्भ में विकसित किया गया है (देखें: *मेसर्स होएस्ट फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड बनाम बिहार राज्य*, [1983] 4 एससीसी 45, 89; *दीप चंद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* [1959] पूरक एससीआर 8)। वर्तमान विवाद का समाधान इन्हीं व्यापक सिद्धांतों को ध्यान में रखकर किया जाना है।

हमारे समक्ष तात्कालिक प्रश्न यह है कि क्या तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 राज्यों को तंबाकू के संबंध में बाजार शुल्क लगाने से वंचित करता है। हमारे समक्ष विचारार्थ आए विभिन्न मामलों में मुख्य पक्षकार एक ओर तंबाकू व्यापारी एवं विक्रेता थे, जो यह तर्क देते हैं कि राज्य तंबाकू पर बाजार शुल्क नहीं लगा सकते, और दूसरी ओर बाजार समितियाँ थीं, जो इसके विपरीत तर्क करती हैं। भारत संघ एवं तंबाकू बोर्ड ने प्रथम पक्ष का समर्थन किया है, जबकि राज्य सरकारों ने द्वितीय पक्ष का समर्थन किया है। हमारे द्वारा सुने गए विभिन्न मामलों का विवरण पटनायक, न्यायमूर्ति के मत में उल्लिखित है। अनेक अधिवक्ताओं ने दोनों पक्षों के समर्थन में तर्क प्रस्तुत किए हैं। सुविधा एवं सुसंगतता के लिए, विभिन्न तर्कों को समेकित कर दिया गया है और जो राज्य की विधायी क्षमता के विरुद्ध तर्क देते हैं उन्हें सामूहिक रूप से 'अपीलकर्ता' तथा उनके विरोधियों को 'प्रतिवादी' कहा गया है। एक और स्पष्टीकरण आवश्यक है। चूँकि इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ प्रश्न बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम, 1960 से संबंधित एक अपील में उठाया गया था, यद्यपि अन्य कई राज्यों

ने भी इसी प्रकार के अधिनियम बनाए हैं, मैं बिहार अधिनियम को प्रतिनिधि मानते हुए उसी के प्रावधानों के संदर्भ में विवाद का निर्णय करूँगी।

बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम, 1960 (जिसे आगे 'बाजार अधिनियम' कहा जाएगा) बिहार राज्य द्वारा अधिनियमित किया गया था और प्रत्यक्षतः यह सूची-II की प्रविष्टि 28 से संबंधित है, जो राज्य विधानमंडल को "बाजार एवं मेले" के संबंध में विधायन करने की अनन्य शक्ति प्रदान करती है, जिसे सूची-II की प्रविष्टि 66 के साथ पढ़ा जाता है, जिसके अनुसार राज्य विधानमंडल सूची-II के किसी भी विषय के संबंध में, न्यायालय शुल्क को छोड़कर, शुल्क भी अधिरोपित कर सकता है। यह सत्य है कि *बेलसंड शुगर कंपनी बनाम बिहार राज्य*[5] में न्यायालय ने यह मानकर कार्यवाही की कि बाजार अधिनियम बिहार विधानमंडल द्वारा न केवल प्रविष्टि 28 के अंतर्गत प्रदत्त विधायी शक्ति के आधार पर, बल्कि संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची-II की प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत भी अधिनियमित किया गया था, किन्तु उस वाद में इस बिंदु पर कोई विवाद प्रतीत नहीं होता। सूची-II की प्रविष्टि 26 एवं 27 इस प्रकार हैं:

> 26. राज्य के भीतर व्यापार एवं वाणिज्य, समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के प्रावधानों के अधीन।
>
> 27. वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण, समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के प्रावधानों के अधीन।"

प्रतिवादियों द्वारा यह भी तर्क दिया गया है कि राज्य अधिनियम सूची-II की प्रविष्टि 14 से भी संबंधित है, जो राज्यों द्वारा विधायन के लिए अनुमत विषय का इस प्रकार वर्णन करती है:

> 14. कृषि, जिसमें कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान, कीटों से संरक्षण तथा पादप रोगों की रोकथाम सम्मिलित है।

---

5 [1999] 9 एससीसी 620

सूची-II की प्रविष्टि 26 एवं 27 को छोड़कर, अन्य सभी प्रविष्टियाँ राज्यों के अनन्य विधायी क्षेत्र में आती हैं।

दूसरी ओर, तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 को अपीलकर्ताओं द्वारा केवल सूची-I की प्रविष्टि 52 से संबंधित बताया गया है, जो संसद को "उद्योग, जिनका नियंत्रण संघ द्वारा विधि के माध्यम से लोकहित में आवश्यक घोषित किया गया हो" के संबंध में विधायन करने की शक्ति प्रदान करती है। अपीलकर्ताओं के अनुसार, बाजार अधिनियम विभिन्न प्रकार की कृषि उपज, जिसमें तंबाकू भी सम्मिलित है, की बिक्री को विनियमित करने का प्रयास करता है। उनका कहना है कि बाजार अधिनियम के प्रावधान तंबाकू पर लागू नहीं किए जा सकते क्योंकि तंबाकू अधिनियम संसद द्वारा सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत तंबाकू उद्योग से संबंधित सभी विषयों तंबाकू की खेती से लेकर उसके प्रसंस्करण, भंडारण, बिक्री, निर्माण, निर्यात एवं आयात तक को नियंत्रित एवं विनियमित करने के लिए अधिनियमित किया गया है।

प्रारंभ में अपीलकर्ताओं द्वारा यह तर्क दिया गया था कि जैसे ही संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा की जाती है, जिस उद्योग के संबंध में घोषणा की गई है, उससे संबंधित संपूर्ण प्रक्रिया उसी विधायी शीर्ष के अंतर्गत आ जाती है और संसद के अनन्य क्षेत्राधिकार में आ जाती है तथा राज्य विधायिका उस उद्योग के संबंध में कोई भी प्रावधान करने में अक्षम हो जाती है। प्रत्युत्तर में इस तर्क को कुछ शिथिल किया गया। यह स्वीकार किया गया कि यह तर्क अत्यधिक व्यापक है और वास्तविक सिद्धांत यह है कि केंद्रीय अधिनियम द्वारा आच्छादित क्षेत्र की वास्तविक सीमा का परीक्षण किया जाना चाहिए। अगला तर्क यह था कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द को व्यापक अर्थ दिया जाना चाहिए। एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका से उद्धरण देकर यह कहा गया कि 'उद्योग' प्राथमिक, द्वितीयक अथवा तृतीयक हो सकता है। प्राथमिक उद्योगों में कृषि, वानिकी, मत्स्य पालन, खनन एवं खनिजों का उत्खनन सम्मिलित हैं। द्वितीयक उद्योग वह है जिसमें प्राथमिक उद्योगों द्वारा

उपलब्ध कराए गए कच्चे माल का प्रसंस्करण कर उपभोक्ता एवं अ-उपभोक्ता वस्तुओं का निर्माण किया जाता है। तृतीयक उद्योग वह है जिसमें सेवाएँ प्रदान की जाती हैं, जैसे बैंकिंग, बीमा, परिवहन, सूचना आदि। इसकी तुलना उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 में दी गई परिभाषा से की गई, जो केवल निर्माण उद्योगों से संबंधित है। अपीलकर्ताओं के अनुसार, इस न्यायालय ने *हरकचंद रतनचंद बनथिया एवं अन्य बनाम भारत संघ*, [1970] 1 एससीआर 479 में न केवल उद्योग की व्यापक परिभाषा को स्वीकार किया, बल्कि यह भी कहा कि सूची-I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द में सूची-II की प्रविष्टि 27 में उल्लिखित उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण भी सम्मिलित हैं। अतः यह तर्क दिया गया कि तंबाकू अधिनियम के प्रावधान स्पष्टतः संसद की अनन्य विधायी क्षमता के अंतर्गत आते हैं और सूची-I की प्रविष्टि 52 द्वारा आच्छादित क्षेत्र में आते हैं। इस तर्क के परिणामस्वरूप यह भी कहा गया कि संसद 'मूल तत्व एवं सार' के सिद्धांत के अनुरूप घोषित उद्योग को उपलब्ध कराए जाने वाले कच्चे माल के संबंध में भी विधायन कर सकती है। अगला तर्क यह था कि यदि राज्य सरकार तंबाकू के संबंध में विधायन करने की क्षमता रखती भी हो, तब भी वह ऐसा कोई वैधानिक प्रावधान नहीं बना सकती जो केंद्रीय अधिनियम से प्रतिकूल हो। तंबाकू अधिनियम एवं बाजार अधिनियम के प्रावधानों का विस्तृत उल्लेख करते हुए यह कहा गया कि दोनों सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते और अतः केंद्रीय अधिनियम को प्रबल होना चाहिए। यह कहा गया कि इन परिस्थितियों में बाजार अधिनियम के तंबाकू से संबंधित प्रावधान तंबाकू अधिनियम के प्रावधानों के प्रतिकूल हैं और संविधान के अनुच्छेद 254(1) के अनुसार संसद द्वारा बनाया गया विधि प्रबल होगा तथा राज्य विधानमंडल द्वारा बनाया गया विधि, उस सीमा तक जहाँ तक वह केंद्रीय अधिनियम से प्रतिकूल है, शून्य होगा।

दूसरी ओर, प्रतिवादियों ने तर्क दिया कि तंबाकू अधिनियम तंबाकू से संबंधित संपूर्ण विधायी क्षेत्र को आच्छादित नहीं करता और न ही कर सकता है। उनके अनुसार, सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत तंबाकू अधिनियम की धारा 2 में की गई घोषणा के बावजूद, 'उद्योग'

शब्द का अर्थ तंबाकू अधिनियम के संदर्भ में केवल तंबाकू के प्रसंस्करण एवं निर्माण तक सीमित है। इस संबंध में मुख्य रूप से संविधान पीठ के निर्णय *टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य,* [1956] एससीआर 393 पर निर्भरता रखी गई।

प्रतिवादियों की ओर से यह भी कहा गया कि बाजार अधिनियम एवं तंबाकू अधिनियम के बीच प्रतिकूलता का प्रश्न उत्पन्न ही नहीं होता क्योंकि संसद उन विधायी क्षेत्रों में प्रावधान बनाने के लिए सक्षम नहीं है जो विशेष रूप से सूची-II में प्रदान किए गए हैं। यह तर्क दिया गया कि सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत विधायी क्षेत्र, सूची-II की प्रविष्टि 24 से व्युत्पन्न है और प्रविष्टि 24 उन विधायी क्षेत्रों को आच्छादित नहीं करती जो सूची-II में विशेष रूप से अन्य प्रविष्टियों में दिए गए हैं। यह कहा गया कि प्रविष्टि 28 को सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा करके केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए विधायन के माध्यम से निरर्थक नहीं किया जा सकता। यह भी कहा गया कि तंबाकू अधिनियम में ऐसे प्रावधान हो सकते हैं जो राज्य की विधायी क्षमता में सहायक रूप से अतिक्रमण करते हों और जब तक राज्य उस विषय पर विधायन नहीं करते, तंबाकू अधिनियम प्रभावी रह सकता है। यह भी कहा गया कि यदि बाजार अधिनियम को सूची-II की प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत अधिनियमित माना जाए, तब भी यह अधिनियम तंबाकू के संबंध में अवैध नहीं होगा। आगे यह भी कहा गया कि यद्यपि राज्य सूची की प्रविष्टि 26 एवं 27 समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अधीन हैं, तथापि प्रविष्टि 33 में तंबाकू को आच्छादित करने वाला कोई प्रावधान नहीं है। यह तर्क दिया गया कि प्रतिकूलता का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता क्योंकि अनुच्छेद 254(1) केवल समवर्ती सूची के विषयों के संबंध में वास्तविक विधायनों के बीच प्रतिकूलता से संबंधित है। प्रतिवादियों के अनुसार, यदि यह मान भी लिया जाए कि संसद तंबाकू के संबंध में विधायन करने के लिए सक्षम है, तब भी बाजार अधिनियम एवं तंबाकू अधिनियम के बीच वास्तव में कोई प्रतिकूलता नहीं है, क्योंकि तंबाकू अधिनियम नीलामी के पश्चात की बिक्री को आच्छादित नहीं करता। किसी भी स्थिति में बिहार में बाजार अधिनियम एवं

केंद्रीय अधिनियम के बीच कोई टकराव नहीं हो सकता, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि तंबाकू अधिनियम की धाराएँ 13, 13क एवं 14क बिहार में लागू नहीं की गई हैं। यह भी तर्क दिया गया कि तंबाकू अधिनियम में 'नॉटविथस्टैंडिंग' उपवाक्य का अभाव तथा उसमें धारा 31 का होना यह स्पष्ट करता है कि तंबाकू अधिनियम को अन्य विधियों के अतिरिक्त माना जाना चाहिए, न कि उनके अपवाद के रूप में। अतः प्रतिवादियों के अनुसार, यदि तंबाकू पूर्णतः संसद के अनन्य विधायी क्षेत्र में भी हो, तब भी राज्य विधानमंडल उन बाजारों में प्रदान की गई सेवाओं के लिए शुल्क वसूल सकता है जहाँ तंबाकू की बिक्री होती है।

प्रारंभ में, मेरा मत है कि इस पीठ को तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 (जिसे आगे संक्षेप में 'तंबाकू अधिनियम' कहा जाएगा) की वैधता के प्रश्न में प्रवेश ही नहीं करना चाहिए, यद्यपि यह मुद्दा हमारे समक्ष मुख्य पक्षकारों द्वारा विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। इन अपीलों के समूह का मूल विवाद इस प्रश्न तक सीमित है कि क्या बाजार समितियों को बाजार अधिनियम के अंतर्गत तंबाकू की बिक्री पर बाजार शुल्क लगाने का अधिकार है तथा क्या बाजार अधिनियम के वे प्रावधान, जो बाजार समितियों को यह अधिकार प्रदान करते हैं, तंबाकू अधिनियम के प्रावधानों से प्रतिकूल हैं और इस कारण असंवैधानिक हैं। इस पीठ के समक्ष विचारार्थ जो रखा गया है वह *आईटीसी लिमिटेड एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य*, [1985] (पूरक) एससीसी 476 के पूर्व निर्णय की शुद्धता है। उस वाद में प्रश्न यह था कि क्या कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 के तंबाकू पर बाजार शुल्क लगाने से संबंधित प्रावधान तंबाकू अधिनियम के प्रतिकूल हैं। बहुमत ने माना कि वे प्रतिकूल हैं, जबकि अल्पमत का मत था कि दोनों अधिनियम सह-अस्तित्व में रह सकते हैं। किन्तु स्वयं तंबाकू अधिनियम की वैधता कभी विवादित नहीं थी। यद्यपि राज्यों को नोटिस दिया गया है, तथापि तर्कों का केंद्र बिंदु तंबाकू के विपणन पर शुल्क के अधिरोपण पर ही रहा है। चूँकि तंबाकू अधिनियम का क्षेत्र कहीं अधिक व्यापक है, इसलिए अधिनियम के विभिन्न

प्रावधानों की वैधता पर व्यापक निर्णय देना उपयुक्त नहीं होगा, क्योंकि इससे तंबाकू के विपणन से इतर विषयों पर भी बिना संबंधित पक्षकारों को सुने निर्णय हो सकता है।

ऐसे किसी भी विवाद का प्रारंभिक बिंदु, जिसमें विधायी अधिकार क्षेत्रों में स्पष्ट टकराव प्रतीत होता हो, यह देखना होता है कि क्या उन प्रविष्टियों को, जिनसे संबंधित विधायन किए गए हैं, एक साथ पढ़कर तथा "एक की भाषा की व्याख्या करते हुए, जहाँ आवश्यक हो, दूसरे की भाषा में संशोधन करते हुए" टकराव को समुचित रूप से सुलझाया जा सकता है। केवल तभी जब ऐसा समाधान संभव न हो, न्यायालयों को विधायी क्षमता के प्रश्न का निर्णय करना चाहिए। इस सिद्धांत पर अनेक मामलों में प्रिवी काउंसिल, संघीय न्यायालय तथा इस न्यायालय द्वारा बल दिया गया है (देखें: सेंट्रल प्रोविंसेस एंड बरार सेल्स ऑफ मोटर स्पिरिट एंड लुब्रिकेंट्स टैक्सेशन एक्ट, 1938[6]; *गवर्नर-जनरल इन काउंसिल बनाम मद्रास प्रांत; बॉम्बे राज्य बनाम एफ.एन. बलसारा*, एआईआर (1951) एससी 818; *अकाउंटेंट एंड सेक्रेटेरियल सर्विसेज प्रा. लिमिटेड बनाम भारत संघ*, एआईआर (1988) एससी 1708; *फतेहचंद बनाम महाराष्ट्र राज्य*, एआईआर (1977) एससी 1825; *तथा कलकत्ता गैस कंपनी (प्रा.) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य*, एआईआर (1962) एससी 1044)।

इसी प्रकार, जब समवर्ती सूची के अंतर्गत विधायी शक्तियों के वैध प्रयोग के तहत बनाए गए दो अधिनियमों के बीच स्पष्ट टकराव हो, तो पहले सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। केवल तब जब मतभेद असमाधेय हों, न्यायालयों को किसी विधायन को निरस्त करने का सहारा लेना चाहिए (*देखें: कन्नन देवन् हिल्स प्रोड्यूस बनाम केरल राज्य*, [1972] 2 एससीसी 218; *मेसर्स होएस्ट फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड बनाम बिहार राज्य*, [1983] 4 एससीसी 45)।

मेरे मत में, यदि इस वाद में उठे प्रश्न का समाधान इस सीमा तक किया जा सकता है कि हम केवल उन प्रविष्टियों के बीच संभावित टकराव पर विचार करें, जिनसे तंबाकू

---

6 एआईआर (1939) एफसी 1.

अधिनियम एवं बाजार अधिनियम संबंधित हैं, तथा उन दोनों अधिनियमों के उन प्रावधानों का परीक्षण करें जो तंबाकू के विपणन से संबंधित हैं, तो उन क्षेत्रों में प्रवेश करना अनावश्यक है जो इन अपीलों के निपटान के लिए आवश्यक नहीं हैं। अतः इस मत में की गई चर्चा उन्हीं प्रविष्टियों के दायरे एवं दोनों अधिनियमों के उन प्रावधानों तक सीमित है जिनसे हम यहाँ संबंधित हैं।

इस वाद में विवाद का एक महत्वपूर्ण भाग 'उद्योग' शब्द के अर्थ पर निर्भर करता है, जैसा कि तीनों विधायी सूचियों में प्रयुक्त हुआ है। अब, सभी उद्योगों के संबंध में विधायन करने की शक्ति सूची-II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत राज्य विधानसभाओं को प्रदान की गई है, जो सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन है। सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 संसद को विशिष्ट 'उद्योगों' के संबंध में विधायन करने की अनुमति देती हैं—अर्थात् ऐसे उद्योग जिनके संबंध में संसद यह घोषित करे कि वे रक्षा या युद्ध संचालन के लिए आवश्यक हैं (प्रविष्टि 7) अथवा ऐसे उद्योग जिनका नियंत्रण संघ द्वारा लोकहित में आवश्यक है (प्रविष्टि 52)। ऐसे नियंत्रित उद्योगों के उत्पादों के व्यापार एवं वाणिज्य तथा उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण का प्रावधान समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 में किया गया है, जिसमें संसद एवं राज्य विधानसभाएँ दोनों विधायन करने के लिए सक्षम हैं। इस न्यायालय की संविधान पीठ ने *कलकत्ता गैस कंपनी (प्रा.) लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य*[7] में यह कहा है कि 'उद्योग' शब्द को तीनों सूचियों में समान अर्थ में लिया जाना चाहिए और चूँकि सामान्यतः उद्योग राज्य विधायन के क्षेत्र में आता है, अतः इस शब्द की व्याख्या सूची-II की अन्य प्रविष्टियों के संदर्भ में इस प्रकार की जानी चाहिए कि सूची-II की कोई भी प्रविष्टि अपनी सार्थकता से वंचित न हो। दूसरे शब्दों में, 'उद्योग' शब्द का अर्थ सूची-II की प्रविष्टि 24 के संदर्भ में निर्धारित किया जाना चाहिए, जहाँ उद्योगों के संबंध में सामान्य विधायी शक्ति प्रदान की गई है। प्रविष्टि 7 एवं 52 इस सामान्य

---

7 [1962] 3 एससीआर 1.

समूह से कुछ विशेष उद्योगों को पृथक करती हैं। अतः इन दोनों प्रविष्टियों में 'उद्योग' शब्द का अर्थ अनिवार्यतः वही होगा जो सूची-II की प्रविष्टि 24 में उसे दिया गया है।

'उद्योग' की परिभाषा निर्धारित करने के लिए इस व्याख्या प्रक्रिया पर अग्रणी निर्णय *च. टीका रामजी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य*[8] है, जिसमें संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से यह कहा:

> " उद्योग शब्द के व्यापक अर्थ में तीन विभिन्न पहलू सम्मिलित हो सकते हैं: (1) कच्चा माल जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, (2) निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया, तथा (3) उद्योग के उत्पादों का वितरण। कच्चा माल वे वस्तुएँ होंगी जो सूची-II की प्रविष्टि 26 में सम्मिलित होंगी। निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया सूची-II की प्रविष्टि 24 में सम्मिलित होगी, सिवाय उस स्थिति के जब उद्योग नियंत्रित उद्योग हो, तब वह सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आएगा, और उद्योग के उत्पाद भी सूची-II की प्रविष्टि 27 में सम्मिलित होंगे, सिवाय उस स्थिति के जब वे नियंत्रित उद्योगों के उत्पाद हों, तब वे सूची-III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आएँगे। "

टीका रामजी द्वारा 'उद्योग' शब्द की परिभाषा के पीछे का मूल तर्क यह है कि संविधान ने तीनों सूचियों में विधायन के विभिन्न क्षेत्रों को स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट किया है, अतः प्रत्येक क्षेत्र को उसका स्वतंत्र अर्थ दिया जाना चाहिए। सूची-II की प्रविष्टि 24 को इस प्रकार नहीं पढ़ा जा सकता कि वह सूची-II की अन्य प्रविष्टियों को अपने भीतर समाहित कर ले। इसे ऐसा अर्थ दिया जाना चाहिए जिससे अन्य प्रविष्टियाँ भी प्रभावी रहें और उसकी परिभाषा उस सीमा तक इस आधार पर निर्धारित हो कि वह क्या नहीं है।

इस प्रकार, *कलकत्ता गैस* वाद में यह कहा गया कि सूची-II की प्रविष्टि 24 तथा सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 में 'उद्योग' शब्द में गैस एवं गैस कार्य सम्मिलित नहीं हैं, क्योंकि उनका प्रावधान स्पष्ट रूप से प्रविष्टि 25 में किया गया है। उस वाद में तर्क यह था कि राज्य

---

8 [1956] एससीआर 393

सूची-II की प्रविष्टि 25 के अंतर्गत ओरिएंटल गैस कंपनी अधिनियम, 1960 अधिनियमित करने के लिए सक्षम नहीं था क्योंकि संसद ने उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 सूची-I की प्रविष्टि 52 के आधार पर पारित किया था। उस केंद्रीय अधिनियम ने धारा 2 के अंतर्गत यह घोषणा की थी कि लोकहित में संघ द्वारा अन्य उद्योगों के साथ-साथ 'ईंधन गैस' (कोयला गैस, प्राकृतिक गैस आदि) उद्योगों का नियंत्रण अपने अधीन लेना आवश्यक है। इन उद्योगों को प्रोत्साहित एवं विनियमित करने के उद्देश्य से केंद्रीय अधिनियम ने केंद्र सरकार को किसी उपक्रम के कार्यकलापों की जाँच करने, उसके उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण को विनियमित करने तथा आवश्यक होने पर उसके प्रबंधन को अपने हाथ में लेने का अधिकार प्रदान किया। न्यायालय ने कहा कि यदि सूची-II की प्रविष्टि 24 तथा परिणामस्वरूप सूची-I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द की व्याख्या इस प्रकार की जाए कि उसमें 'गैस एवं गैस कार्य' भी सम्मिलित हों, जो कि स्पष्टतः सूची-II की प्रविष्टि 25 में सम्मिलित हैं, तो प्रविष्टि 25 निरर्थक हो जाएगी और यह संविधान निर्माताओं को "अयोग्यता, अशुद्धता एवं पुनरुक्ति" का दोषी ठहराने के समान होगा। परिणामस्वरूप राज्य अधिनियम के विरुद्ध चुनौती को अस्वीकार कर दिया गया और केंद्रीय अधिनियम, जहाँ तक वह गैस उद्योग से संबंधित था, संसद की विधायी क्षमता के परे माना गया।

इसी प्रकार, *बी. विश्वनाथैया एंड कंपनी एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य*, [1991] 3 एससीसी 358 में मैसूर रेशमकीट बीज एवं कोकून (उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) अधिनियम, 1959 की वैधता को चुनौती दी गई। यह तर्क दिया गया कि संसद द्वारा केंद्रीय सिल्क बोर्ड अधिनियम (अधिनियम 61, 1948) पारित किए जाने के पश्चात, जिसमें सूची-I की प्रविष्टि 52 के अनुरूप घोषणा की गई थी, विवादित प्रावधान विधायी क्षमता से परे हो गए हैं। न्यायालय ने *टीका रामजी* का अनुसरण करते हुए कहा कि "उद्योग पर संसद का नियंत्रण केवल रेशम धागे अथवा रेशम के उत्पादन एवं निर्माण तक सीमित

था। इसमें उद्योग के पूर्ववर्ती चरण, अर्थात् कच्चे माल की आपूर्ति, स्पष्टतः सम्मिलित नहीं थे।"

यह भी अभिनिर्धारित किया गया:

"यद्यपि कच्चे रेशम के उत्पादन एवं निर्माण के संबंध में राज्य विधानमंडल केंद्रीय अधिनियम एवं उसकी धारा 2 में की गई घोषणा के कारण विधायन नहीं कर सकता, तथापि यह घोषणा एवं प्रविष्टि 52 राज्य विधानमंडल की उस शक्ति को किसी भी प्रकार सीमित नहीं करती जिसके अंतर्गत वह रेशम उद्योग द्वारा उत्पादित वस्तुओं के संबंध में विधायन कर सकता है। प्रविष्टि 52 की अन्यथा व्याख्या करने से संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची-III की प्रविष्टि 33 निरर्थक एवं अर्थहीन हो जाएगी।"

सूची-II की प्रविष्टि 24 तथा परिणामस्वरूप सूची-I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' की परिभाषा निर्धारित करने की यह प्रक्रिया—जिसमें सूची-II या सूची-III में विशेष रूप से प्रदान किए गए क्षेत्रों को इसके दायरे से बाहर रखा जाता है—लगातार अपनाई गई है। उदाहरण के लिए, *आंध्र प्रदेश राज्य बनाम मैकडॉवेल एंड कंपनी*, [1996] 3 एससीसी 709 में कहा गया:

"संसद सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा करके मादक द्रव्यों के उत्पादन एवं निर्माण में संलग्न उद्योगों का नियंत्रण अपने हाथ में नहीं ले सकती, क्योंकि उक्त प्रविष्टि केवल सूची-II की प्रविष्टि 24 को नियंत्रित करती है, न कि सूची-II की प्रविष्टि 8 को। "

कन्नन देवन् हिल प्रोड्यूस बनाम केरल राज्य, [1972] 2 एससीसी 218 में यह माना गया कि चाय उद्योग के संबंध में संघ सूची की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा राज्यों को सूची-II की प्रविष्टि 18 तथा सूची-III की प्रविष्टि 42 के अंतर्गत चाय की खेती वाली भूमि के अधिग्रहण के लिए विधायन करने से नहीं रोकती।

गंगा शुगर निगम लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, [1980] 1 एससीसी 223 में संविधान पीठ ने यह स्वीकार किया कि सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत चीनी

उद्योग के संबंध में केंद्रीय विधायन होने के बावजूद, राज्य सूची की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत राज्य सरकारों को गन्ने पर क्रय कर लगाने की शक्ति प्राप्त है।

एक अन्य संविधान पीठ ने *फतेह चंद बनाम महाराष्ट्र राज्य* : एआईआर (1977) एससी 1825 में महाराष्ट्र ऋण राहत अधिनियम, 1976 तथा गोल्ड कंट्रोल एक्ट के मध्य संवैधानिक संघर्ष का निर्णय किया। यह तर्क दिया गया कि ऋण अधिनियम उस सीमा तक शून्य है जहाँ तक वह "स्वर्ण ऋणों" से संबंधित है, क्योंकि संसद ने सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत उस क्षेत्र को आच्छादित कर लिया है। यह भी कहा गया कि ऋण अधिनियम एवं गोल्ड कंट्रोल एक्ट के बीच असंगति है और ऐसी असंगति की सीमा तक ऋण अधिनियम को प्रभाव नहीं दिया जा सकता। न्यायालय ने यह पाया कि ऋण अधिनियम स्पष्ट रूप से सूची-।। की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आता है, अर्थात् "सूदखोरी एवं सूदखोर; कृषि ऋण से राहत" और यह माना गया कि इस तथ्य के बावजूद कि गोल्ड एक्ट सूची-। की प्रविष्टि 52 से संबंधित है:

> "इसका अर्थ यह नहीं है कि राज्य सूची की अन्य प्रविष्टियाँ 'स्वर्ण' के संबंध में भी निष्प्रभावी हो जाती हैं। राज्य विधानमंडल सूची-।। की प्रविष्टि 30 के अंतर्गत स्वर्ण से संबंधित मामलों में भी सूदखोरी पर विधायन कर सकता है, जैसे कि वह प्रविष्टि 34 के अंतर्गत 'स्वर्ण में जुआ' को विनियमित कर सकता है, प्रविष्टि 54 के अंतर्गत स्वर्ण की बिक्री पर कर लगा सकता है, प्रविष्टि 5 के अंतर्गत नगरपालिका कानूनों द्वारा तथा प्रविष्टि 26 के अंतर्गत व्यापारिक प्रतिबंधों द्वारा स्वर्ण दुकानों के प्रकार एवं बहुमूल्य धातुओं की खरीद-बिक्री की रसीदों को विनियमित कर सकता है। उदाहरणों की संख्या बढ़ाना सरल है, परंतु मूल बात यह है कि जहाँ संसद ने अपनी शक्ति के अंतर्गत कोई ऐसा विधि बनाया है जो राज्य सूची की किसी प्रविष्टि को अधिभूत करता है, वहाँ उतना ही क्षेत्र राज्य सूची से अलग हो जाता है—उससे अधिक नहीं। "

टीका रामजी के तर्क का अनुसरण करने वाले अनेक निर्णयों के उदाहरणों को बढ़ाना आवश्यक नहीं है, जिन्होंने इस निष्कर्ष को स्वीकार किया है कि सूची-II की प्रविष्टि 24 तथा परिणामस्वरूप सूची-I की प्रविष्टि 52 के प्रयोजनार्थ 'उद्योग' का अर्थ केवल "निर्माण अथवा उत्पादन" है और इससे अधिक कुछ नहीं। यह कहना पर्याप्त है कि 'उद्योग' की *टीका रामजी* द्वारा दी गई परिभाषा को हाल ही में *बेलसंड शुगर कंपनी बनाम बिहार राज्य* (उपरोक्त) में संविधान पीठ द्वारा अनुमोदित एवं लागू किया गया है और वह आज भी विधि का मान्य सिद्धांत है। *हरक चंद बनथिया* का मामला इससे भिन्न नहीं है।

हरकचंद रतनचंद बनथिया एवं अन्य बनाम भारत संघ, [1970] 1 एससीआर 479 का उल्लेख अपीलकर्ताओं ने इस आधार पर किया कि *टीका रामजी* में स्थापित नकारात्मक परीक्षण सूची-I की प्रविष्टि 52 की व्याख्या के लिए लागू नहीं होता। यह तर्क स्वीकार्य नहीं है। *बनथिया* वाद में संसद द्वारा पारित गोल्ड कंट्रोल एक्ट, 1968 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी गई थी। स्वर्ण को उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 के अंतर्गत सूची-I की प्रविष्टि 52 के अनुसार 'नियंत्रित उद्योग' घोषित किया गया था। एक चुनौती यह थी कि गोल्ड एक्ट द्वारा नियंत्रित की जाने वाली गतिविधि 'उद्योग' नहीं है और अतः संसद की विधायी क्षमता से बाहर है। अपीलकर्ताओं द्वारा जिस अंश पर विशेष निर्भरता रखी गई है, वह इस प्रकार है:

> "विचारणीय प्रश्न यह है कि सूची-I की प्रविष्टि 52, सूची-II की प्रविष्टि 24 तथा सूची-III की प्रविष्टि 33 में 'उद्योग' शब्द का क्या अर्थ है। चाहे इसका जो भी आशय हो, इन सभी प्रविष्टियों में इसका समान अर्थ होना चाहिए, क्योंकि ये इतनी परस्पर संबंधित हैं कि यदि इन्हें भिन्न अर्थ दिए जाएँ तो यह संबंध विच्छिन्न हो जाएगा। शॉर्टर ऑक्सफोर्ड इंग्लिश शब्दकोष में 'उद्योग' का अर्थ 'उत्पादक श्रम की एक विशेष शाखा; व्यापार अथवा निर्माण' बताया गया है। *वेबस्टर* के थर्ड न्यू इंटरनेशनल शब्दकोष (1961 संस्करण) के अनुसार 'उद्योग' का अर्थ है—(क) मूल्य सृजन हेतु

व्यवस्थित श्रम; (ख) किसी शिल्प, कला, व्यवसाय अथवा निर्माण की शाखा; (ग) ऐसे उत्पादक अथवा लाभकारी उपक्रमों का समूह जिनकी उत्पादन संरचना समान हो। यह कहा गया कि यदि 'उद्योग' शब्द को इस व्यापक अर्थ में लिया जाए तो सूची-II की प्रविष्टि 27 निरर्थक हो जाएगी। यह तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि प्रविष्टि 27 एक सामान्य प्रविष्टि है और यह एक स्थापित सिद्धांत है कि सामान्य शक्ति की व्याख्या इस प्रकार नहीं की जानी चाहिए कि उसी साधन द्वारा प्रदत्त किसी विशिष्ट शक्ति को निष्प्रभावी कर दे। *टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* [1956] एससीआर 393 में 'उद्योग' का अर्थ निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया माना गया था और इसमें कच्चा माल अथवा उत्पादों का वितरण सम्मिलित नहीं था। यह तर्क दिया गया कि "उद्योग" शब्द व्यापक अर्थ वाला है और इसकी व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि इसमें केवल निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया ही नहीं, बल्कि उससे पूर्व की गतिविधियाँ जैसे कच्चे माल का अधिग्रहण तथा उसके पश्चात की गतिविधियाँ जैसे उस उद्योग के तैयार उत्पादों का निस्तारण भी सम्मिलित हों। *किन्तु इस तर्क को स्वीकार नहीं किया गया।* श्री दफ्तरी द्वारा यह तर्क दिया गया कि यदि उत्पादन की प्रक्रिया को "उद्योग" माना जाए तो उसमें मशीनरी अथवा यांत्रिक साधनों का होना आवश्यक है। परंतु हमें ऐसा कोई कारण नहीं दिखता कि विधायी सूचियों में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द के अर्थ पर ऐसी सीमा आरोपित की जाए। इसी प्रकार श्री पालखीवाला द्वारा यह तर्क दिया गया कि स्वर्ण आभूषणों का निर्माण उद्योग नहीं है क्योंकि इसमें व्यक्तिगत कला, कारीगरी एवं सौंदर्यबोध का प्रयोग होता है। किन्तु केवल कौशल या कला का प्रयोग निर्णायक कारक नहीं है और इससे स्वर्ण आभूषणों का निर्माण संबंधित विधायी प्रविष्टियों के दायरे से बाहर नहीं हो जाता। यह विधि का स्थापित सिद्धांत है कि तीनों सूचियों में प्रविष्टियाँ केवल विधायी शीर्ष अथवा विधायन के क्षेत्र हैं और वे उस क्षेत्र का निर्धारण करती हैं जिसमें उपयुक्त विधानमंडल कार्य

कर सकता है। विधायी प्रविष्टियों की व्यापक एवं उदार व्याख्या की जानी चाहिए, क्योंकि विषयों का आवंटन किसी वैज्ञानिक या तार्किक परिभाषा के रूप में नहीं, बल्कि व्यापक एवं समग्र श्रेणियों के रूप में किया गया है। तथापि, इस वाद के प्रयोजनार्थ "उद्योग" शब्द की सटीक परिभाषा करना या उसके सभी पहलुओं का विस्तृत उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। किन्तु हम वर्तमान वाद में इस बात से संतुष्ट हैं कि *भारत में स्वर्णकारों द्वारा स्वर्ण आभूषणों का निर्माण व्यापार या निर्माण के लिए "व्यवस्थित उत्पादन की प्रक्रिया"* है और इस प्रकार यह संबंधित विधायी प्रविष्टियों में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द के अंतर्गत आता है। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि विवादित अधिनियम बनाते समय संसद ने सूची-I की प्रविष्टि 52 तथा सूची-III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आने वाले विषयों के संबंध में अपनी विधायी शक्ति का वैध रूप से प्रयोग किया।

(मेरा जोर)

इस निर्णय को *टीका रामजी* में प्रतिपादित 'उद्योग' शब्द की व्याख्या या उसके तर्क को कम करने अथवा उससे विचलित होने के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता। ऐसा करने का इसका कोई उद्देश्य भी नहीं है। वास्तव में न्यायालय ने *टीका रामजी* में 'उद्योग' की परिभाषा की पुनः पुष्टि की। सूची-II की प्रविष्टि 27 से संबंधित टिप्पणी को उस प्रविष्टि की भाषा के संदर्भ में समझा जाना चाहिए, जो इस प्रकार है:

"वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण, समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के प्रावधानों के अधीन।"

यह राज्यों को सामान्यतः वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के संबंध में विधायन करने का अधिकार प्रदान करता है। समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 विशेष रूप से उन उद्योगों के उत्पादों के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण से संबंधित है, जिनका नियंत्रण संघ द्वारा विधि के माध्यम से लोकहित में आवश्यक घोषित किया गया है, जैसा कि सूची-I की प्रविष्टि

7 अथवा 52 में वर्णित है। यदि सूची-I की प्रविष्टि 7 एवं 52 में 'उद्योग' शब्द इन सभी क्षेत्रों को आच्छादित करता, तो नियंत्रित उद्योगों के उत्पादों के व्यापार एवं वाणिज्य तथा उनके उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के लिए समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 में पृथक प्रावधान करना आवश्यक न होता। इसी प्रकार, यदि सूची-II की प्रविष्टि 24 में 'उद्योग' शब्द पर्याप्त होता, तो उसी सूची की प्रविष्टि 27 में वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के लिए पृथक शीर्षक रखने की आवश्यकता क्यों होती, जब तक कि यह न माना जाए कि संविधान निर्माताओं ने 'अयोग्यता, शुद्धता का अभाव एवं पुनरुक्ति' का परिचय दिया है। 'सामान्य' एवं 'विशेष' शब्दों की अवधारणा उस संदर्भ पर निर्भर करती है जिसमें उनका प्रयोग किया जाता है। सूची-II की प्रविष्टि 27 निस्संदेह एक सामान्य प्रविष्टि है, किन्तु केवल समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के संदर्भ में, जो विशेष रूप से नियंत्रित उद्योगों के उत्पादों के व्यापार एवं वाणिज्य आदि से संबंधित है। अंततः, उद्धृत अंश से यह स्पष्ट है कि बनथिया वाद में यह माना गया कि गोल्ड एक्ट सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत विधायी रूप से सक्षम था क्योंकि वह स्वर्ण के *निर्माण अथवा उत्पादन* की प्रक्रिया से संबंधित था, अर्थात् वह *टीका रामजी* में परिभाषित 'उद्योग' के अंतर्गत आता था।

अपीलकर्ताओं का यह तर्क कि टीका रामजी ने 'उद्योग' शब्द की संकीर्ण व्याख्या की क्योंकि वह निर्णय उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 के संदर्भ में दिया गया था, निर्णय की गलत समझ पर आधारित है। केवल इस कारण कि *टीका रामजी* में यह पाया गया कि विचाराधीन केंद्रीय अधिनियम सूची-III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आता है, न कि सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत, इससे सूची-I की प्रविष्टि 52 के दायरे पर उसके प्रामाणिक प्रतिपादन में कोई कमी नहीं आती। वास्तव में यह निष्कर्ष ही इस आधार पर निकाला गया कि संबंधित केंद्रीय अधिनियम सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत नहीं आता। जो व्याख्या की गई थी, वह सूची-I की प्रविष्टि 52 के दायरे तथा उसके अंतर्गत की जाने वाली घोषणा की सीमा की थी। यह तथ्य कि उक्त घोषणा उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951

में निहित थी, अप्रासंगिक है और इससे उस प्रविष्टि के दायरे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह भी महत्वपूर्ण है कि *बनथिया* का मामला, जिसे अपीलकर्ता 'उद्योग' के व्यापक अर्थ को स्वीकार करने वाला बताते हैं, वह भी ऐसा ही मामला था जिसमें सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा उसी अधिनियम के अंतर्गत की गई थी।

बनथिया के वाद पर संविधान पीठ के पश्चातवर्ती निर्णय *मेसर्स फतेहचंद हिम्मतलाल एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य*, [1977] 2 एससीसी 670 में विचार किया गया तथा उसकी व्याख्या की गई। *बनथिया* के वाद के संदर्भ में न्यायालय ने कहा:

> ".....हम उस निर्णय में ऐसा कुछ नहीं पाते जो इस स्थिति का खंडन करता हो कि यद्यपि गोल्ड कंट्रोल अधिनियम सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आता है, तथापि इस कारण से राज्य सूची पूर्णतः निष्क्रिय नहीं हो जाती, जिससे कि उस सूची के अंतर्गत आने वाले विषयों पर, यद्यपि वे स्वर्ण लेन-देन से आकस्मिक रूप से संबंधित हों, विधायन किया जा सके।"

अपने तर्कों को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए अपीलकर्ताओं ने एक प्रकार का आशंकात्मक तर्क प्रस्तुत किया। यह कहा गया कि यदि 'उद्योग' का संकीर्ण अर्थ लिया जाए, तो सूची-I की प्रविष्टि 7 के अंतर्गत संसद द्वारा यह घोषणा किए जाने के बावजूद कि कोई उद्योग देश की रक्षा या युद्ध संचालन के लिए आवश्यक है, संसद कच्चे माल की आपूर्ति या तैयार उत्पाद के वितरण के संबंध में विधायन करने के लिए सक्षम नहीं होगी। ऐसा तर्क व्याख्या के प्रश्न से संबंधित नहीं है। किसी भी स्थिति में यह समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत संसद की उच्चतर शक्तियों तथा राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान अनुच्छेद 249, 250, 251 एवं 252 के अंतर्गत संसद की प्रधान शक्तियों की उपेक्षा करता है।

संक्षेप में: सूची-I की प्रविष्टि 52 के प्रयोजनार्थ 'उद्योग' शब्द को *टीका रामजी* द्वारा दृढ़तापूर्वक केवल निर्माण अथवा उत्पादन की प्रक्रिया तक सीमित किया गया है। पश्चातवर्ती निर्णयों, जिनमें अन्य संविधान पीठों के निर्णय भी सम्मिलित हैं, ने इस बात की पुनः पुष्टि

की है कि *टीका रामजी* का निर्णय 'उद्योग' शब्द को प्रामाणिक रूप से "निर्माण अथवा उत्पादन" के रूप में परिभाषित करता है और इसमें उद्योग में प्रयुक्त कच्चा माल अथवा उत्पादों का वितरण सम्मिलित नहीं है। संवैधानिक ढाँचे तथा न्यायिक दृष्टांतों के आधार पर 'उद्योग' शब्द के व्यापक अर्थ को स्वीकार करना संभव नहीं है। किसी अन्य संदर्भ में इस शब्द का जो भी अर्थ हो, संवैधानिक संदर्भ में इसका अर्थ "निर्माण अथवा उत्पादन" ही होगा।

टीका रामजी में विकसित नकारात्मक परीक्षण को लागू करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि सूची-II की प्रविष्टि 24 तथा परिणामस्वरूप सूची-I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द का अर्थ सूची-II की प्रविष्टि 28 एवं 66 को सम्मिलित नहीं करता, जिन्हें स्पष्टतः राज्य की अनन्य विधायी शक्ति के अंतर्गत पृथक क्षेत्र के रूप में चिह्नित किया गया है। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, प्रविष्टि 28 'बाजार एवं मेले' से संबंधित है तथा प्रविष्टि 66 वर्तमान संदर्भ में बाजार एवं मेलों के संबंध में शुल्क अधिरोपित करने के अधिकार से संबंधित है। सूची-I की प्रविष्टि 52, सूची-II की प्रविष्टि 28 को अधिभूत नहीं करती और न ही प्रविष्टि 28 को प्रविष्टि 52 के अधीन बनाया गया है, जैसा कि प्रविष्टि 24 के साथ किया गया है। इस न्यायालय ने *बेलसंड शुगर* (उपरोक्त) में भी यह स्वीकार किया है कि सूची-II की प्रविष्टि 28 अपने स्वतंत्र क्षेत्र में कार्य करती है और सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत उद्योग से संबंधित किसी भी विधायन से प्रभावित नहीं हो सकती।

यदि 'उद्योग' में 'बाजार एवं मेले' सम्मिलित नहीं हैं, तो यह आवश्यक है कि 'बाजार एवं मेले' का अर्थ निर्धारित किया जाए। 'बाजार' को सामान्यतः इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है—"निश्चित समय एवं स्थान पर सार्वजनिक रूप से विक्रय हेतु प्रस्तुत वस्तुओं अथवा पशुधन की खरीद-बिक्री के लिए लोगों का एकत्र होना।[9]" 'मेला' का न्यायिक अर्थ है —"खरीदारों एवं विक्रेताओं का किसी स्थान पर, सामान्यतः विक्रय एवं क्रय के उद्देश्य से,

---

9 ऑक्सफोर्ड इंग्लिश शब्दकोष

समय-समय पर या परंपरा द्वारा निर्धारित अवसरों पर एकत्र होना।[10] 'मेला' को न्यायिक रूप से इस प्रकार परिभाषित किया गया है—"खरीदारों और विक्रेताओं का किसी स्थान पर समय-समय पर, सामान्यतः क्रय और विक्रय के उद्देश्य से एकत्र होना, जो प्रथा के अनुसार निर्धारित होता है।"[11] बाजार और मेले के बीच अंतर उनकी आवृत्ति में प्रतीत होता है; अर्थात् जहाँ बाजार एक नियमित या स्थायी व्यापार स्थल हो सकता है, वहीं मेला अस्थायी होता है। सामान्य विधि में मेले और बाजार ऐसे अधिकार भी थे जिनके अंतर्गत खरीदारों और विक्रेताओं के एकत्र होने तथा वस्तुओं के निपटान का अधिकार प्रदान किया जाता था।[12] इसमें बाजार में वस्तुओं की बिक्री पर खरीदार से शुल्क या कर वसूलने का अधिकार भी सम्मिलित था।[13] प्रविष्टि 28 में 'बाजार' शब्द का प्रयोग जिस अर्थ में किया गया है, उसमें न केवल ऐसा अधिकार सम्मिलित है, बल्कि स्वयं बाजार स्थल, 'खरीदारों और विक्रेताओं का समूह' तथा इन सभी का विनियमन भी शामिल है।

'मार्केट्स' शब्द का उल्लेख सूची-I की प्रविष्टि 48 में भी हुआ है—"स्टॉक एक्सचेंज एवं फ्यूचर मार्केट्स"। इस न्यायालय की संविधान पीठ ने *वेवरली जूट मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम रेमन एंड कंपनी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड,* [1963] 3 एससीआर 209 में यह तर्क अस्वीकार किया कि 'मार्केट्स' शब्द को केवल "ऐसे स्थान" तक सीमित किया जाना चाहिए जहाँ सामान्य जनता के खरीदार एवं विक्रेता स्वतंत्र रूप से एकत्र हों और जहाँ कोई भी विक्रेता अपनी वस्तु विक्रय हेतु प्रस्तुत कर सके तथा कोई भी खरीदार उसे खरीद सके।

यह कहा गया कि:

---

10 ऑक्सफोर्ड इंग्लिश शब्दकोष।

11 अमृतसर म्युनिसिपैलिटी बनाम पंजाब राज्य, एआईआर (1969) एससी 1100, 1104।

12 हाल्सबरीज़ लॉज़ ऑफ इंग्लैंड (चतुर्थ संस्करण), खंड 29, कंडिका 601।

13 वही, कंडिका 629।

"निस्संदेह 'बाजार' का सामान्य अर्थ वह स्थान होता है जहाँ व्यापारिक लेन-देन किया जाता है। संभवतः उस समय इसका अर्थ केवल इतना ही था जब व्यापार विकसित नहीं हुआ था और लेन-देन निर्धारित स्थानों पर ही होते थे। किन्तु वाणिज्य के विकास के साथ, सौदे प्रायः पत्राचार के माध्यम से भी संपन्न होने लगे और 'बाजार' शब्द का अर्थ उसी अनुपात में विस्तृत होता गया। आधुनिक परिभाषा में 'बाजार' का अर्थ न केवल वह स्थान है जहाँ व्यापार होता है, बल्कि स्वयं व्यापार भी है।"

अब प्रश्न यह है कि क्या बाजार अधिनियम 'बाजार' शब्द की इस परिभाषा के अंतर्गत आता है? विनियमित बाजारों की स्थापना को लंबे समय से इस देश में कृषि विकास की सुव्यवस्थित योजना के लिए एक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में स्वीकार किया गया है।[14] बिहार बाजार अधिनियम, 1960 को अधिनियमित करने के उद्देश्यों और कारणों में यह कहा गया है कि कृषि एवं संबद्ध वस्तुओं के बाजारों का समुचित संगठन किया जाए ताकि कृषक को उसके उत्पाद के लिए उपभोक्ता द्वारा दिए गए मूल्य का उचित हिस्सा प्राप्त हो सके, इसके लिए बिचौलियों को समाप्त करने अथवा कठोर नियंत्रण में रखने का प्रयास किया जाए। जो विषय सामान्य विधि में निजी लाभ का स्रोत था, वह बाजार अधिनियम के माध्यम से सार्वजनिक/नागरिक चिंता का विषय बन गया है, अर्थात् कृषि उपज के विपणन हेतु विनियमित बाजारों की स्थापना।

बाजार अधिनियम के प्रावधानों का संक्षेप में उल्लेख किया जाता है। इस अधिनियम के अंतर्गत राज्य सरकार धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी कर यह घोषित करती है कि वह निर्दिष्ट क्षेत्र में निर्दिष्ट कृषि उपज के क्रय, विक्रय, भंडारण तथा प्रसंस्करण का विनियमन करना चाहती है। "कृषि उपज" को धारा 2(6) में इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

---

14 (भारत में कृषि पर रॉयल कमीशन की रिपोर्ट, 1929 देखें)।

"कृषि, उद्यानिकी, बागान, पशुपालन, वानिकी, रेशम-उद्योग, मत्स्य-पालन से संबंधित सभी उत्पाद, चाहे वे प्रसंस्कृत हों या अप्रसंस्कृत, निर्मित हों या नहीं, तथा अनुसूची में निर्दिष्ट पशुधन या कुक्कुट भी इसमें सम्मिलित हैं।"

अनुसूची के मद XI में तंबाकू का उल्लेख किया गया है। धारा 4 के अधीन राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा उस क्षेत्र को मार्केट एरिया घोषित करती है। इस घोषणा की तिथि से, धारा 4 के अनुसार, कोई भी व्यक्ति या प्राधिकारी उस क्षेत्र में किसी भी अधिसूचित कृषि उपज के क्रय, विक्रय, भंडारण या प्रसंस्करण हेतु कोई स्थान स्थापित नहीं कर सकता या संचालित नहीं कर सकता, जब तक कि वह बाजार अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप न हो। धारा 5 के अधीन राज्य सरकार किसी भी भवन या क्षेत्र को मुख्य बाजार यार्ड घोषित कर सकती है। धारा 6 से 15 तथा 17 से 27-क तक मार्केट समितियों की स्थापना, उनकी संरचना एवं कार्यों से संबंधित हैं। ये समितियाँ धारा 33क के अधीन स्थापित बिहार कृषि विपणन बोर्ड के पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण में कार्य करती हैं।

धारा 15[15] के अनुसार, अधिसूचित कृषि उपज का क्रय या विक्रय मार्केट एरिया में केवल निर्धारित मुख्य बाजार यार्ड या उप-बाजार यार्ड में ही किया जा सकता है, जब तक कि वह खुदरा विक्रय, व्यक्तिगत उपभोग या मार्केटिंग बोर्ड द्वारा धारा 15(1) या (2) के अंतर्गत छूट प्राप्त न हो। धारा 15(2) के अनुसार क्रय-विक्रय की विधि खुली नीलामी या

---

15 कृषि उपज की बिक्री—

(1) धारा 4 की उपधारा (1) के अधीन अधिसूचित किसी भी कृषि उपज को मार्केट एरिया में किसी भी व्यक्ति द्वारा केवल निर्धारित मुख्य बाजार यार्ड या उप-बाजार यार्ड में ही खरीदा या बेचा जाएगा, सिवाय उस मात्रा के जो खुदरा विक्रय या व्यक्तिगत उपभोग के लिए निर्धारित की जाए।

(2) ऐसे क्षेत्र में उक्त कृषि उपज का क्रय-विक्रय, किसी भी विधि के प्रावधान के होते हुए भी, खुली नीलामी या निविदा प्रणाली द्वारा किया जाएगा, सिवाय उन वर्गों की उपज के जिन्हें बोर्ड द्वारा छूट प्रदान की गई हो।

निविदा प्रणाली होगी, सिवाय उन वस्तुओं के जिन्हें बोर्ड द्वारा छूट दी गई हो। धारा 18(2) मार्केट समिति को प्रसंस्करण, भंडारण या कृषि उपज से संबंधित कार्य करने वाले व्यक्तियों को अनुज्ञप्ति जारी करने तथा बाजार यार्ड में प्रवेश का विनियमन करने का अधिकार प्रदान करती है और बिना वैध अनुज्ञप्ति के व्यापार करने वालों के विरुद्ध कार्रवाई का भी अधिकार देती है। धारा 27 मार्केट समिति को बाजार क्षेत्र में खरीदी या बेची गई कृषि उपज पर निर्दिष्ट दरों पर खरीदार से बाजार शुल्क वसूलने का अधिकार देती है। शेष धाराओं पर विचार आवश्यक नहीं है क्योंकि वे वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिक नहीं हैं। हमारा मुख्य ध्यान धारा 15 और विशेष रूप से धारा 27 पर है। बाजार क्षेत्र एवं बाजार यार्ड की स्थापना तथा उन क्षेत्रों/यार्डों में उपलब्ध सुविधाओं के उपयोग का विनियमन तथा उस पर शुल्क लगाना स्थानीय महत्व का विषय है, जो सूची-II की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत आता है और इस प्रकार राज्य की विधायी क्षमता के भीतर है। यदि बाजार क्षेत्र या बाजार यार्ड का कोई भाग तंबाकू के क्रय या विक्रय के लिए उपयोग किया जाता है, तो वह भी राज्य की विधायी क्षमता के अंतर्गत होगा। इसके विपरीत मानना सूची-II की प्रविष्टि 28 एवं 66 के अंतर्गत राज्यों की विशिष्ट विधायी शक्तियों की उपेक्षा करना होगा। बाजार अधिनियम न तो तंबाकू के "निर्माण या उत्पादन" का विनियमन करता है (मानते हुए कि कृषि उपज का निर्माण संभव है) और न ही यह सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आने वाले किसी विषय में हस्तक्षेप करता है। इस अधिनियम के सभी प्रावधान, उपरोक्त चर्चा के अनुसार, सूची-II की प्रविष्टि 28 से संबंधित हैं। अतः राज्य तंबाकू के संबंध में आकस्मिक रूप से विधायन करने में अक्षम नहीं था और "प्रविष्टि 52 का अर्थ-विस्तार राज्य विधानमंडल को उसके अपने क्षेत्राधिकार के विषयों पर विधायन करने से नहीं रोकता, जब तक कि वह सीधे उद्योग के मूल क्षेत्र में प्रवेश न करे।[16]" मेरे मत में, धारा 15 एवं 27 वस्तुतः सूची-II की प्रविष्टि 28 एवं 66 से संबंधित हैं और राज्य द्वारा विधिवत् अधिनियमित किए गए हैं। यह भी विवादित नहीं है कि धारा 27

16

के अंतर्गत लिया गया शुल्क प्रदान की गई सेवाओं एवं सुविधाओं के लिए प्रतिफल है। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि संसद 'बाजार एवं मेले' की स्थापना या विनियमन के संबंध में, जैसा कि सूची-II की प्रविष्टि 28 में वर्णित है, तंबाकू के संदर्भ में भी विधायन करने में सक्षम नहीं है। हाँ, वह आकस्मिक रूप से राज्य के विधायी क्षेत्र में प्रवेश कर सकती है, बशर्ते (1) ऐसा प्रवेश वैध रूप से पारित प्रावधानों का अभिन्न अंग हो, तथा (2) राज्य ने अपने क्षेत्र में पहले से परस्पर विरोधी विधिक प्रावधानों द्वारा पूर्ण रूप से उस क्षेत्र को अधिभूत न किया हो।

आइए तंबाकू अधिनियम के क्षेत्र पर विचार करें। तंबाकू अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण से स्पष्ट होता है कि यह अधिनियम इसलिए आवश्यक था क्योंकि भारत विश्व में तंबाकू का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक है, तंबाकू निर्यातक देशों में छठे स्थान पर है तथा वर्जीनिया तंबाकू का दूसरा सबसे बड़ा निर्यातक है। संसद का स्पष्ट उद्देश्य ऐसे उपाय करना था जिससे तंबाकू, विशेषकर वर्जीनिया तंबाकू, देश और विदेश के बाजारों की मांग को गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों दृष्टियों से पूरा कर सके। यह अधिनियम सम्पूर्ण भारत में लागू होता है, किन्तु इसे सभी राज्यों में पूर्ण रूप से प्रवर्तित नहीं किया गया है। अध्याय I में प्रथम तीन धाराएँ सम्मिलित हैं। धारा 1 की उपधारा (3) के अनुसार यह अधिनियम उन तिथियों से लागू होगा जिन्हें केंद्र सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट करे; साथ ही यह भी प्रावधान है कि अधिनियम के विभिन्न उपबंधों तथा विभिन्न राज्यों या उनके भागों के लिए भिन्न-भिन्न तिथियाँ निर्धारित की जा सकती हैं। धारा 2 में सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत तंबाकू उद्योग के संबंध में आवश्यक घोषणा की गई है।

अध्याय II, जिसमें धारा 4 से 8 सम्मिलित हैं, तंबाकू बोर्ड की स्थापना एवं उसके कार्यों से संबंधित है। धारा 8(1) बोर्ड पर "तंबाकू उद्योग के विकास को प्रोत्साहित करने" का दायित्व डालती है। उपधारा (2) में कुछ विशिष्ट उपायों का उल्लेख है जो बोर्ड द्वारा किए जा सकते हैं। प्रासंगिक उपबंध निम्नलिखित हैं:

"8(2)(क) .....

(ख) भारत तथा विदेश में वर्जीनिया तंबाकू के बाजार पर निरंतर निगरानी रखना तथा यह सुनिश्चित करना कि उत्पादकों को उचित एवं लाभकारी मूल्य प्राप्त हो और वस्तु के मूल्य में अत्यधिक उतार-चढ़ाव न हो;

(ग) विद्यमान बाजारों का रख-रखाव एवं सुधार तथा भारतीय वर्जीनिया तंबाकू एवं उसके उत्पादों के लिए विदेशों में नए बाजारों का विकास करना तथा विदेशों में मांग के अनुरूप विपणन रणनीति बनाना, जिसमें सीमित ब्रांड नामों के अंतर्गत समूह विपणन भी सम्मिलित है;

(गग) केंद्र सरकार की पूर्व स्वीकृति से बोर्ड द्वारा वर्जीनिया तंबाकू की बिक्री हेतु नीलामी मंच की स्थापना करना तथा ऐसे मंचों पर बोर्ड द्वारा नीलामकर्ता के रूप में कार्य करना, उन शर्तों के अधीन जो केंद्र सरकार निर्दिष्ट करे;

.....

(च) भारत में वर्जीनिया तंबाकू के विपणन तथा उसके निर्यात का विनियमन करना, उत्पादकों, निर्माताओं, व्यापारियों तथा राष्ट्र के हितों को ध्यान में रखते हुए;

(ज) उत्पादकों के हितों की रक्षा के लिए आवश्यकता या उपयुक्तता होने पर उनसे वर्जीनिया तंबाकू की खरीद करना तथा परिस्थितियों के अनुसार उसका भारत या विदेश में निपटान करना; ....."

अध्याय III (धारा 10 से 15) तंबाकू के उत्पादन एवं निपटान के विनियमन से संबंधित है, जिसमें केवल उत्पादकों (जिसमें नर्सरी उत्पादक भी सम्मिलित हैं—धारा 10, 10-क) ही नहीं, बल्कि क्योरर्स (धारा 11), प्रोसेसर एवं निर्माता (धारा 11-क), ग्रेडर एवं भंडारक (धारा 11-ख) तथा निर्यातक, व्यापारी, पैकर या नीलामकर्ता (धारा 12) के पंजीकरण/अनुज्ञप्ति का भी प्रावधान है।

विशेष रूप से धारा 13 एवं 13क प्रासंगिक हैं, जो यह उपबंध करती हैं कि वर्जीनिया तंबाकू की बिक्री पंजीकृत नीलामी मंचों या बोर्ड द्वारा स्थापित नीलामी मंचों पर ही होगी तथा पंजीकृत व्यापारियों एवं निर्यातकों पर यह दायित्व डाला गया है कि वे तंबाकू की खरीद केवल ऐसे नीलामी मंचों से ही करें। तथापि, जिन राज्यों में धारा 13 लागू नहीं है, वहाँ धारा 13ख के अंतर्गत तंबाकू क्रय करने वाले व्यापारियों को संपूर्ण मात्रा का पूरा मूल्य देना होगा तथा उन्हें बोर्ड द्वारा निर्दिष्ट अनुचित प्रथाओं का सहारा लेने से प्रतिबंधित किया गया है।

धारा 14 पंजीकरण के प्रपत्रों से संबंधित है तथा धारा 15 निरीक्षण की शक्ति प्रदान करती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि प्रपत्रों में दी गई जानकारी सही है। इन धाराओं के अतिरिक्त, अपीलकर्ताओं के अनुसार विशेष रूप से धारा 14-क तंबाकू की बिक्री पर शुल्क लगाने के क्षेत्र को आच्छादित करती है, जो इस प्रकार है:

> "14-क(1) जहाँ वर्जीनिया तंबाकू की बिक्री इस अधिनियम के अंतर्गत बोर्ड द्वारा स्थापित किसी नीलामी मंच पर की जाती है, वहाँ बोर्ड या उसके द्वारा इस संबंध में अधिकृत कोई अधिकारी, ऐसी बिक्री से संबंधित सेवाओं के लिए, उस दर पर जो केंद्र सरकार समय-समय पर राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट करे (जो तंबाकू के मूल्य के दो प्रतिशत से अधिक न हो), शुल्क अधिरोपित कर सकेगा;
>
> (2) उपधारा (1) के अंतर्गत अधिरोपित शुल्क को बोर्ड या उसका अधिकारी विक्रेता तथा क्रेता दोनों से समान रूप से, निर्धारित विधि के अनुसार, वसूल करेगा।"

अध्याय IV एवं V के प्रावधानों पर विचार आवश्यक नहीं है क्योंकि वे बाजार अधिनियम से भिन्न विषयों से संबंधित हैं। अंतिम अध्याय अर्थात् अध्याय VI में दो धाराएँ उल्लेखनीय हैं—धारा 30(1), जो केंद्र सरकार को कुछ क्षेत्रों में इस अधिनियम के प्रावधानों को निलंबित करने की अनुमति देती है, तथा धारा 31, जो इस प्रकार है:

> "31. इस अधिनियम के प्रावधान वर्तमान में प्रवर्तित किसी अन्य विधि के प्रावधानों के अतिरिक्त होंगे, न कि उनके अपवादस्वरूप।"

तंबाकू अधिनियम का उद्देश्य देश में उत्पादित तंबाकू की गुणवत्ता और मात्रा पर नियंत्रण रखना है, अंतरराष्ट्रीय बाजारों को ध्यान में रखते हुए। तंबाकू की बिक्री के लिए घरेलू बाजारों का स्थान निर्धारित करना इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक सहगामी नहीं कहा जा सकता। यदि मान भी लिया जाए कि ऐसा है, तो भी दोनों अधिनियमों के कथित परस्पर विरोधी प्रावधानों को उनके प्रावधानों की युक्तिसंगत और व्यावहारिक व्याख्या द्वारा समन्वित किया जा सकता है। तंबाकू अधिनियम में "बाजार" और "विपणन" शब्दों का प्रयोग, धारा 8 सहित, उस अर्थ में नहीं है जिसमें यह शब्द बाजार अधिनियम में प्रयुक्त हुआ है। "वर्जीनिया तंबाकू का बाजार", "भारत के बाहर नए बाजारों का विकास" आदि वाक्यांशों से स्पष्ट है कि इस शब्द का प्रयोग "आपूर्ति और मांग द्वारा नियंत्रित विक्रय, विशेषकर किसी वस्तु या सेवा की मांग" के अर्थ में किया गया है—इस वाद में तंबाकू के संदर्भ में।[17] तंबाकू अधिनियम का संबंध 'कहाँ' से नहीं बल्कि 'कैसे' तंबाकू का निपटान किया जाता है, इससे है। यहाँ तक कि जब तंबाकू अधिनियम नीलामी मंचों की स्थापना की बात करता है, तब भी वह यह नहीं बताता—और न ही बता सकता है—कि वे नीलामी मंच कहाँ स्थापित किए जाएँगे।

चूँकि बाजारों का स्थान निर्धारित करना राज्यों के विशिष्ट अधिकार क्षेत्र में आता है, अतः तंबाकू अधिनियम के अंतर्गत कार्य करने वाले प्राधिकारियों को स्थानीय/नगरपालिका कानूनों का पालन करना होगा और नीलामी मंच केवल अनुमत क्षेत्रों में ही स्थापित करने होंगे। यदि बाजार अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध सुविधाओं का उपयोग किया जाता है, तो उन सुविधाओं के लिए शुल्क देना होगा और बाजार अधिनियम के अंतर्गत शुल्क अधिरोपण एवं वसूली के लिए नियुक्त प्राधिकारी ऐसा करने के लिए सक्षम होंगे। यदि तंबाकू अधिनियम के अंतर्गत नीलामी मंचों पर अतिरिक्त सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं, तो धारा 14-क के अंतर्गत शुल्क लिया जा सकता है। इस प्रकार दोनों अधिनियमों के अंतर्गत शुल्क लगाने का अधिकार आवश्यक रूप से परस्पर विरोधी नहीं है; यह वैकल्पिक न होकर अतिरिक्त है। यदि

---

17 द न्यू शॉर्टर ऑक्सफोर्ड इंग्लिश शब्दकोष।

यह भी संभव न हो और कोई वास्तविक टकराव हो, तो बाजार अधिनियम के प्रावधान प्रभावी होंगे, न कि तंबाकू अधिनियम के।

यहाँ तक कि यदि यह माना जाए कि बाजार अधिनियम की धारा 15 एवं 27 सूची-II की प्रविष्टि 28 एवं 66 के अंतर्गत नहीं आतीं और वे प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत आती हैं, तब भी ये प्रावधान सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद के लिए आरक्षित क्षेत्र में अतिक्रमण नहीं करते। वस्तुओं की आपूर्ति एवं वितरण तथा उनसे संबंधित व्यापार एवं वाणिज्य पर राज्य का विधायन (प्रविष्टि 26 एवं 27) केवल तभी केंद्रीय अधिनियम के अधीन होगा जब वह समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत हो, न कि सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत। इसके अतिरिक्त, चाहे तंबाकू अधिनियम का कोई भाग 'उद्योग' (प्रविष्टि 52) के अंतर्गत आता हो या नहीं, *टीका रामजी* के सिद्धांत के अनुसार तंबाकू के निपटान से संबंधित प्रावधान उस प्रविष्टि के अंतर्गत नहीं आते। अतः प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा इन प्रावधानों को आच्छादित नहीं करती और राज्य प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत तंबाकू के संबंध में विधायन करने के लिए स्वतंत्र हैं। मैं यह निर्णय करना आवश्यक नहीं समझता कि तंबाकू अधिनियम के वे प्रावधान जो बिक्री से संबंधित हैं, क्या समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत उचित ठहराए जा सकते हैं, क्योंकि अपीलकर्ताओं ने इस पर तर्क नहीं किया और न ही इस पीठ के समक्ष अधिनियम की वैधानिकता का प्रश्न प्रस्तुत है।

यह मानते हुए कि तंबाकू अधिनियम का अध्याय III सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आता है, तब भी संसद का उद्देश्य बाजार अधिनियम के किसी भी भाग को निरस्त करना नहीं था। धारा 31 के माध्यम से स्पष्ट किया गया है कि केंद्रीय अधिनियम संपूर्ण क्षेत्र को अधिगृहीत नहीं करता और राज्य विधायन के लिए स्थान छोड़ता है; यह स्पष्ट किया गया है कि इसके प्रावधान अन्य प्रचलित कानूनों के अतिरिक्त होंगे, न कि उनके प्रतिकूल। इस धारा का महत्व इस तथ्य से और बढ़ जाता है कि अधिकांश बाजार अधिनियम तंबाकू अधिनियम के लागू होने से पूर्व ही अस्तित्व में थे। ऐसे 'बचाव खंड' की दो प्रकार से

व्याख्या की जा सकती है—पहला, जैसा कि *एम. करुणानिधि बनाम भारत संघ*, [1979] 3 एससीसी 431 में कहा गया कि यह स्पष्ट रूप से प्रमुख विधायिका की मंशा को दर्शाता है और यह तर्क की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ता कि राज्य अधिनियम किसी प्रकार से केंद्रीय अधिनियम से प्रतिकूल है; दूसरा, इसे इस प्रकार भी पढ़ा जा सकता है कि प्रमुख अधिनियम अपने अंतर्गत अधीनस्थ विधि के कथित विरोधी प्रावधानों को भी समाहित कर लेता है। किसी भी स्थिति में, धारा 31 के स्पष्ट शब्द तथा न्यायालयों का दायित्व कि वे विधायन का समन्वय करें, राज्य द्वारा लगाए गए बाजार शुल्क की संवैधानिक वैधता को स्वीकार करने की ओर ही ले जाते हैं।

बाजार शुल्क के अधिरोपण को बनाए रखने के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण परिस्थिति यह है कि तंबाकू अधिनियम के अध्याय III के अनेक प्रावधान—विशेषकर नीलामी मंचों की स्थापना से संबंधित धाराएँ 13 और 13क तथा तंबाकू की बिक्री पर शुल्क अधिरोपण से संबंधित धारा 14क—कर्नाटक राज्य को छोड़कर भारत के किसी भी राज्य में लागू नहीं किए गए हैं। मैं पूर्व में ही यह कारण बता चुका हूँ कि तंबाकू अधिनियम में तंबाकू की बिक्री से संबंधित प्रावधान 'उद्योग' की परिभाषा के अंतर्गत नहीं आते और न ही वे सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा से आच्छादित हैं। किन्तु तर्कार्थ यदि यह मान भी लिया जाए कि तंबाकू की बिक्री 'उद्योग' की परिभाषा में आती है, तो भी जब तक केंद्र सरकार प्रभावी विधायन द्वारा उस क्षेत्र को वास्तव में अधिगृहीत नहीं करती, तब तक राज्य विधानमंडल के लिए सूची-II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत उस क्षेत्र में विधायन करना खुला रहेगा। ऐसी व्याख्या स्वीकार करना कठिन है जो राज्यों को केवल बाजार क्षेत्रों के भीतर तंबाकू की बिक्री की व्यवस्था करने तथा बाजार शुल्क अधिरोपित करने के अधिकार से वंचित कर दे, जबकि संसद न तो वर्तमान में और न ही संभवतः भविष्य में धाराएँ 13, 13क और 14क को उन राज्यों में लागू करने का प्रयास करती है। यह दृष्टिकोण संविधान पीठ के निर्णय *ईश्वरि खेतान शुगर मिल्स (प्रा.) लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* (उपरोक्त) से भी समर्थित है,

जिसमें सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत की गई घोषणा के प्रभाव की व्याख्या करते हुए कहा गया कि नियंत्रण ग्रहण करने के लिए बनाया गया विधायन, जिसमें ऐसी घोषणा निहित हो, उस नियंत्रण की सीमा को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना चाहिए। अतः संसद द्वारा ऐसी घोषणा के आधार पर प्राप्त किए जाने वाले नियंत्रण की मात्रा एवं सीमा उसी विधायन पर निर्भर करेगी, जो उस नियंत्रण की सीमा को स्पष्ट करता है।

बेलसंड शुगर (उपरोक्त) वाद में भी एक विवाद बाजार अधिनियम और टी अधिनियम, 1953 के प्रावधानों के बीच कथित टकराव से संबंधित था। वहाँ भी टी अधिनियम की धारा 30 के अंतर्गत चाय के क्रय-विक्रय से संबंधित आदेश जारी किए जाने की संभावना का प्रावधान था। यह तर्क कि केवल ऐसे नियंत्रण आदेश के भविष्य में जारी किए जाने की संभावना ही राज्य विधानमंडल को उस क्षेत्र से बाहर कर देने के लिए पर्याप्त है, निम्नलिखित शब्दों में अस्वीकार कर दिया गया:

> ".....केंद्र सरकार द्वारा टी अधिनियम की धारा 30(1) के अंतर्गत भविष्य में किसी आदेश के जारी किए जाने की मात्र संभावना, जब तक कि इस संबंध में कोई वर्तमान स्पष्ट आदेश अस्तित्व में न हो, यह नहीं कहा जा सकता कि निर्मित चाय के क्रय-विक्रय, उसके अधिकतम या न्यूनतम मूल्य निर्धारण या ऐसे विक्रय के स्थान के संबंध में क्षेत्र अधिगृहीत हो चुका है। ये विषय टी अधिनियम के अंतर्गत विधिपूर्वक आच्छादित नहीं माने जा सकते। अतः इन विषयों से प्रभावी रूप से निपटने के लिए समवर्ती सूची की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत राज्य विधानमंडल की विधायी शक्ति का प्रयोग करने हेतु क्षेत्र पूर्णतः खुला है।"

अतः, यदि यह मान भी लिया जाए कि बाजार अधिनियम और तंबाकू अधिनियम के प्रावधानों के बीच कोई टकराव है—जैसे कि तंबाकू की बिक्री को बाजार क्षेत्र तक सीमित करने का प्रावधान तथा तंबाकू अधिनियम के अंतर्गत नीलामी मंचों की स्थापना—तब भी उन

राज्यों में जहाँ धारा 13, 13क एवं 14-क लागू नहीं हैं, बाजार अधिनियम के प्रावधान ही प्रभावी होंगे।

अब उस प्रश्न पर आना शेष है जो इस पीठ के समक्ष संदर्भित किया गया था, अर्थात् क्या *आईटीसी लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य (उपरोक्त)* का निर्णय सही था। राज्य विधानमंडल की विधायी क्षमता के संबंध में बहुमत का मत फ़ज़ल अली, न्यायमूर्ति द्वारा दिया गया था। कर्नाटक बाजार अधिनियम के उस भाग को निरस्त करते समय, जिसमें तंबाकू पर बाजार शुल्क लगाने की शक्ति दी गई थी, यह मत छह आधारों पर आधारित था, जिनमें से प्रत्येक विधि के अनुरूप प्रतीत नहीं होता।

प्रथम—न्यायालय ने यह मान लिया कि तंबाकू अधिनियम पूर्णतः एवं केवल सूची-I की प्रविष्टि 52 से संबंधित है, जबकि मैंने यह कारण प्रस्तुत किए हैं कि तंबाकू के निपटान से संबंधित भाग उस प्रविष्टि के अंतर्गत नहीं आता।

द्वितीय—अनुच्छेद 246(4) का सहारा लेकर यह कहा गया कि संसद को "विशेष परिस्थितियों में राज्य सूची के विषयों पर भी विधायन करने की सर्वोच्च शक्ति" है। अनुच्छेद 246(4) का वर्तमान विवाद से कोई संबंध नहीं है। यह इस प्रकार है:

> "(4) संसद को भारत के ऐसे किसी भाग के संबंध में, जो किसी *राज्य में सम्मिलित नहीं है*, किसी भी विषय पर, भले ही वह राज्य सूची में वर्णित विषय हो, विधि बनाने की शक्ति होगी।"

उप-खंड केवल संसद की उस शक्ति से संबंधित है जिसके अंतर्गत वह राज्य सूची में उल्लिखित विषयों के संबंध में भी संघ राज्य क्षेत्रों हेतु विधि बना सकती है।

तृतीय— यह कहा गया कि "यह विधि सिद्धांततः स्थापित है कि जहाँ संसद द्वारा पारित अधिनियम और राज्य विधानमंडल द्वारा पारित अधिनियम में टकराव हो और उनका सामंजस्य संभव न हो, वहाँ केंद्रीय विधि प्रभावी होगी।" परंतु वास्तव में यह सिद्धांत इस प्रकार स्थापित है कि जब संसद और राज्य विधानमंडल, समवर्ती सूची की किसी प्रविष्टि के

अंतर्गत, एक ही विषय पर परस्पर विरोधी विधि बनाते हैं, तभी केंद्रीय विधि प्रभावी होती है। अन्य मामलों में यह निर्धारित करना होता है कि विरोधी विधायन राज्य सूची अथवा संघ सूची की विशिष्ट प्रविष्टि के अंतर्गत आता है, और उसके पश्चात प्रमुख विधायन प्रभावी होगा।

चतुर्थ— यह कहा गया कि यदि अल्पमत का मत (न्यायमूर्ति मुखर्जी द्वारा व्यक्त) स्वीकार किया जाए, तो "यह 1975 के अधिनियम की संपूर्ण विषयवस्तु और सार को निष्प्रभावी कर देगा, क्योंकि विधायन की शक्ति राज्य सरकार को सौंप दी जाएगी, जिसे अनुच्छेद 246 के अंतर्गत संसद द्वारा अपने अधीन कर लिया गया है।" जबकि वास्तव में न्यायमूर्ति मुखर्जी ने *टीका रामजी* के निर्णय का अनुसरण करते हुए सही रूप से यह माना था कि तंबाकू अधिनियम और मार्केट्स अधिनियम अपने-अपने क्षेत्रों में कार्य करते हैं तथा दोनों अधिनियमों को उनके वास्तविक स्वरूप और प्रकृति के संदर्भ में देखने पर कोई विरोधाभास उत्पन्न नहीं होता। *टीका रामजी* तथा उसके पश्चात के संविधान पीठ के निर्णयों का बहुमत द्वारा उल्लेख तक नहीं किया गया।

पंचम— सूची-I की प्रविष्टि 52 तथा सूची-II की प्रविष्टि 28 के प्रभाव का निर्धारण करते समय बहुमत ने उन निर्णयों पर अवलंबन किया जो सूची-I की प्रविष्टि 54 तथा सूची-II की प्रविष्टि 23 से संबंधित थे। इन प्रविष्टियों का क्षेत्र भिन्न है और मैं अपने माननीय सहकर्मी न्यायमूर्ति पट्टनायक के इस मत से सहमत हूँ कि बहुमत द्वारा उद्धृत निर्णय, अर्थात् *हिंगिर रामपुर कोल कंपनी लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य,* एआईआर 1961 एससी 459; *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य,* [1969] 3 एससीसी 838; *भारत कोकिंग कोल लिमिटेड बनाम बिहार राज्य,* [1990] 4 एससीसी 557 तथा *उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुलॉक एंड कंपनी,* [1964] 4 एससीआर 461, अनुपयुक्त हैं।

अंततः बहुमत ने यह आधार लिया कि चूँकि राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त नहीं की गई थी, इसलिए कर्नाटक मार्केट्स अधिनियम, 1980 पूर्णतः अयोग्य है और राज्य तंबाकू पर कोई बाजार शुल्क नहीं लगा सकता। यह मत अनुच्छेद 254(2) की गलत व्याख्या पर

आधारित है, जिसका इस वाद में कोई अनुप्रयोग नहीं है। अनुच्छेद 254(2) यह प्रावधान करता है:

> "(2) जब किसी राज्य विधानमंडल द्वारा समवर्ती सूची में वर्णित किसी विषय पर बनाया गया कानून, संसद द्वारा पूर्व में बनाए गए कानून या उस विषय से संबंधित किसी विद्यमान कानून के प्रावधानों से प्रतिकूल हो, तब यदि उस राज्य के कानून को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रखा गया हो और उसे उनकी स्वीकृति प्राप्त हो, तो वह कानून उस राज्य में प्रभावी होगा।"

इस प्रावधान की भाषा स्पष्ट है। यह केवल प्रधानता के प्रश्न से संबंधित है, न कि विधायी क्षमता से। समवर्ती सूची के अंतर्गत विरोधी विधायन की स्थिति में, यदि राज्य विधायन को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त है, तो वह उस राज्य में केंद्रीय विधायन पर प्रभावी होगा। यह अनुच्छेद यह नहीं कहता कि राष्ट्रपति की स्वीकृति के अभाव में राज्य विधायन अयोग्य हो जाता है।

इन परिस्थितियों में, मैं यह मानता हूँ कि *आईटीसी बनाम कर्नाटक राज्य (उपरोक्त)* का निर्णय गलत रूप से दिया गया था और उपरोक्त कारणों से मैं यह ठहराता हूँ कि राज्य विधानमंडल तंबाकू पर बाजार शुल्क अधिरोपित करने के लिए सक्षम है।

बृजेश कुमार, न्यायमूर्ति — मुझे अपने माननीय सहकर्मियों न्यायमूर्ति जी.बी. पट्टनायक, न्यायमूर्ति वाई.के. सभरवाल तथा न्यायमूर्ति श्रीमती रूमा पाल द्वारा पृथक रूप से लिखे गए निर्णयों का अवलोकन करने का अवसर प्राप्त हुआ।

इन तीनों निर्णयों में तथ्य, विधि के प्रासंगिक प्रावधान तथा विषय से संबंधित निर्णयों का अत्यंत विस्तृत एवं स्पष्ट रूप से विवेचन किया गया है। अतः उन सभी विषयों पर पुनः विस्तार से विचार करना आवश्यक नहीं है। तथापि मुख्य प्रश्न, जिस पर विचार किया गया है, यह है कि *आईटीसी लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य,* [1985] पूरक 1 एससीआर 145 का निर्णय सही था या नहीं। उक्त वाद में यह ठहराया गया था कि जब

संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत लोकहित में तंबाकू उद्योग को इस प्रकार घोषित कर दिया गया, तब राज्य विधानमंडलों की इस विषय, अर्थात् तंबाकू उद्योग, पर संसद द्वारा बनाए गए कानून, अर्थात् तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 के विपरीत विधायन करने की क्षमता समाप्त हो गई। फलस्वरूप, कर्नाटक राज्य अधिनियम द्वारा बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपित करने का प्रावधान अवैध ठहराया गया। तंबाकू से संबंधित समस्त विधायी क्षेत्र, जिसमें कृषि उत्पाद के रूप में उसकी बिक्री भी सम्मिलित है, संसद के अधिकार क्षेत्र में निहित माना गया। ऐसा निर्णय देते समय इस न्यायालय के *उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुलॉक एंड कंपनी*, [1964] 4 एससीआर 461 तथा *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य एवं अन्य*, [1969] 3 एससीसी 838 के निर्णयों पर निर्भर किया गया। हालाँकि न्यायमूर्ति मुखर्जी ने भिन्न मत व्यक्त करते हुए यह माना कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 तथा कर्नाटक कृषि उपज बाजार अधिनियम दोनों बिना एक-दूसरे का उल्लंघन किए साथ-साथ लागू हो सकते हैं। अतः इस पीठ के समक्ष विचारणीय अन्य प्रश्न यह भी रहा कि क्या दोनों अधिनियम साथ-साथ संचालित हो सकते हैं या नहीं।

विभिन्न राज्यों, जैसे *बिहार, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु आदि* में भी कृषि उपज, जिसमें तंबाकू भी सम्मिलित है, की बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपित करने वाले समान राज्य अधिनियम विद्यमान हैं। इन राज्यों के संबंध में भी यही प्रश्न विभिन्न रूपों में विचाराधीन रहा।

माननीय न्यायमूर्ति पट्टनायक ने अपने निर्णय में यह पाया है कि *आईटीसी* वाद (उपरोक्त) का निर्णय सही रूप से किया गया था, यद्यपि इस निष्कर्ष तक पहुँचने के उनके कारण, *आईटीसी* वाद में दिए गए कारणों से कुछ भिन्न थे। यह भी कहा गया है कि जब संसद किसी उद्योग का नियंत्रण, उस उद्योग तथा राष्ट्रीय हित में अपने अधीन ले लेती है, तो वह नियंत्रण प्रभावी होना चाहिए ताकि अपेक्षित उद्देश्य प्राप्त किया जा सके। अतः संसद के लिए तंबाकू उद्योग से संबंधित समस्त विधायी क्षेत्र, जिसमें तंबाकू की खेती तथा उसकी

खरीद-बिक्री भी सम्मिलित है, खुला था। यह भी कहा गया है कि यदि किसी विधायन के दौरान किसी अन्य सूची की प्रविष्टि के क्षेत्र में, जो उससे सहायक या आनुषंगिक रूप से संबंधित हो, अतिक्रमण हो, तो उससे विधायन अवैध नहीं हो जाता। साथ ही यह भी निष्कर्ष निकाला गया कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 और राज्य कृषि उपज बाजार अधिनियम साथ-साथ संचालित नहीं हो सकते।

न्यायमूर्ति सभरवाल ने सामान्यतः यह माना है कि *टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* [1956] एससीआर 393 का निर्णय, सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द के अर्थ के निर्धारण के लिए अभी भी प्रासंगिक है। विनिर्माण-पूर्व गतिविधियाँ, जैसे तंबाकू की खेती और उसकी बिक्री, संसद द्वारा प्रविष्टि 52 के अंतर्गत किए गए घोषणा के आधार पर विधायन का विषय नहीं हो सकतीं। सप्तम अनुसूची की सूची-॥ में राज्य विधानमंडलों की प्रविष्टि 14, 28 आदि के अंतर्गत विधायन करने की शक्ति अप्रभावित रहती है। यह भी कहा गया कि राज्य अधिनियम और केंद्रीय अधिनियम साथ-साथ संचालित नहीं हो सकते। न्यायमूर्ति रूमा पाल ने भी यह निष्कर्ष निकाला है कि कृषि उत्पाद के रूप में तंबाकू, उसकी बिक्री तथा उस पर बाजार शुल्क लगाने के संबंध में राज्य विधानमंडल की शक्ति अप्रभावित रहती है, क्योंकि यह प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द के अंतर्गत नहीं आता। उन्होंने *आईटीसी* वाद (उपरोक्त) के निर्णय को गलत ठहराया है। साथ ही यह भी कहा है कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 और राज्य अधिनियम साथ-साथ संचालित हो सकते हैं और यदि ऐसा संभव न हो, तो मार्केट्स अधिनियम के प्रावधान प्रभावी होंगे, न कि तंबाकू अधिनियम के।

जैसा कि पूर्व में उल्लेखित है, *आईटीसी* वाद (उपरोक्त) में बहुमत का मत न्यायमूर्ति पट्टनायक द्वारा, भिन्न आधारों पर, अनुमोदित किया गया है तथा *एम.ए. टुलॉक और बैजनाथ केडिया (उपरोक्त) के निर्णयों, जो खनन से संबंधित विधायन से संबंधित थे और जिन पर आईटीसी वाद (उपरोक्त)* में निर्भर किया गया था, को इस निर्णय के लिए

अप्रासंगिक माना गया है। यह सत्य है कि किसी भी सूची की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत विधायन करते समय, उसी सूची या अन्य सूची की किसी अन्य प्रविष्टि के क्षेत्र में, जो उससे सहायक या आनुषंगिक रूप से संबंधित हो, अतिक्रमण की संभावना रहती है। ऐसी स्थिति में, प्रविष्टियों की व्यापक एवं उदार व्याख्या आवश्यक हो सकती है। यद्यपि विधायी विषयों का पूर्णतः पृथक विभाजन संभव नहीं है, तथापि किसी अन्य प्रविष्टि के क्षेत्र में अतिक्रमण का अर्थ यह नहीं हो सकता कि वह प्रविष्टि पूर्णतः समाप्त हो जाए, विशेषतः जब वह किसी अन्य विधायिका के लिए विशिष्ट रूप से सुरक्षित सूची में हो। वर्तमान वाद में, सूची-II की प्रासंगिक प्रविष्टियाँ, प्रविष्टि 24 को छोड़कर, इस प्रकार नहीं मानी जा सकतीं कि प्रविष्टि 52, सूची-I के अंतर्गत तंबाकू उद्योग की घोषणा के कारण वे व्यावहारिक रूप से समाप्त हो जाएँ या पूर्णतः सूची-I में स्थानांतरित हो जाएँ। अतः मैं न्यायमूर्ति सभरवाल के निष्कर्षों और निर्णय से पूर्णतः सहमत हूँ।

पट्टनायक, न्यायमूर्ति — सभी विशेष अनुमति याचिकाओं में अनुमति प्रदान की जाती है।

आई.टी.सी. लिमिटेड ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 तथा 227 के अंतर्गत पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक विनिर्दिष्ट आदेश याचिका दायर की, जिसमें कृषि उपज बाजार समिति, मुंगेर द्वारा पारित आकलन आदेश को चुनौती दी गई थी, जिसके द्वारा ₹35,87,072 की मांग की गई थी, *अन्य बातों के साथ* इस आधार पर कि कच्चे तंबाकू पत्तों की खरीद, जो इस अधिरोपण का विषय थी, पर बाजार समिति को शुल्क अधिरोपित एवं वसूल करने की कोई शक्ति नहीं है। उच्च न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया कि तंबाकू पत्तों की न तो बाजार क्षेत्र के भीतर खरीद-बिक्री हुई थी और न ही बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम की धारा 27 के अंतर्गत बाजार क्षेत्र में खरीदे या बेचे गए कृषि उपज पर ही बाजार शुल्क अधिरोपित किया जा सकता है, अतः बाजार समिति को शुल्क अधिरोपित करने का अधिकार नहीं था। तथापि, खंडपीठ ने उपरोक्त विवाद में प्रवेश किए बिना यह निष्कर्ष

निकाला कि कंपनी को यह सिद्ध करने हेतु कि संबंधित तंबाकू पत्ते या तो संसाधित नहीं किए गए थे अथवा बाजार क्षेत्र से निर्यात कर दिए गए थे, आवश्यक अभिलेख प्रस्तुत करने के लिए कोई स्पष्ट सूचना नहीं दी गई थी। अतः कंपनी को अधिनियम की धारा 27 के प्रावधान के अधीन उत्पन्न अनुमान से मुक्त होने के लिए सभी प्रासंगिक दस्तावेज प्रस्तुत करने का एक नया अवसर दिया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय द्वारा वाद को पुनः आकलन आदेश पारित करने हेतु बाजार समिति को वापस भेजे जाने के पश्चात कंपनी ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, जो दीवानी अपील संख्या 6453/2001 (एस.एल.पी. (दीवानी) संख्या 12374/84 से उत्पन्न) का विषय है। जब उक्त विशेष अनुमति याचिका फरवरी, 1987 में इस न्यायालय की पीठ के समक्ष सूचीबद्ध हुई, तब इस न्यायालय का निर्णय *आई.टी.सी. लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य*, [1985] पूरक 1 एससीआर 145 प्रस्तुत किया गया। पीठ ने प्रारंभिक रूप से यह मत व्यक्त किया कि उक्त निर्णय पर पुनर्विचार की आवश्यकता है और निर्देश दिया कि मामला पाँच न्यायाधीशों की संविधान पीठ के समक्ष रखा जाए। इसी प्रकार यह मामला संविधान पीठ के समक्ष प्रस्तुत हुआ। बिहार वाद के पश्चात अन्य उच्च न्यायालयों के निर्णयों से उत्पन्न समान वाद भी इस न्यायालय में चुनौती दिए जाने पर इस वाद के साथ संलग्न कर दिए गए। जब इन मामलों के समूह को पूर्व में संविधान पीठ के समक्ष सूचीबद्ध किया गया और कंपनी की ओर से तर्क प्रस्तुत किए गए, तब न्यायालय ने यह उपयुक्त समझा कि महान्यायवादी तथा सभी राज्यों के महाधिवक्ताओं को नोटिस जारी किया जाए, क्योंकि अधिकांश राज्यों में कृषि उपज बाजार अधिनियम नामक राज्य अधिनियम लागू हैं। दिनांक 10 अप्रैल, 2001 के आदेश के अनुपालन में सभी राज्यों के महाधिवक्ताओं तथा माननीय महान्यायवादी को नोटिस जारी किए गए, जिसके पश्चात इस पीठ द्वारा वाद की सुनवाई की गई।

विभिन्न राज्य विधानमंडलों ने बाजार क्षेत्र के भीतर कृषि उपज की खरीद-बिक्री के विनियमन तथा बाजार शुल्क के अधिरोपण और वसूली के लिए कृषि उपज बाजार

अधिनियम बनाए हैं। संसद ने यह घोषित किया कि लोकहित में तंबाकू उद्योग का नियंत्रण संघ के अधीन लिया जाना आवश्यक है और इस उद्देश्य से तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 अधिनियमित किया गया, जो संघ सरकार के नियंत्रण में तंबाकू उद्योग के विकास के लिए बनाया गया है। कृषि उपज बाजार अधिनियम के अंतर्गत राज्य सरकार द्वारा 'तंबाकू' को कृषि उपज के रूप में अधिसूचित किए जाने के पश्चात उसकी खरीद-बिक्री राज्य अधिनियम के प्रावधानों के अधीन विनियमित होती है और बाजार समिति को अधिसूचित कृषि उपज, अर्थात् तंबाकू, की खरीद-बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपित एवं वसूल करने का अधिकार प्राप्त होता है। कर्नाटक राज्य से उत्पन्न एक वाद में, इस न्यायालय ने 2:1 के बहुमत से यह निर्णय दिया कि तंबाकू उद्योग को सूची-I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा अपने नियंत्रण में ले लिए जाने तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम के अधिनियमन के पश्चात राज्य विधानमंडल की उस क्षेत्र में विधायन करने की कोई अधिकारिता नहीं रह जाती। अतः कर्नाटक अधिनियम के वे प्रावधान, जो बाजार क्षेत्र में तंबाकू की खरीद-बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपित करने का अधिकार देते हैं, तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 से प्रत्यक्ष रूप से टकराते हैं और इस कारण तंबाकू से संबंधित राज्य अधिनियम के प्रावधानों को निरस्त कर दिया गया। अल्पमत में न्यायमूर्ति मुखर्जी ने यह मत व्यक्त किया कि दोनों अधिनियम अपने-अपने क्षेत्रों में संचालित हो सकते हैं और यदि दोनों अधिनियमों को उनके वास्तविक स्वरूप और प्रकृति के संदर्भ में देखा जाए तो कोई प्रतिकूलता उत्पन्न नहीं होती। बहुमत ने *उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुलॉक एंड कंपनी*, [1964] 4 एससीआर 461 तथा *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य एवं अन्य*, [1969] 3 एससीसी 838 के निर्णयों पर निर्भर किया।

पटना उच्च न्यायालय के निर्णय से उत्पन्न अन्य वाद कृषि उपज बाजार समिति द्वारा दायर किया गया है, जिसमें दीवानी अपील संख्या 6453/2001 के समान आदेश के विरुद्ध चुनौती दी गई है, जिसमें आई.टी.सी. को नोटिस जारी कर पुनः आकलन आदेश पारित करने हेतु मामला वापस भेजा गया था। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णयों से

उत्पन्न दीवानी अपीलों में खंडपीठ ने इस न्यायालय के *आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य,* [1985] (पूरक) एससीसी 476 के निर्णय का अनुसरण करते हुए यह कहा कि मंडी समिति तंबाकू की खरीद-बिक्री पर बाजार शुल्क अधिरोपित नहीं कर सकती, जिसके विरुद्ध कृषि उत्पाद मंडी समिति ने अपील दायर की। दीवानी अपील संख्या 3872/1990 भी इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय से उत्पन्न है, जिसमें *तंबाकू व्यापारियों का संघ एवं अन्य* अपीलकर्ता है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्णपीठ ने उत्तर प्रदेश कृषि उत्पाद मंडी अधिनियम, 1964 की संवैधानिक वैधता पर विचार करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि अधिनियम की धारा 17(iii) के अंतर्गत शुल्क अधिरोपण, जहाँ तक वह तंबाकू पर लागू होता है, तंबाकू बोर्ड अधिनियम से प्रतिकूल नहीं है तथा *रामचंद्र कैलाश कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* का निर्णय बाध्यकारी है, भले ही बाद में *आई.टी.सी. बनाम कर्नाटक राज्य* (उपरोक्त) का निर्णय दिया गया हो। अतः तंबाकू व्यापारियों के संघ ने उक्त निर्णय को चुनौती दी। तमिलनाडु के संबंध में, तमिलनाडु कृषि विपणन बोर्ड ने उच्च न्यायालय की खंडपीठ के उस निर्णय को चुनौती दी, जिसमें इस न्यायालय के *आई.टी.सी. वाद* (उपरोक्त) के निर्णय का अनुसरण करते हुए यह कहा गया कि राज्य विधानमंडल को तंबाकू को अधिसूचित कर उसके नियंत्रण, विनियमन तथा शुल्क अधिरोपण हेतु कोई विधायी शक्ति या अधिकारिता नहीं है।

जयलक्ष्मी टोबैको कंपनी ने अनुच्छेद 32 के अंतर्गत दीवानी विर्निदष्ट आदेश याचिका संख्या 8614/1982 दायर कर कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम, 1966 के कुछ प्रावधानों की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी, इस आधार पर कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 तथा तंबाकू संघ अधिनियम, 1975 के कारण तंबाकू उद्योग के विकास सहित तंबाकू के विपणन का संपूर्ण क्षेत्र केंद्र द्वारा अधिगृहीत किया जा चुका है और राज्य अधिनियम केंद्रीय अधिनियम के प्रतिकूल है।

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णयों से उत्पन्न 12 अपीलों के संबंध में, उच्च न्यायालय ने आई.टी.सी. वाद के निर्णय का अनुसरण करते हुए यह कहा कि बाजार समिति

तंबाकू के व्यापार से संबंधित किसी भी लेन-देन पर बाजार शुल्क वसूलने की अधिकारी नहीं है, क्योंकि बाजार समिति अधिनियम तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रतिकूल है। यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि विर्निदष्ट आदेश याचिका में राज्य अधिनियम की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी गई थी, तथापि उच्च न्यायालय ने मध्य प्रदेश कृषि उत्पाद मंडी अधिनियम, 1972 (संशोधित 1986) को वैध ठहराया।

श्री शांति भूषण, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, आईटीसी की ओर से उपस्थित हुए और यह तर्क दिया कि *आईटीसी* वाद में बहुमत का मत सही है तथा जब संसद ने तंबाकू उद्योग के संबंध में विधि बना दी है, जिसमें बिक्री की विधि और स्थान तथा बिक्री पर शुल्क अधिरोपण का प्रावधान है, तब राज्य विधानमंडल द्वारा अधिनियमित मार्केट समिति अधिनियम, जो बाजार क्षेत्र में तंबाकू की बिक्री पर शुल्क अधिरोपण का प्रावधान करता है, केंद्रीय विधि के प्रतिकूल होगा और इस कारण राज्य अधिनियम, जहाँ तक वह तंबाकू से संबंधित है, *अधिकारातीत* घोषित किया जाना चाहिए।

इसके विपरीत, बिहार राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राकेश द्विवेदी ने यह तर्क दिया कि आईटीसी वाद में बहुमत का निर्णय इस न्यायालय की अनेक संविधान पीठ के निर्णयों, विशेषकर *टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* [1956] एससीआर 393 से आरंभ होकर, के प्रतिकूल है तथा सूची-I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द को सीमित अर्थ दिया जाना चाहिए। इस प्रकार व्याख्या करने पर, उनके अनुसार, संसद को कच्चे तंबाकू की खेती अथवा उसकी बिक्री के संबंध में विधि बनाने की विधायी क्षमता नहीं मानी जा सकती और इस सीमा तक तंबाकू बोर्ड अधिनियम को अवैध माना जाना चाहिए। उनके अनुसार, राज्य विधानमंडल कृषि उपज बाजार समिति अधिनियम बनाने तथा उसमें तंबाकू सहित कृषि उपज की खरीद-बिक्री पर शुल्क अधिरोपित करने का प्रावधान करने हेतु पूर्णतः सक्षम था। इन दोनों विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं के मुख्य तर्कों के अतिरिक्त, अन्य अधिवक्ताओं जैसे तमिलनाडु वाद में श्री अशोक गांगुली, मुंगेर मार्केट समिति के लिए डॉ.

ए.एम. सिंहवी, फर्रुखाबाद कृषि मंडी के लिए श्रीमती शोभा दीक्षित, इलाहाबाद उच्च न्यायालय से उत्पन्न वाद में श्री प्रमोद स्वरूप तथा मध्य प्रदेश के मामलों में कृषि मंडी के लिए श्री जी.एल. सांघी—ने भी श्री द्विवेदी के तर्कों का समर्थन किया। मध्य प्रदेश के मामलों में उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जी.एल. सांघी ने दोनों अधिनियमों के सामंजस्य की वकालत करते हुए यह तर्क दिया कि कोई प्रतिकूलता नहीं है और दोनों अधिनियमों को साथ-साथ लागू होने दिया जा सकता है। भारत के महान्यायवादी की ओर से उपस्थित विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री त्रिवेदी ने यह तर्क दिया कि चूँकि इन मामलों में तंबाकू अधिनियम की संवैधानिक वैधता को चुनौती नहीं दी गई है, अतः न्यायालय को सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद की विधायी क्षमता की जाँच में नहीं जाना चाहिए। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि तंबाकू उद्योग को एक ऐसे उद्योग के रूप में अधिसूचित किए जाने के पश्चात, जिसका नियंत्रण लोकहित में संसद द्वारा अपने अधीन लिया जाना आवश्यक समझा गया, तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम के अधिनियमन के बाद, संसद की शक्ति पर कोई सीमा नहीं रह जाती, यहाँ तक कि तंबाकू की खेती, उसकी बिक्री के स्थान का निर्धारण तथा उस पर शुल्क अधिरोपण के संबंध में भी। इस प्रकार, उनके अनुसार, बाजार क्षेत्र में तंबाकू की खरीद-बिक्री पर बाजार शुल्क लगाने वाला मार्केट समिति अधिनियम निरस्त किया जाना चाहिए। यह सत्य है, जैसा कि विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने कहा, कि इन मामलों में तंबाकू बोर्ड अधिनियम की संवैधानिक वैधता को चुनौती नहीं दी गई थी और केवल इस न्यायालय में बिहार राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राकेश द्विवेदी ने *आईटीसी* वाद के निर्णय के संदर्भ में यह मुद्दा उठाया। सामान्यतः यह न्यायालय किसी विधि की संवैधानिक वैधता की जाँच नहीं करता यदि उसे चुनौती नहीं दी गई हो। तथापि, अपनाई गई प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए तथा सभी राज्यों के महाधिवक्ताओं और महान्यायवादी को नोटिस दिए जाने के परिप्रेक्ष्य में, और पक्षकारों के अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत विस्तृत तर्कों को देखते हुए, हमें यह उपयुक्त नहीं प्रतीत होता कि इस वाद समूह का निपटारा संसद द्वारा

सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम की संवैधानिक वैधता की परीक्षा किए बिना किया जाए। वस्तुतः, पक्षकारों के परस्पर विरोधी तर्कों का मुख्य केंद्र बिंदु यही प्रश्न है।

श्री शांति भूषण, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जो आईटीसी लिमिटेड की ओर से उपस्थित हुए, ने यह तर्क दिया कि संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची-। की प्रविष्टि 52 संसद को यह अपेक्षा करती है कि वह विधि द्वारा किसी उद्योग की पहचान करते हुए यह घोषणा करे कि लोकहित में उसका नियंत्रण संघ द्वारा लिया जाना आवश्यक है। ऐसी घोषणा किए जाने के पश्चात उस उद्योग से संबंधित संपूर्ण क्षेत्र पर विधि बनाने की विधायी क्षमता संसद को प्राप्त हो जाती है, और वह उद्योग स्वयं विधायन का विषय बन जाने से संविधान के अनुच्छेद 246(1) के अंतर्गत संसद को विशिष्ट अधिकार प्राप्त हो जाता है। अनुच्छेद 246(1), जो उपबंध (2) और (3) के बावजूद लागू होता है, के कारण एक बार संसद द्वारा ऐसे उद्योग के नियंत्रण के संबंध में विधि बना दी जाने पर राज्य विधानमंडल उस उद्योग के संबंध में कोई विधि बनाने की अपनी शक्ति से वंचित हो जाता है। श्री शांति भूषण ने यह भी तर्क दिया कि विधायी सूचियों की प्रत्येक प्रविष्टि की व्याख्या व्यापक अर्थ में की जानी चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय ने *हरकचंद रतनचंद बनठिया एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य*, [1970] 1 एससीआर 479 में कहा है, तथा प्रिवी काउंसिल ने भी यही सिद्धांत प्रतिपादित किया है। अतः सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द को संकीर्ण अर्थ देने का कोई औचित्य नहीं है। उन्होंने 'एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका' में दिए गए 'उद्योग' शब्द के व्यापक अर्थ का भी उल्लेख किया और कहा कि न्यायालय को इस अभिव्यक्ति को संकुचित अर्थ नहीं देना चाहिए, जिससे विधायी अधिकार सीमित हो जाए। उन्होंने यह भी इंगित किया कि संसद ने प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा के पश्चात विभिन्न अधिनियम बनाए हैं, जैसे—इलायची अधिनियम, 1965; केंद्रीय रेशम बोर्ड अधिनियम, 1958; कॉफी अधिनियम, 1942; रबर अधिनियम, 1947; चाय अधिनियम, 1953; नारियल जटा उद्योग अधिनियम, 1953;

नारियल विकास बोर्ड अधिनियम, 1979 तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975। विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 ने केवल कुछ विनिर्माण उद्योगों को ही घोषित किया था, परंतु इससे संसद की उस विधायी क्षमता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि वह सूची-। की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा किए जाने के पश्चात किसी भी उद्योग के संबंध में विधि बना सके और उस उद्योग पर संपूर्ण नियंत्रण संघ सरकार में निहित कर सके। श्री शांति भूषण के अनुसार, *हरकचंद वाद* [1970] 1 एससीआर 479 का संविधान पीठ निर्णय इस प्रश्न का पूर्ण उत्तर देता है। उनके अनुसार, तीनों सूचियों की प्रविष्टियाँ केवल विधायन के क्षेत्र या शीर्षक हैं, जो यह निर्धारित करती हैं कि कौन-सी विधायिका किस क्षेत्र में कार्य कर सकती है। इन प्रविष्टियों की व्याख्या व्यापक एवं उदार रूप में की जानी चाहिए, क्योंकि विषयों का विभाजन वैज्ञानिक या तार्किक परिभाषा के रूप में नहीं, बल्कि व्यापक श्रेणियों के रूप में किया गया है। श्री शांति भूषण के अनुसार, हरकचंद वाद में सूची-। की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द की व्याख्या करते हुए वेब्स्टर शब्दकोश में दिए गए व्यापक अर्थ को स्वीकार किया गया है, अतः इस अभिव्यक्ति को सीमित अर्थ देने का कोई औचित्य नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि उसी निर्णय में सूची-।। की प्रविष्टि 27 की व्याख्या करते हुए न्यायालय ने यह कहा कि 'उद्योग' एक विशेष प्रविष्टि है, जबकि उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण से संबंधित प्रविष्टि 27 एक सामान्य प्रविष्टि है। अतः यदि 'उद्योग' को विशेष प्रविष्टि माना गया है, चाहे वह सूची-।। की प्रविष्टि 24 हो या सूची-। की प्रविष्टि 7 एवं 52, तो उस प्रविष्टि के अंतर्गत बनाया गया कानून किसी सामान्य प्रविष्टि के अंतर्गत बनाए गए कानून पर प्रधानता रखेगा। श्री शांति भूषण के अनुसार, हरकचंद वाद के सिद्धांत को लागू करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि आईटीसी वाद में बहुमत का मत सही है। उन्होंने आगे यह तर्क दिया कि जिस उद्योग के संबंध में संसद द्वारा प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा की जाती है, वह उद्योग स्वयं संसद के विधायन का विषय बन जाता है और उस उद्योग से युक्तिसंगत संबंध रखने वाले सभी प्रावधान संविधान के अनुच्छेद

246(1) के अंतर्गत संसद की विधायी क्षमता के भीतर होंगे तथा वैध होंगे। उनके अनुसार, किसी घोषित उद्योग के कच्चे माल से संबंधित विधायन को उस उद्योग से असंबद्ध नहीं माना जा सकता। यदि संसद को ऐसे कच्चे माल के संबंध में विधि बनाने की शक्ति से वंचित कर दिया जाए, तो लोकहित में उद्योग के नियंत्रण के उद्देश्य को ही विफल कर दिया जाएगा। उन्होंने यह भी कहा कि यदि संसद उस उद्योग के सभी पहलुओं को विनियमित करने का विकल्प न चुने और केवल विनिर्माण तक ही नियमन सीमित रखे, जैसा कि उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 में किया गया, तो ऐसी स्थिति में राज्य विधानमंडल कच्चे माल से संबंधित विधायन कर सकता है, बशर्ते वह सूची-II की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत आता हो, और उस दशा में कोई प्रतिकूलता उत्पन्न नहीं होगी।

जहाँ तक *टीका रामजी* वाद (उपरोक्त) में संविधान पीठ द्वारा की गई टिप्पणियों का संबंध है, श्री शांति भूषण का कहना था कि उस वाद में जिन वस्तुओं पर विचार किया गया था, वे तैयार उत्पाद थे, न कि कच्चा माल, और उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 में गन्ने के संबंध में कोई प्रावधान नहीं था। इसी संदर्भ में इस न्यायालय ने *टीका रामजी* वाद (उपरोक्त) में यह टिप्पणी की थी कि 'उद्योग' अभिव्यक्ति का सीमित अर्थ होगा। श्री शांति भूषण ने *चतुरभाई एम. पटेल बनाम भारत संघ,* [1960] 2 एससीआर 362 के संविधान पीठ निर्णय पर भी अवलंबन किया, जिसमें भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अंतर्गत विधायी क्षमता के प्रश्न पर विचार किया गया था। उस वाद में न्यायालय यह विचार कर रहा था कि क्या केंद्रीय उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1935 के अधीन विधायी क्षमता से परे था। संघ सूची की प्रविष्टि 45 तथा राज्य सूची की प्रविष्टियाँ 27, 29 और 31 का परीक्षण करने के पश्चात न्यायालय ने यह कहा कि यह देखा जाना चाहिए कि संबंधित अधिनियम सूची-I की प्रविष्टि 45 में उल्लिखित विषयों से संबंधित है या सूची-II की प्रविष्टियों 27 और 29 में उल्लिखित विषयों से। संघीय न्यायालय की इस टिप्पणी का उद्धरण करते हुए;

"यह स्वाभाविक है कि समय-समय पर ऐसा होगा कि कोई विधायन, यद्यपि एक सूची के विषय से संबंधित प्रतीत होता है, परंतु दूसरी सूची के विषय को भी स्पर्श करता है, और उसके प्रावधान इतने परस्पर जुड़े हो सकते हैं कि केवल शाब्दिक व्याख्या के आधार पर अनेक विधियों को अवैध घोषित करना पड़ेगा क्योंकि ऐसा प्रतीत होगा कि विधायिका ने निषिद्ध क्षेत्र में विधायन किया है।"

उक्त सिद्धांत को अनुमोदित करते हुए यह ठहराया गया कि यह विभिन्न सूचियों में निहित प्रविष्टियों की व्याख्या करने की एक उचित विधि है। श्री शांति भूषण ने यह भी इंगित किया कि उपरोक्त निर्णय में संविधान पीठ ने *राजस्थान राज्य बनाम जी. चावला,* एआईआर (1959) एससी 544 के वाद में माननीय न्यायमूर्ति हिदायतुल्लाह द्वारा व्यक्त पूर्व टिप्पणी का अनुसरण किया, जो इस प्रकार है;

"यह भी समान रूप से स्थापित है कि किसी विधायी विषय पर विधायन करने की शक्ति के साथ उस शक्ति के अंतर्गत युक्तिसंगत रूप से सम्मिलित माने जाने वाले किसी आनुषंगिक विषय पर भी विधायन करने की शक्ति निहित होती है।"

विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, केंद्रीय विधायिका के लिए यह उसकी विधायी क्षमता के अंतर्गत होगा कि वह उन विषयों के संबंध में भी प्रावधान करे, जो अन्यथा राज्य विधायिका के अधिकार क्षेत्र में आते हों, यदि वे किसी ऐसे विषय पर प्रभावी विधायन के लिए आवश्यक रूप से आनुषंगिक हों, जो स्पष्ट रूप से उसकी शक्ति के अंतर्गत है। श्री शांति भूषण के अनुसार, यदि 'उद्योग' शब्द की व्याख्या व्यापक अर्थ में की जाए, जैसा कि इस न्यायालय ने *हरकचंद* (उपरोक्त) के संविधान पीठ के निर्णय में किया है, तो 1975 का तंबाकू अधिनियम निस्संदेह संसद की विधायी क्षमता के अंतर्गत होगा, भले ही उसके कुछ प्रावधान राज्य सूची के विषयों को स्पर्श करते हों। इस संदर्भ में विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के एक हालिया निर्णय, *स्टेट बैंक ऑफ इंडिया बनाम यसंगी वेंकटेश्वर राव,* [1999] 2 एससीसी 375, पर भी अवलंबन किया। कलकत्ता गैस [1962] पूरक एससीआर 1, मैकडॉवेल, [1996]

3 एससीसी 709 तथा *टीकारामजी* (उपरोक्त) के मामलों के संदर्भ में यह तर्क दिया गया कि इन मामलों में संसद की विधायन करने की क्षमता पर विचार नहीं किया गया था। इसके विपरीत, *कलकत्ता गैस* (उपरोक्त) तथा *मैकडॉवेल* (उपरोक्त) के मामलों में यह प्रश्न विचाराधीन था कि दो प्रविष्टियों में से यदि एक सामान्य हो और दूसरी विशेष, तो किसका वर्चस्व होगा, और न्यायालय ने यह ठहराया कि विशेष कानून सामान्य कानून पर प्रबल होगा। *कलकत्ता गैस* वाद में प्रविष्टि 24 में 'उद्योग' शब्द को सामान्य प्रविष्टि माना गया, जबकि प्रविष्टि 27 में 'गैस और गैस वर्क्स' को विशेष प्रविष्टि माना गया, और सामंजस्यपूर्ण व्याख्या के सिद्धांत को लागू करते हुए यह कहा गया कि 'उद्योग' शब्द को सीमित अर्थ दिया जाएगा ताकि इसके दायरे से 'गैस और गैस वर्क्स' को बाहर रखा जा सके। इसी अर्थ में यह कहा गया कि सूची II की प्रविष्टि 24 में 'उद्योग' के अंतर्गत 'गैस और गैस वर्क्स' शामिल नहीं होंगे। *मैकडॉवेल* (उपरोक्त) वाद में भी न्यायालय ने इसी सिद्धांत—विशेष प्रविष्टि द्वारा सामान्य प्रविष्टि का अपवर्जन—को लागू करते हुए यह ठहराया कि मदिरा का उत्पादन और निर्माण सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत नहीं, बल्कि प्रविष्टि 3 के अंतर्गत आएगा, जो मादक द्रव्यों के उत्पादन, निर्माण, धारण, परिवहन, क्रय और विक्रय से संबंधित है। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, ये निर्णय वर्तमान वाद में प्रासंगिक नहीं हैं, क्योंकि यहाँ संसद की विधायी क्षमता, विशेष रूप से सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत, विचाराधीन है। श्री शांति भूषण ने यह भी तर्क दिया कि राज्य सूची की प्रविष्टि 27, जो वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण से संबंधित है, को विशेष प्रविष्टि नहीं माना जा सकता ताकि उसे सूची I की प्रविष्टि 52 के दायरे से बाहर किया जा सके। उनके अनुसार, ये दोनों प्रविष्टियाँ एक ही वर्ग की नहीं हैं कि वे एक ही क्षेत्र में लागू हों, और यदि *हरकचंद* (उपरोक्त) के निर्णय का सिद्धांत लागू किया जाए, तो प्रविष्टि 27 को विशेष प्रविष्टि नहीं माना जा सकता। उन्होंने *वेवरली जूट मिल्स* वाद [1963] 3 एससीआर 209 में संविधान पीठ के निर्णय पर भी अवलंबन किया, जिसमें यह प्रश्न था कि क्या संसद को 1952 के फॉरवर्ड कॉन्ट्रैक्ट रेगुलेशन अधिनियम बनाने की विधायी क्षमता

है और क्या वह सूची II की प्रविष्टि 26 और 28 के अंतर्गत आने वाले विषयों में अतिक्रमण करता है। न्यायालय ने यह कहते हुए अधिनियम की वैधता को स्वीकार किया कि संसद को सूची I की प्रविष्टि 48 स्टॉक एक्सचेंज और फ्यूचर मार्केट के अंतर्गत विधायन करने की विशिष्ट विधायी क्षमता प्राप्त है। श्री शांति भूषण ने यह भी तर्क दिया कि *टीकारामजी* (उपरोक्त), *कलकत्ता गैस* (उपरोक्त) तथा *मैकडॉवेल* (उपरोक्त) के मामलों में संसद की विधायी क्षमता को चुनौती नहीं दी गई थी, बल्कि यह प्रश्न था कि क्या केंद्रीय अधिनियम और राज्य अधिनियम विभिन्न क्षेत्रों को आच्छादित करते हैं, जिससे दोनों के बीच कोई प्रतिकूलता नहीं होती। आगे यह भी तर्क दिया गया कि राज्य अधिनियम *अधिकारातीत* होंगे क्योंकि वे उन विषयों से संबंधित हैं जिन्हें प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा द्वारा संघ सूची में स्थानांतरित कर दिया गया है। श्री शांति भूषण का यह भी कहना है कि जिन सभी मामलों में संसद द्वारा बनाए गए अधिनियम की संवैधानिक वैधता को सूची I की प्रविष्टि 52 के दायरे के आधार पर चुनौती दी गई, वहाँ न्यायालय ने, *हरकचंद* (उपरोक्त) की तरह, उनकी वैधता को स्वीकार किया है। ऐसे किसी भी प्रसंगिक अवलोकन, जहाँ संसद की विधायी क्षमता पर प्रश्न नहीं उठाया गया हो, का उपयोग इस निष्कर्ष के लिए नहीं किया जा सकता कि सूची I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द को सीमित अर्थ दिया जाना चाहिए। विशेष रूप से *टीकारामजी* (उपरोक्त) के संदर्भ में विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि न्यायालय वहाँ 'उद्योग' शब्द के दायरे की व्याख्या नहीं कर रहा था, जैसा कि एससीआर के पृष्ठ 414 पर चर्चा से स्पष्ट है, बल्कि यह विचार कर रहा था कि क्या किसी उद्योग के कच्चे माल, जो उत्पादन प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं, उन्हें सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत 'उद्योग' विषय में सहायक या आनुषंगिक विषय के रूप में शामिल माना जा सकता है, और क्या केंद्रीय विधायिका गन्ना उद्योग पर विधायन करते समय प्रविष्टि 52 के अंतर्गत गन्ने पर भी विधायन कर सकती है। उनके अनुसार, निर्णय के पृष्ठ 420 पर न्यायाधीशों द्वारा किए गए अवलोकन इसी संदर्भ तक सीमित हैं। जब न्यायालय ने इस प्रश्न पर विचार ही नहीं किया कि 'उद्योग' शब्द को व्यापक

अर्थ दिया जा सकता है या नहीं, जिससे संसद विनिर्माण प्रक्रिया से परे अन्य पहलुओं को भी विनियमित कर सके, तब यह कहना उचित नहीं होगा कि सूची । की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, *टीकारामजी* (उपरोक्त) में न्यायालय प्रतिकूलता के प्रश्न पर विचार कर रहा था और उसने उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम और उत्तर प्रदेश गन्ना विनियमन अधिनियम के प्रावधानों की तुलना करके यह पाया कि दोनों विभिन्न क्षेत्रों को आच्छादित करते हैं और इसलिए साथ-साथ अस्तित्व में रह सकते हैं। यह भी तर्क दिया गया कि यदि सूची । की प्रविष्टि *7* और 52 या सूची ॥ की प्रविष्टि 24 में 'उद्योग' शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाए, तो इसके गंभीर दुष्परिणाम होंगे, क्योंकि संसद यदि प्रविष्टि *7* के अंतर्गत किसी उद्योग को देश की रक्षा या युद्ध संचालन के लिए आवश्यक घोषित करती है, तो भी वह उस उद्योग के लिए आवश्यक कच्चे माल या उससे संबंधित किसी आवश्यक तत्व के उत्पादन के संबंध में विधायन नहीं कर सकेगी, जो उस उद्योग के लिए अत्यंत आवश्यक हो सकता है।

श्री शांति भूषण, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, *आईटीसी* वाद के बहुमत निर्णय ने निस्संदेह इस न्यायालय के निर्णयों—*उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. टुल्लोच*, [1964] 4 एससीआर 461 तथा *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य*, [1969] 3 एससीसी 838—पर इस सिद्धांत के लिए अवलंबन किया कि जब केंद्र सरकार सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत किसी उद्योग को अपने नियंत्रण में ले लेती है और उसके विनियमन के लिए अधिनियम बनाती है, तब राज्य विधायिका उस क्षेत्र में विधायन करने के अधिकार से वंचित हो जाती है, और यदि वह ऐसा करती है, तो वह राज्य विधायिका की शक्तियों के अधिकारातीत होगा, क्योंकि पूरा क्षेत्र केंद्रीय विधायन द्वारा आच्छादित हो चुका होता है। टुल्लोच (उपरोक्त) तथा *बैजनाथ* (उपरोक्त) के वाद सातवीं अनुसूची की सूची । की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत संसद द्वारा बनाए गए कानूनों से संबंधित थे और न्यायालय वहाँ उन कानूनों की विधायी क्षमता का परीक्षण सूची ॥ की प्रविष्टि 23 के संदर्भ में कर रहा था, किन्तु टुल्लोच तथा बैजनाथ मामलों में

स्थापित सिद्धांत सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत बनाए गए विधायन पर भी समान रूप से लागू होते हैं, जैसा कि इस न्यायालय ने *ईश्वरी खेतान शुगर मिल्स बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, [1980] 4 एससीसी 136 के निर्णय के कंडिका 11 में कहा है। विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि वहाँ यह स्पष्ट किया गया है कि संसद द्वारा किसी विशेष उद्योग के संबंध में कानून बना दिए जाने पर राज्य की विधायी शक्ति केवल उसी सीमा तक समाप्त होती है, जिस सीमा तक संसद के अधिनियम ने उस उद्योग के किसी पहलू को वास्तव में आच्छादित किया हो। दूसरे शब्दों में, संसद के अधिनियम द्वारा किए गए आवरण की सीमा का परीक्षण करना आवश्यक है, जैसा कि गंगा शुगर वाद में कहा गया है, और यह अतिवादी तर्क स्वीकार नहीं किया गया कि उद्योग विषय के रूप में पूर्णतः राज्य विधायिका की क्षमता से बाहर हो जाता है। श्री शांति भूषण के अनुसार, यह एक स्थापित सिद्धांत है कि जब संसद अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए—चाहे वह सूची । या सूची ।।। के अंतर्गत हो—कोई कानून बनाती है, और यदि उसका प्रभाव राज्य सूची की कुछ प्रविष्टियों पर आनुषंगिक या सहायक रूप से पड़ता है, तथा संसद के कानून और राज्य के कानून के बीच कोई प्रतिकूलता उत्पन्न होती है, तो केवल उस सीमा तक संसद का कानून प्रभावी होगा जहाँ तक प्रतिकूलता है, और राज्य का कानून उस सीमा तक अप्रभावी हो जाएगा। तंबाकू बोर्ड अधिनियम और कृषि उपज बाजार समिति अधिनियम के बीच सामंजस्य के प्रश्न पर तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम की धारा 31 में निहित प्रावधान—"इस अधिनियम के प्रावधान वर्तमान में प्रवर्तित किसी अन्य विधि के अतिरिक्त होंगे, न कि उनके अपवादस्वरूप"—के संबंध में विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि इस प्रावधान का अर्थ यह नहीं लगाया जा सकता कि भले ही राज्य का कानून संसद के कानून से प्रतिकूल हो, फिर भी उसे लागू रहने दिया जाएगा। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, धारा 31 का आशय केवल इतना है कि यदि कोई अन्य कानून तंबाकू बोर्ड अधिनियम के अनुरूप है और अतिरिक्त आवश्यकताओं का प्रावधान करता है, तो उसे इस प्रकार नहीं माना जाएगा कि तंबाकू से संबंधित विषयों पर अन्य सभी कानून—चाहे वे संगत हों या असंगत—

अप्रभावी हो जाएँगे। दूसरे शब्दों में, जहाँ ऐसा कोई क्षेत्र है जिसे तंबाकू बोर्ड अधिनियम ने आच्छादित नहीं किया है, और जहाँ कोई अन्य वैध प्रावधान अस्तित्व में है, वहाँ तंबाकू बोर्ड अधिनियम बाधक नहीं होगा। इस तर्क के समर्थन में श्री शांति भूषण ने *एम. करुणानिधि बनाम भारत संघ,* [1979] 3 एससीसी 431 के निर्णय पर अवलंबन किया, जिसमें कंडिका 57 में इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह कहा कि राज्य अधिनियम, जो प्रमुख विधायन था, केवल अन्य प्रचलित कानूनों—जैसे भारतीय दंड संहिता, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम तथा आपराधिक विधि (संशोधन) अधिनियम—के अतिरिक्त होगा, न कि उनके अपवादस्वरूप। तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रावधानों का विश्लेषण करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि संसद की मंशा तंबाकू के व्यापार के क्षेत्र को आच्छादित करने की है। *बेलसुंद शुगर कंपनी,* [1999] 9 एससीसी 620 के संविधान पीठ के निर्णय पर अवलंबन करते हुए उन्होंने कहा कि यदि कोई विशेष अधिनियम किसी वस्तु के व्यापार के विनियमन से संबंधित है, तो वह कृषि बाजार अधिनियम के दायरे से बाहर हो जाता है। इस दृष्टिकोण से, तंबाकू बोर्ड अधिनियम एक विशेष अधिनियम है, जो कृषि उपज—अर्थात् तंबाकू—की खरीद-बिक्री को विनियमित करता है, जबकि विपणन अधिनियम सामान्य प्रकृति का है, अतः तंबाकू के संबंध में विपणन अधिनियम लागू नहीं रहेगा। तंबाकू बोर्ड अधिनियम, 1975 तथा बिहार कृषि उपज विपणन अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का विश्लेषण करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि दोनों अधिनियम सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते, और इसलिए आईटीसी वाद में बहुमत का यह निष्कर्ष कि राज्य द्वारा बनाया गया कृषि बाजार समिति अधिनियम *अधिकारातीत,* सही है।

श्री नागेश्वर राव, तंबाकू व्यापारी संघ की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, ने श्री शांति भूषण द्वारा प्रस्तुत सभी तर्कों को दोहराते हुए, अनेक निर्णयों पर अवलंबन करते हुए यह प्रस्तुत किया कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम एक विशेष अधिनियम है, जिसे संसद ने तंबाकू उद्योग के नियंत्रण हेतु तथा तंबाकू की खेती एवं उसके क्रय-विक्रय से संबंधित

प्रावधान करने के लिए बनाया है, जिनका तंबाकू उद्योग से प्रत्यक्ष संबंध है। अतः कृषि उपज बाजार अधिनियम के सामान्य प्रावधानों को तंबाकू बोर्ड अधिनियम के समक्ष स्थान छोड़ना होगा और इस प्रकार बाजार समिति को बाजार क्षेत्र के भीतर तंबाकू के क्रय-विक्रय पर बाजार शुल्क लगाने का कोई अधिकार नहीं होगा।

श्री राकेश द्विवेदी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जिन्होंने मुख्य रूप से यह तर्क प्रस्तुत किया कि संसद को संपूर्ण रूप से तंबाकू बोर्ड अधिनियम बनाने की विधायी क्षमता ही नहीं थी, विशेषकर तंबाकू उद्योग के कच्चे माल एवं खेती के संबंध में, बिहार राज्य की ओर से प्रस्तुत हुए। उन्होंने तर्क दिया कि सातवीं अनुसूची की सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' विषय को सर्वव्यापी नहीं माना जा सकता और इस न्यायालय की संविधान पीठ ने *टीकारामजी* (उपरोक्त) में स्पष्ट रूप से यह ठहराया है कि औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग होने के बावजूद कच्चे माल को विनिर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया में शामिल नहीं किया जा सकता। श्री द्विवेदी के अनुसार, न्यायालय को अनुसूची की किसी प्रविष्टि की व्याख्या इस प्रकार करनी चाहिए कि अन्य प्रविष्टियाँ निरर्थक न हो जाएँ। परिणामस्वरूप, कच्चा माल 'वस्तु' के रूप में सूची II की प्रविष्टि 27 में आएगा, जबकि विनिर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया 'उद्योग' के अंतर्गत सूची II की प्रविष्टि 24 में आएगी। चूँकि सूची II की प्रविष्टि 24, सूची I की प्रविष्टि 52 के अधीन है, अतः जब संसद प्रविष्टि 52 के अंतर्गत किसी उद्योग के संबंध में कानून बनाती है, तब 'उद्योग' शब्द का अर्थ सूची II की प्रविष्टि 24 में प्रयुक्त अर्थ से अधिक व्यापक नहीं हो सकता। अतः 'उद्योग' शब्द को सीमित अर्थ ही दिया जाना चाहिए, जैसा कि *टीकारामजी* वाद में किया गया और जिसे *कलकत्ता गैस, कन्नन देवन हिल्स* तथा *गंगा शुगर निगम* के मामलों में भी अनुसरण किया गया। श्री द्विवेदी ने यह भी तर्क दिया कि *बी. विश्वनाथैया एंड कंपनी बनाम कर्नाटक राज्य,* [1991] 3 एससीसी 358 में भी इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत रेशम उद्योग के संबंध में की गई घोषणा की व्याख्या करते हुए यह कहा कि कच्चे रेशम उद्योग पर नियंत्रण

केवल रेशम धागे या रेशम के उत्पादन एवं निर्माण तक सीमित है और इसमें कच्चे माल की आपूर्ति जैसे पूर्ववर्ती चरण शामिल नहीं होते। उस वाद में न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि धारा 2 के अंतर्गत की गई घोषणा किसी भी प्रकार से राज्य विधायिका की उस शक्ति को सीमित नहीं करती, जिसके अंतर्गत वह रेशम उद्योग द्वारा उत्पादित वस्तुओं के संबंध में विधायन कर सके। न्यायालय का यह मत था कि 'उद्योग' शब्द को व्यापक अर्थ देने से सूची III की प्रविष्टि 33 निरर्थक हो जाएगी। श्री द्विवेदी ने आगे यह भी तर्क दिया कि *इंडियन एल्युमिनियम कंपनी,* [1992] 3 एससीसी 580 तथा *एसआईईएल लिमिटेड बनाम भारत संघ,* [1998] 7 एससीसी 26 के मामलों में भी *टीकारामजी* तथा कलकत्ता गैस के निर्णयों का अनुसरण करते हुए यह माना गया है कि सूची II की प्रविष्टि 24 तथा सूची I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द का एक ही अर्थ होगा और इसमें व्यापार एवं वाणिज्य या वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण शामिल नहीं होंगे, जो सूची II की प्रविष्टि 26 एवं 27 के अंतर्गत आते हैं। *बेलसुंद शुगर मिल्स,* [1999] 9 एससीसी 620 के संविधान पीठ के निर्णय का संदर्भ देते हुए श्री द्विवेदी ने प्रस्तुत किया कि उस वाद में न्यायालय सूची II की प्रविष्टि 28 तथा सूची III की प्रविष्टि 33 की व्याख्या कर रहा था, और यह माना गया कि चीनी तथा गन्ना खाद्य पदार्थ हैं, जो सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आते हैं, अतः बाजार समिति अधिनियम, जो सूची II की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 से संबंधित है, गन्ना अधिनियम के अधीन होगा। अतः सूची II की प्रविष्टि 24 तथा सूची I की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द का दायरा सूची II की प्रविष्टि 26 एवं 27 या सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आने वाले विषयों को शामिल नहीं करता। इस प्रकार, यह तर्क दिया गया कि कच्चा तंबाकू, जो कृषि उपज है और तंबाकू उद्योग का कच्चा माल है, जिसे आगे संसाधित एवं परिशोधित किया जाना होता है, उसके संबंध में संसद प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा करके कोई विधायन नहीं कर सकती। चूँकि तंबाकू खाद्य पदार्थ नहीं है, इसलिए वह सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत भी नहीं आएगा, और इस प्रकार कच्चा तंबाकू राज्य विधायिका के विशिष्ट अधिकार क्षेत्र में

रहेगा। राज्य विधायिका को प्रविष्टि 14 (कृषि) तथा सूची II की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 के अंतर्गत कच्चे तंबाकू के संबंध में विधायन करने की शक्ति प्राप्त है, जैसा कि *बेलसुंद शुगर* (उपरोक्त) के निर्णय में कहा गया है। श्री द्विवेदी ने आगे तर्क दिया कि इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो जहाँ तक तंबाकू बोर्ड अधिनियम बाजार के विनियमन हेतु नीलामी मंच स्थापित करने तथा कच्चे तंबाकू की खेती को नियंत्रित करने का प्रयास करता है, वह संसद की विधायी क्षमता के बाहर है और राज्य विधायिका के विशिष्ट क्षेत्राधिकार के अंतर्गत आता है। राज्य विधायिका द्वारा बाजार क्षेत्र निर्धारित कर दिए जाने के बाद, जहाँ ही तंबाकू का व्यापार, वाणिज्य तथा उत्पादन, आपूर्ति और वितरण हो सकता है, वहाँ तंबाकू बोर्ड अधिनियम अप्रभावी हो जाएगा और राज्य का कानून प्रभावी रहेगा। *आईटीसी* वाद के बहुमत निर्णय में जिन *एम.ए. टुल्लोच* तथा *बैजनाथ केडिया* के निर्णयों पर अवलंबन किया गया था, उनके संदर्भ में श्री द्विवेदी ने तर्क दिया कि वे निर्णय यहाँ लागू नहीं होते, क्योंकि सूची II की प्रविष्टि 23 तथा सूची I की प्रविष्टि 54 की तुलना करने से स्पष्ट होता है कि दोनों का विषय-वस्तु एक ही है और सूची II की प्रविष्टि 23 स्वयं ही सूची I की प्रविष्टि 54 के अधीन है। अतः जब संसद प्रविष्टि 54 के अंतर्गत उस क्षेत्र को अपने अधीन ले लेती है, तो राज्य विधायिका की उस क्षेत्र में विधायन करने की शक्ति समाप्त हो जाती है। उन मामलों में विधायी प्रविष्टि को संकीर्ण या व्यापक अर्थ देने का प्रश्न उत्पन्न ही नहीं होता। अतः सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत इस न्यायालय के बहुमत निर्णय द्वारा खनन संबंधी विधायन से संबंधित निर्णयों पर अवलंबन करना पूर्णतः अनुचित था। श्री द्विवेदी ने यह भी तर्क दिया कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम बिहार राज्य तथा अन्य अनेक राज्यों में पूर्णतः प्रवर्तित नहीं किया गया है, उदाहरणार्थ धारा 13, 13क तथा 14क। ऐसी स्थिति में, जिन राज्यों में उपर्युक्त प्रावधान लागू नहीं किए गए हैं, वहाँ राज्य अधिनियम, अर्थात् कृषि उपज बाजार समिति अधिनियम के संचालन में कोई बाधा नहीं हो सकती। सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द की विधायी पृष्ठभूमि के संदर्भ में श्री द्विवेदी ने तर्क दिया कि नियंत्रित उद्योगों के

उत्पादों के व्यापार एवं वाणिज्य, उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के विनियमन हेतु एक पृथक प्रविष्टि का होना इस बात की ओर संकेत करता है कि प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द का अर्थ सीमित ही होगा। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि यदि अपीलकर्ता का यह तर्क स्वीकार कर लिया जाए कि 'उद्योग' शब्द को व्यापक अर्थ दिया जाना चाहिए, तो इससे शक्तियों के वितरण की संवैधानिक योजना ही नष्ट हो जाएगी। श्री द्विवेदी ने *टीकारामजी* के निर्णय तथा इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के *एसआईईएल* वाद के निर्णय का उल्लेख करते हुए यह बताया कि इन मामलों में व्यापार एवं वाणिज्य तथा वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण से संबंधित विधि का किस प्रकार विकास हुआ। उन्होंने यह भी इंगित किया कि द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति तथा आपातकाल की समाप्ति के पश्चात भारत (केंद्रीय सरकार एवं विधानमंडल) अधिनियम, 1946 के माध्यम से इन विषयों पर विधायन करने की शक्ति केंद्रीय विधायिका को प्रदान की गई। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि यद्यपि भारत शासन अधिनियम, 1935 के अंतर्गत व्यापार, वाणिज्य, उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के विषय प्रांतीय विधायिका के अधिकार क्षेत्र में थे, तथापि केंद्रीय विधायिका द्वारा अस्थायी रूप से इस विषय पर कानून बनाए गए। भारत के संविधान में अनुच्छेद 369 को सम्मिलित किया गया, जो संसद को पाँच वर्षों की अवधि के लिए कुछ निर्दिष्ट उत्पादों के संबंध में व्यापार एवं वाणिज्य तथा उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण के विषयों पर विधायन करने का अधिकार देता है। अनुच्छेद 369 स्वयं यह दर्शाता है कि कच्चा कपास, कच्चा जूट, कपास बीज आदि विषय सूची II की प्रविष्टियों के अंतर्गत आते हैं, और इस अनुच्छेद का हाशिया शीर्षक भी इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश डालता है। अनुच्छेद 249, 250, 252 तथा 253 का संदर्भ देते हुए विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि ये विशेष प्रावधान हैं, जिनके अंतर्गत राष्ट्रीय हित में, आपातकाल की घोषणा के दौरान, अथवा दो या अधिक राज्यों की सहमति से, संसद राज्य सूची के विषयों पर भी विधायन कर सकती है। संविधान सभा में अनुच्छेद 249 के संबंध में व्यापक बहस हुई थी और इस बात का कड़ा विरोध किया गया था कि राष्ट्रीय हित के नाम

पर संसद को अत्यधिक व्यापक शक्ति प्रदान की जाए, जिससे भारतीय संघीय व्यवस्था का स्वरूप समाप्त हो सकता है और भारत एकात्मक राज्य में परिवर्तित हो सकता है। इसी कारण अनुच्छेद 249 को संशोधित कर संसद द्वारा बनाए गए ऐसे कानूनों की अवधि सीमित कर दी गई। श्री द्विवेदी ने यह भी तर्क दिया कि सूची । की प्रविष्टि 7 तथा प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द को केवल उन उद्योगों के विनिर्माण की प्रक्रिया तक सीमित रखा जाना चाहिए, जिन्हें देश की रक्षा अथवा युद्ध संचालन के लिए आवश्यक घोषित किया गया है। उनके अनुसार, केवल इस आधार पर कि युद्ध संबंधी स्थिति से संबंधित विषय राज्य सूची में आते हैं, 'उद्योग' शब्द को व्यापक अर्थ देने की कोई आवश्यकता या बाध्यता नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि ऐसी स्थिति में सूची III की प्रविष्टि 33 संसद के लिए सदैव उपलब्ध है, जिससे वह उत्पादों के नियंत्रण के लिए विधायन कर सकती है, और अनुच्छेद 250 संसद को आपातकाल की घोषणा के दौरान राज्य सूची के किसी भी विषय पर विधायन करने की अधिरोहक शक्ति प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 352 से 354 तक राष्ट्रपति को यह शक्ति प्रदान करते हैं कि वह घोषणा द्वारा आपातकाल घोषित कर सकते हैं और उसे तब तक बनाए रख सकते हैं जब तक युद्ध या रक्षा की आवश्यकता बनी रहे। अनुच्छेद 353 के अनुसार संसद की शक्ति उन विषयों पर भी विधायन करने तक विस्तृत हो जाती है, जो संघ सूची में वर्णित नहीं हैं। अतः संविधान निर्माताओं ने शक्तियों के वितरण की ऐसी सुविचारित व्यवस्था की है कि देश में युद्ध या आपातकाल की स्थिति में संसद को किसी भी आवश्यक विषय पर विधायन करने में कोई कठिनाई न हो। इसलिए सामान्य परिस्थितियों में 'उद्योग' शब्द को व्यापक अर्थ देने का कोई औचित्य नहीं है, जिससे राज्य विधायिकाएँ सूची II में वर्णित अनेक विषयों पर विधायन करने की अपनी शक्ति से वंचित हो जाएँ। श्री द्विवेदी के अनुसार, इस संदर्भ में सूची । की प्रविष्टि 5 का उल्लेख पूर्णतः भ्रांतिपूर्ण है, क्योंकि वह हथियारों से संबंधित एक विशिष्ट प्रविष्टि है और वह सूची II की प्रविष्टि 27 अथवा सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत नहीं आती। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि अनुच्छेद 254(1) का

संदर्भ भी इस प्रसंग में अनुचित है, क्योंकि यह प्रावधान केवल समवर्ती सूची के विषयों पर संसद और राज्य विधायिका दोनों द्वारा बनाए गए कानूनों के बीच प्रतिकूलता के प्रश्न से संबंधित है। अनुच्छेद 254(1) में प्रयुक्त 'प्रतिकूलता' शब्द केवल समवर्ती सूची के विषयों पर लागू होता है, और इस संदर्भ में उन्होंने दीप चंद, [1959] पूरक 2 एससीआर 8 तथा *होएस्ट केमिकल्स*, [1983] 4 एससीसी 45 के निर्णयों पर अवलंबन किया। अंततः श्री द्विवेदी ने यह तर्क दिया कि संघवाद हमारे संविधान की एक मूलभूत विशेषता है, जैसा कि एस.आर. बोम्मई, [1994] 3 एससीसी 1 के निर्णय में इस न्यायालय द्वारा कहा गया है। अतः किसी विधायी प्रविष्टि की ऐसी व्याख्या, जो किसी अन्य विधायी निकाय को उसके अधिकार क्षेत्र के अनेक विषयों पर विधायन करने से वंचित कर दे, संविधान की मूल संरचना के प्रतिकूल होगी। इसलिए न्यायालय को 'उद्योग' शब्द को सूची । की प्रविष्टि 7 एवं 52 तथा सूची ॥ की प्रविष्टि 24 में व्यापक अर्थ देने से बचना चाहिए। संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों के संदर्भ में श्री द्विवेदी ने तर्क दिया कि राज्य विधानमंडलों को राज्य सूची की प्रविष्टियों के संबंध में कानून बनाने की विशिष्ट शक्ति प्राप्त है और केवल निर्दिष्ट परिस्थितियों में ही संसद उन विषयों पर विधायन कर सकती है। इस दृष्टिकोण से, उन्होंने कहा कि सूची । की प्रविष्टियों की व्याख्या अत्यधिक व्यापक रूप से नहीं की जानी चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय ने *आईटीसी* वाद में किया। विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि बिहार राज्य में तंबाकू के संबंध में बाजार अधिनियम सूची ॥ की प्रविष्टि 26 और 27 से संबंधित है, जबकि संसद द्वारा बनाया गया तंबाकू बोर्ड अधिनियम तंबाकू की खेती, परिशोधन तथा विपणन की संपूर्ण प्रक्रिया को अपने भीतर समाहित करता है। गन्ना उद्योग के वाद (*टीकारामजी*) के विपरीत, जहाँ कच्चे माल को अलग माना गया था, तंबाकू उद्योग को कच्चे माल के संदर्भ में विभाजित नहीं किया जा सकता। उनके अनुसार, तंबाकू की खेती, उसका परिशोधन तथा विपणन एक समेकित औद्योगिक प्रक्रिया है और यह तंबाकू उद्योग का अभिन्न अंग है। तंबाकू बोर्ड अधिनियम का उद्देश्य उत्तम गुणवत्ता के तंबाकू के निर्यात को बढ़ावा देना तथा विदेशी मुद्रा

भंडार को सुदृढ़ करना है, न कि विभिन्न राज्यों के सामान्य बाजारों में तंबाकू के क्रय-विक्रय को नियंत्रित करना। अतः भारत के विभिन्न बाजारों में तंबाकू के व्यापार एवं वाणिज्य, उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण को तंबाकू बोर्ड अधिनियम द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि संबंधित अधिनियम केवल सूची । की प्रविष्टि 52 के क्षेत्र तक सीमित नहीं है, क्योंकि विदेशी मुद्रा सूची । की प्रविष्टि 36 के अंतर्गत आती है, जबकि उत्पादकों को उचित एवं लाभकारी मूल्य सुनिश्चित करने तथा निर्यात के लिए न्यूनतम मूल्य निर्धारित करने संबंधी प्रावधान सूची III की प्रविष्टि 34 से संबंधित हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में 'उद्योग' शब्द को उसके व्यापकतम अर्थ में परिभाषित करना संभव नहीं है। आगे यह तर्क दिया गया कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम नीलामी मंच पर तंबाकू की बिक्री को विनियमित करने से संबंधित है, किन्तु जहाँ तक कच्चे माल के उत्पादन का प्रश्न है, वह 'कृषि' के अंतर्गत आता है, जो सूची II की प्रविष्टि 14 के अंतर्गत राज्य का विशिष्ट विषय है, और संसद इस क्षेत्र में अतिक्रमण नहीं कर सकती। इस संदर्भ में विद्वान अधिवक्ता ने *ए.एस. कृष्णा*, [1957] एससीआर 399 के निर्णय पर अवलंबन किया। श्री द्विवेदी ने कंपनी की ओर से प्रस्तुत इस तर्क से असहमति व्यक्त की कि तंबाकू उद्योग एक समग्र और एकीकृत उद्योग है, जिसमें तंबाकू की खेती, परिशोधन, विपणन और निर्यात सभी शामिल हैं। उनके अनुसार, तंबाकू की खेती पूर्णतः कृषि है और औद्योगिक प्रक्रिया तब प्रारंभ होती है जब उद्योग कच्चे तंबाकू को खरीदकर उसका परिशोधन प्रारंभ करता है। अतः राज्य विधानमंडल द्वारा बनाया गया बाजार अधिनियम पूर्णतः सक्षम, वैध और विधिसम्मत है, जो स्थानीय बाजार क्षेत्र में तंबाकू के क्रय-विक्रय को नियंत्रित करता है। बिहार अधिनियम के प्रावधानों का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि इसे सूची II की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत इस उद्देश्य से बनाया गया है कि कृषि उत्पादों के क्रय-विक्रय का बेहतर विनियमन किया जा सके तथा कृषि उपज के लिए बाजार स्थापित किए जा सकें। बाजार अधिनियम और तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रावधानों की तुलना से यह स्पष्ट होता है कि दोनों अधिनियम साथ-साथ संचालित हो सकते हैं,

विशेषकर तब जब तंबाकू बोर्ड ने बिहार में कोई नीलामी मंच या बाजार केंद्र स्थापित नहीं किया है और धारा 13, 13क तथा 14 जैसे कई महत्वपूर्ण प्रावधान लागू नहीं किए गए हैं। यदि तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रावधानों की व्यापक व्याख्या की जाए, तो यह मानना पड़ेगा कि संसद को तंबाकू के परिशोधन से पूर्व की किसी भी अवस्था के संबंध में कानून बनाने की क्षमता नहीं है। श्री द्विवेदी ने यह भी तर्क दिया कि *आईटीसी* वाद में इस न्यायालय ने राज्य अधिनियम को अवैध ठहराते समय यह मान लिया था कि पूरा क्षेत्र केंद्रीय विधायन द्वारा आच्छादित है, किन्तु बिहार राज्य में तंबाकू बोर्ड द्वारा धारा 8, 20 तथा 20क के अंतर्गत कोई कदम नहीं उठाए गए हैं और अन्य प्रावधान भी लागू नहीं किए गए हैं, अतः यह नहीं कहा जा सकता कि पूरा क्षेत्र तंबाकू अधिनियम द्वारा आच्छादित है। उन्होंने यह भी विशेष रूप से तर्क दिया कि संसद ने सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत तंबाकू उद्योग के संबंध में कानून बनाते समय तंबाकू बोर्ड अधिनियम में धारा 31 को शामिल किया है, जो स्पष्ट रूप से यह दर्शाती है कि यह अधिनियम अन्य प्रचलित कानूनों के अतिरिक्त है, न कि उनके अपवादस्वरूप। ऐसी स्थिति में बाजार अधिनियम को लागू रहने दिया जाना चाहिए और बाजार समिति को बाजार क्षेत्र में तंबाकू के क्रय-विक्रय पर बाजार शुल्क लगाने का अधिकार होगा। इस संदर्भ में *एम. करुणानिधि*, [1979] 3 एससीसी 431, *चानन मल*, [1977] 1 एससीसी 340 तथा *ईश्वरी खेतान*, [1980] 4 एससीसी 136 के निर्णयों पर अवलंबन किया गया। आईटीसी वाद के बहुमत निर्णय के संबंध में उन्होंने यह भी तर्क दिया कि उसमें *टीकारामजी*, *कलकत्ता गैस* आदि अनेक महत्वपूर्ण निर्णयों पर विचार नहीं किया गया। अंततः श्री द्विवेदी ने यह तर्क दिया कि जब संसद द्वारा सूची । की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत तथा राज्य विधानमंडल द्वारा सूची ।। की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत बनाए गए कानूनों के बीच कोई संघर्ष उत्पन्न होता है, तो न्यायालय का दायित्व है कि वह दोनों के बीच सामंजस्य स्थापित करे, जो व्याख्या का एक स्थापित सिद्धांत है। किन्तु *आईटीसी* वाद में बहुमत ने दोनों अधिनियमों के प्रावधानों का इस दृष्टि से परीक्षण नहीं किया कि क्या वे

साथ-साथ संचालित हो सकते हैं, जबकि माननीय न्यायमूर्ति मुखर्जी के निर्णय में यह कहा गया कि दोनों अधिनियम अपने-अपने क्षेत्र में संचालित हो सकते हैं। श्री द्विवेदी के अनुसार, 'क्षेत्र के अधिग्रहण' का सिद्धांत मुख्यतः समवर्ती सूची की प्रविष्टियों की व्याख्या में प्रासंगिक होता है और इसका प्रयोग तब नहीं किया जा सकता जब संबंधित विधायन सूची । की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत किया गया हो। श्री द्विवेदी के अनुसार, जहाँ संसद द्वारा बनाया गया कोई विधायन संपूर्ण क्षेत्र को आच्छादित करता हुआ पाया जाता है, वहाँ उस क्षेत्र के अधिग्रहण की सीमा का परीक्षण सूची III की प्रविष्टि 33 के संदर्भ में किया जाना चाहिए, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि राज्य विधायिका के लिए कौन-सा क्षेत्र शेष रहता है, और यदि कोई प्रतिकूलता उत्पन्न होती है, तो उसका समाधान अनुच्छेद 254 के संदर्भ में किया जाना चाहिए। किन्तु चूँकि संबंधित अधिनियम (तंबाकू बोर्ड अधिनियम) सूची III की प्रविष्टि 33 के संदर्भ में निर्मित नहीं है, अतः अनुच्छेद 254 के आधार पर निकाला गया निष्कर्ष पूर्णतः त्रुटिपूर्ण है। अंततः यह तर्क दिया गया कि *आईटीसी* वाद में बहुमत का निर्णय टीकारामजी, कलकत्ता गैस तथा अन्य संविधान पीठ के पूर्ववर्ती निर्णयों पर विचार किए बिना दिया गया है, अतः वह विधि की दृष्टि से अस्थिर है और इस संविधान पीठ को यह घोषित करना चाहिए कि आईटीसी मामला सही रूप से निर्णयित नहीं हुआ। सूची । तथा सूची II की विभिन्न प्रविष्टियों में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द की व्याख्या करते समय एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में दिए गए अर्थ का संदर्भ लेना पूर्णतः अनुचित होगा, जैसा कि इस न्यायालय ने *टीकारामजी* में कहा है। यह भी तर्क दिया गया कि संविधान की सातवीं अनुसूची की प्रविष्टियों के दायरे को इस आधार पर निर्धारित नहीं किया जा सकता कि संसद किसी विशेष वाद में कितना क्षेत्र आच्छादित करना चाहती है। सूची । की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' शब्द का दायरा संसद के विधायन के अनुसार न तो विस्तृत हो सकता है और न ही संकुचित। संसद के विधायन की क्षमता का परीक्षण उस विधायन की प्रकृति के आधार पर नहीं किया जा सकता जो बनाया गया है। इसी प्रकार सूची II की प्रविष्टियों का दायरा भी समय-समय पर

संसद द्वारा बनाए गए अधिनियमों के आधार पर निर्धारित नहीं किया जा सकता। इसके विपरीत, प्रविष्टियों का दायरा एक-दूसरे के संदर्भ में, उनके प्रसंग को ध्यान में रखते हुए, इस प्रकार निर्धारित किया जाना चाहिए कि कोई भी प्रविष्टि निरर्थक न हो जाए। यह सिद्धांत *मैकडॉवेल,* [1996] 3 एससीसी 709 में इस न्यायालय द्वारा स्थापित किया गया है। चूँकि किसी भी विधायन की वैधता—चाहे वह संसद द्वारा बनाया गया हो या राज्य द्वारा—संविधान की सातवीं अनुसूची की प्रविष्टियों के संदर्भ में ही परखी जाती है, अतः किसी प्रविष्टि में प्रयुक्त विधायी विषय को भिन्न-भिन्न रूप से व्याख्यायित नहीं किया जा सकता। दूसरे शब्दों में, सूची II की प्रविष्टि 24 तथा सूची I की प्रविष्टि 7 और 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द का अर्थ एक ही होना चाहिए। ऐसी स्थिति में संसद को उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम में संशोधन कर गन्ने को शामिल करने की अनुमति नहीं दी जा सकती, जैसा कि इस न्यायालय ने *बेलसुंद शुगर* में कहा है। श्री द्विवेदी ने श्री शांति भूषण के इस तर्क का खंडन किया कि *टीकारामजी* में किए गए अवलोकनों को केवल उस वाद के तथ्यों तक सीमित माना जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि यद्यपि *टीकारामजी* में संसद के अधिनियम की वैधता पर प्रश्न नहीं था और राज्य द्वारा बनाए गए गन्ना अधिनियम की वैधता विचाराधीन थी, फिर भी न्यायालय ने यह परीक्षण किया था कि क्या राज्य अधिनियम सूची I की प्रविष्टि 52 में अतिक्रमण करता है, क्योंकि गन्ना उद्योग उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 के अंतर्गत नियंत्रित उद्योग था। इसके अतिरिक्त, संविधान पीठ ने उस वाद में संवैधानिक इतिहास का विस्तृत परीक्षण किया, जिसमें भारत शासन अधिनियम की प्रविष्टियों का भी समावेश था, और अंततः यह निष्कर्ष निकाला कि कच्चा माल, जो विनिर्माण से पूर्व की अवस्था है, 'उद्योग' के दायरे में नहीं आता। अतः किसी अन्य संविधान पीठ के लिए यह अनुमेय नहीं है कि वह पूर्ववर्ती संविधान पीठ के निर्णय को उसके तथ्यों तक सीमित करके दरकिनार कर दे, विशेषकर तब जब उस निर्णय का अनुसरण बाद में कई संविधान पीठों द्वारा किया गया हो और वह दो दशकों से अधिक समय तक स्थापित विधि बना रहा हो।

बंथिया वाद के संदर्भ में श्री द्विवेदी ने तर्क दिया कि उस निर्णय में विचाराधीन प्रश्न यह था कि क्या सुनार का कार्य हस्तशिल्प है या 'उद्योग' के अंतर्गत आता है, और न्यायालय ने सूची । की प्रविष्टि 52 अथवा सूची III की प्रविष्टि 33 के संदर्भ में 'उद्योग' की व्यापक परिभाषा का परीक्षण नहीं किया था। न्यायालय ने यह भी कहा था कि 'उद्योग' शब्द की सटीक परिभाषा देना या उसके सभी पहलुओं का विस्तार से वर्णन करना आवश्यक नहीं है। तथापि, न्यायालय ने यह माना कि सोने के आभूषणों का निर्माण एक व्यवस्थित उत्पादन प्रक्रिया है और इसलिए वह 'उद्योग' के अंतर्गत आता है। इस प्रकार हरकचंद का निर्णय भी *टीकारामजी* के सिद्धांत का अनुसरण करता है और उससे भिन्न नहीं है। *हरकचंद* में सर्वोच्च न्यायालय ने औद्योगिक विवाद अधिनियम में दी गई 'उद्योग' की परिभाषा को अपनाने से भी इंकार कर दिया था। श्री द्विवेदी के अनुसार, हरकचंद और बंथिया के निर्णयों का उपयोग कृषि कच्चे माल या उसके उत्पादन को सूची । की प्रविष्टि 52 में 'उद्योग' के अंतर्गत लाने के लिए नहीं किया जा सकता, चाहे उस शब्द की व्याख्या कितनी ही व्यापक क्यों न की जाए। ईश्वरी खेतान के निर्णय के संदर्भ में श्री द्विवेदी ने कहा कि उस निर्णय में न्यायालय यह परीक्षण कर रहा था कि सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत बनाए गए कानून के कारण सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत राज्य की विधायी शक्ति किस सीमा तक समाप्त होती है। न्यायालय ने यह पाया कि राज्य की शक्ति का क्षरण पूर्ण नहीं है, बल्कि केवल उसी सीमा तक है, जितना संसद के अधिनियम द्वारा नियंत्रण स्थापित किया गया है। संसद द्वारा बनाए गए कानून का दायरा केवल इस उद्देश्य से देखा जाता है कि यह निर्धारित किया जा सके कि सूची II की प्रविष्टि 24 से कितना क्षेत्र बाहर हो गया है, उससे अधिक नहीं। यद्यपि इस वाद में न्यायालय ने *पश्चिम बंगाल राज्य बनाम भारत संघ*, [1964] 1 एससीसी 371 के निर्णय का उल्लेख किया, किन्तु उस वाद में 'उद्योग' शब्द का दायरा विचाराधीन नहीं था और इसलिए *टीकारामजी* का उल्लेख नहीं किया गया था। इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि संविधान पीठ *टीकारामजी* से भिन्न कोई नया सिद्धांत स्थापित कर रही थी। श्री द्विवेदी ने

यह भी कहा कि *ईश्वरी खेतान* में *बैजनाथ केडिया* के निर्णय का उल्लेख किया गया था, किन्तु वह केवल इस सीमित उद्देश्य से था कि दोनों ही मामलों में राज्य की शक्ति का क्षरण केवल नियंत्रण की सीमा तक ही होता है—जहाँ *बैजनाथ* का संबंध सूची II की प्रविष्टि 23 से था, वहीं *ईश्वरी खेतान* का संबंध प्रविष्टि 24 से था। अन्य प्रविष्टियों का प्रश्न वहाँ विचाराधीन नहीं था। अतः यह कहना गलत होगा कि *ईश्वरी खेतान* ने यह स्थापित किया कि संपूर्ण क्षेत्र केंद्रीय विधायन द्वारा आच्छादित हो जाता है, जैसा कि *आईटीसी* वाद के बहुमत निर्णय में कहा गया। इस संदर्भ में श्री द्विवेदी ने *बेलसुंद शुगर कंपनी*, [1999] 9 एससीसी 620 के संविधान पीठ के निर्णय पर अवलंबन किया, जिसमें कंडिका 117 और 118 में खनन एवं खनिज विनियमन से संबंधित मामलों का उल्लेख किया गया और अंततः यह कहा गया कि उन प्रविष्टियों की योजना, सूची I की प्रविष्टि 52 और सूची II की प्रविष्टि 24 की योजना से भिन्न है। श्री द्विवेदी के अनुसार, *बेलसुंद शुगर* का निर्णय इस बात का समर्थन करता है कि संसद को तंबाकू बोर्ड अधिनियम के माध्यम से तंबाकू की खेती तथा कच्चे माल के क्षेत्र को विनियमित करने की विधायी क्षमता नहीं है। उन्होंने इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के *एसआईईएल* वाद (एआईआर 1996 इलाहाबाद 135) पर भी विशेष रूप से अवलंबन किया और कहा कि उस निर्णय में सभी प्रासंगिक निर्णयों पर विचार कर सही निष्कर्ष निकाला गया है। अंततः श्री द्विवेदी ने यह तर्क दिया कि *टीकारामजी* में प्रतिपादित सिद्धांतों को बाद के मामलों में अनुमोदित किया गया है, *गंगा शुगर* वाद में न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने भी समान तर्क को अस्वीकार किया है, और *बेलसुंद शुगर* के निर्णय ने भी टीकारामजी को अनुमोदित किया है। अतः अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि आईटीसी वाद में बहुमत का दृष्टिकोण गलत है और संसद को तंबाकू उद्योग को नियंत्रित उद्योग घोषित करने के पश्चात तंबाकू बोर्ड अधिनियम बनाते समय तंबाकू की खेती या उसके परिशोधन से पूर्व की अवस्था में उसके क्रय-विक्रय को विनियमित करने का कोई विधायी अधिकार प्राप्त नहीं था।

डॉ. ए.एम. सिंहवी, कृषि उपज बाजार समिति, मुंगेर की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, ने सातवीं अनुसूची की सूची I, सूची II तथा सूची III की विभिन्न प्रविष्टियों के विश्लेषण के आधार पर यह प्रस्तुत किया कि सूची II की कुल 66 प्रविष्टियों में से 9 प्रविष्टियाँ विशेष रूप से सूची I के अधीन बनाई गई हैं तथा 3 प्रविष्टियाँ सूची III के अधीन हैं। किंतु सूची II की प्रविष्टि 24 ही ऐसी है, जो सूची I की प्रविष्टि 52 के अधीन है। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, जहाँ-जहाँ संविधान का यह आशय था कि सूची II की प्रविष्टियाँ सूची I के अधीन हों, वहाँ यह स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट किया गया है। परंतु जहाँ कोई प्रविष्टि सूची II में न तो सूची I और न ही सूची III के अधीन है, वहाँ उस विषय पर राज्य विधायिका की विधायी शक्ति सर्वोच्च होती है। चूँकि बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम सूची II की प्रविष्टि 14 तथा 28 से संबंधित है, जो न तो सूची I और न ही सूची III की किसी प्रविष्टि के अधीन है, अतः राज्य विधायिका की शक्ति पूर्ण है और इस अधिनियम के निर्माण पर कोई प्रतिबंध नहीं है। *मैकडॉवेल,* [1996] 3 एससीसी 709 के निर्णय में प्रयुक्त "सूची I के अधीन" अभिव्यक्ति के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने यह कहा है कि 'उद्योग' के संबंध में विधायन करने की शक्ति सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत राज्यों के पास है, परंतु यह प्रविष्टि सूची I की प्रविष्टि 7 तथा 52 के अधीन है। यदि संसद यह घोषणा करती है कि किसी विशेष उद्योग को सार्वजनिक हित में अपने नियंत्रण में लेना आवश्यक है, तो वह उद्योग सूची I में स्थानांतरित हो जाता है। किन्तु विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, इस प्रकार की घोषणा का यह अर्थ नहीं है कि वह उद्योग पूर्णतः राज्य सूची से हटकर संघ सूची में समाहित हो जाता है। सूची I की प्रविष्टि 52 केवल सूची II की प्रविष्टि 24 को नियंत्रित करती है, अन्य प्रविष्टियों—जैसे प्रविष्टि 8—को नहीं, जैसा कि *मैकडॉवेल* वाद में विचार किया गया था। अतः राज्य विधायिका की शक्ति को अन्य प्रविष्टियों के संदर्भ में समाप्त नहीं किया जा सकता। इस प्रकार, संविधान निर्माताओं ने यह स्पष्ट रूप से व्यवस्था की है कि जहाँ सूची II की कोई प्रविष्टि सूची I या सूची III के अधीन नहीं है, वहाँ उस क्षेत्र में राज्य विधायिका की शक्ति

विशिष्ट और पूर्ण है, और वह क्षेत्र संघ के लिए निषिद्ध होगा। श्री द्विवेदी के तर्कों को दोहराते हुए डॉ. सिंहवी ने भी यह कहा कि 'क्षेत्र के अधिग्रहण' का सिद्धांत केवल उन विधानों के संदर्भ में प्रासंगिक है, जो सूची III की प्रविष्टियों से संबंधित हैं। चूँकि प्रविष्टि 14 और 28 किसी भी प्रकार से सूची I की प्रविष्टियों के अधीन नहीं हैं, अतः बिहार विधानमंडल पूर्णतः सक्षम था कि वह कृषि उपज बाजार अधिनियम बनाए, और जब इस अधिनियम के अंतर्गत तंबाकू को कृषि उपज घोषित कर दिया गया, तो बाजार क्षेत्र में उसके क्रय-विक्रय पर शुल्क लगाने की शक्ति केंद्रीय विधायन द्वारा सीमित नहीं की जा सकती। डॉ. सिंहवी के अनुसार, इस सीमा तक केंद्रीय विधायन को अवैध माना जाना चाहिए। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि यदि दो सूचियों की प्रविष्टियों के बीच कोई संभावित टकराव हो, तो उन्हें संकीर्ण अर्थ देने के बजाय इस प्रकार पढ़ा जाना चाहिए कि दोनों का सामंजस्य स्थापित हो सके। यह व्याख्या की वह पद्धति है, जो संविधान के "संघीय ढाँचे" को संरक्षित एवं प्रोत्साहित करती है, जिसे इस न्यायालय ने *एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ*, [1994] 3 एससीसी 1 में संविधान की मूल संरचना माना है। संघवाद का मूल तत्व यह है कि प्रत्येक सूची के भीतर संबंधित विधायिका सर्वोच्च होती है। सूची I और सूची II के विषयों के बीच प्रतिकूलता की अवधारणा लागू नहीं होती; यह केवल सूची III के संदर्भ में प्रासंगिक है। यह सही है कि सूची I की प्रविष्टि 52 केवल सूची II की प्रविष्टि 24 को अधिभूत करती है, न कि अन्य प्रविष्टियों को। *बिहार डिस्टिलरी*, [1999] 2 एससीसी 727 तथा *डालमिया उद्योग*, [1994] 2 एससीसी 583 के मामलों में इस न्यायालय ने यह माना है कि मदिरा उद्योग के उत्पादों के व्यापार, वाणिज्य, उत्पादन एवं वितरण को केंद्र और राज्य दोनों विनियमित कर सकते हैं। अतः बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम, जो सूची II की प्रविष्टि 14 और 28 से संबंधित है, स्वतंत्र रूप से संचालित होगा और सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा बनाए गए कानून से प्रभावित नहीं होगा। इस संदर्भ में उन्होंने *बेलसुंद*, [1999] 9 एससीसी 620 के निर्णय के कंडिका 70 का उल्लेख किया। डॉ. सिंहवी के अनुसार, तंबाकू अधिनियम की धारा

31 यह दर्शाती है कि संसद की मंशा संपूर्ण क्षेत्र को अन्य अधिनियमों के अपवर्जन में नियंत्रित करने की नहीं थी। अतः बाजार समिति को तंबाकू के क्रय-विक्रय पर बाजार शुल्क लगाने से वंचित करने का कोई औचित्य नहीं है, क्योंकि यह अधिनियम राज्य विधायिका द्वारा प्रविष्टि 14 और 28 के अंतर्गत विधिसम्मत रूप से बनाया गया है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि केवल प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा करना पर्याप्त नहीं है; यह भी देखना आवश्यक है कि क्या वास्तव में कोई विधायन उस क्षेत्र को आच्छादित करता है। केवल शक्ति का अस्तित्व पर्याप्त नहीं है; उस शक्ति का प्रयोग होना चाहिए और उसके परिणामस्वरूप क्षेत्र का वास्तविक अधिग्रहण होना चाहिए, जिससे यह कहा जा सके कि केंद्रीय कानून राज्य कानून से टकराता है। इस संदर्भ में *बेलसुंद*, [1999] 9 एससीसी 620 (चाय के संबंध में), *वेस्टर्न कोल फील्ड्स*, [1982] 1 एससीसी 125 तथा *फतेहचंद*, [1977] 2 एससीसी 677 के निर्णयों पर अवलंबन किया गया। डॉ. सिंहवी के अनुसार, वर्तमान वाद में तंबाकू अधिनियम और बिहार अधिनियम के बीच न तो कोई टकराव है और न ही प्रतिकूलता, क्योंकि दोनों अधिनियम अलग-अलग क्षेत्रों में कार्य करते हैं। अतः *आईटीसी* वाद का बहुमत निर्णय यहाँ लागू नहीं होगा। उन्होंने एक अत्यधिक तर्क यह भी प्रस्तुत किया कि भले ही केंद्रीय विधायन को यह माना जाए कि उसने सूची । के अंतर्गत संपूर्ण क्षेत्र को आच्छादित कर लिया है, तब भी राज्य अधिनियम लागू रह सकता है और बाजार समिति, उसके द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के प्रतिफल के सिद्धांत के आधार पर बाजार शुल्क वसूल सकती है। इस संदर्भ में उन्होंने *सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स जेटी* (1989) 4 एससी 467 के निर्णय पर अवलंबन किया। डॉ. सिंहवी के अनुसार, सूची ॥ की प्रविष्टि 24 तथा सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त 'उद्योग' शब्द उन विषयों को सम्मिलित नहीं करता, जो अन्य प्रविष्टियों में विशिष्ट रूप से अलग-अलग रूप से वर्णित हैं। यदि 'उद्योग' शब्द को व्यापक अर्थ दिया जाए, तो यह शक्तियों के वितरण की संवैधानिक योजना तथा सूची । की प्रविष्टि 52, सूची ॥ की प्रविष्टि 24, 26 और 27 तथा सूची ॥। की प्रविष्टि 33 के बीच स्थापित संरचनात्मक संबंध को

बाधित करेगा और राज्य सूची को उस उद्योग के संदर्भ में निरर्थक बना देगा। अतः खनन एवं खनिज संबंधी मामलों के निर्णय यहाँ प्रासंगिक नहीं हैं, क्योंकि वहाँ सूची II की प्रविष्टि 23 और सूची I की प्रविष्टि 54 के बीच विशिष्ट संबंध है। जब प्रविष्टि 54 के अंतर्गत घोषणा की जाती है, तो खनिज एवं उससे संबंधित विषय राज्य सूची से हटकर संघ सूची में चले जाते हैं। किन्तु प्रविष्टि 52 और प्रविष्टि 24 के संदर्भ में ऐसी स्थिति नहीं है। अतः विद्वान अधिवक्ता ने निष्कर्षतः आग्रह किया कि *आईटीसी* वाद में बहुमत का निर्णय अपास्त किया जाना चाहिए।

श्री जी.एल. सांघी, मध्य प्रदेश अपीलों में मंडी समिति की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, ने यह प्रस्तुत किया कि वर्तमान वाद में मुख्य परीक्षण यह होना चाहिए कि क्या राज्य अधिनियम सूची II की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत राज्य विधायिका के विशिष्ट विषयाधिकार के भीतर आता है। उनके अनुसार, दोनों अधिनियमों के बीच कोई ऐसा असंगत टकराव नहीं है जिसे समन्वित न किया जा सके, और यह तथ्य केंद्रीय अधिनियम की धारा 31 से भी स्पष्ट होता है। राज्य अधिनियम का उद्देश्य बाजार स्थलों की स्थापना करना है, और इस उद्देश्य की पूर्ति विभिन्न प्रावधानों के माध्यम से व्यापक आधारभूत संरचना तथा विविध प्रकार की सेवाओं के प्रावधान द्वारा की गई है। अतः राज्य अधिनियम यह उचित रूप से अपेक्षा करता है कि जो व्यक्ति इन सेवाओं का उपयोग करें, वे आवश्यक बाजार शुल्क का भुगतान करें, तथा बाजार क्षेत्र या बाजार यार्ड में कार्य करने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियों के लिए अनुज्ञप्ति की व्यवस्था भी सुनिश्चित की जाए। इसके विपरीत, तंबाकू बोर्ड अधिनियम, विशेष रूप से धारा 8 के अंतर्गत, यह अपेक्षित करता है कि बोर्ड उपयुक्त उपायों पर विचार करे, जिसमें नीलामी मंच की स्थापना भी सम्मिलित है। चूँकि नीलामी मंच के लिए किसी स्थान की आवश्यकता होगी, अतः बोर्ड को अनिवार्यतः यह विचार करना होगा कि ऐसे मंच की स्थापना बाजार क्षेत्र के भीतर की जाए। यह कदम धारा 31 के प्रावधान के अनुरूप होगा और इस प्रकार राज्य अधिनियम के प्रतिकूल नहीं माना जाएगा। श्री सांघी के अनुसार,

तंबाकू बोर्ड अधिनियम में किया गया संशोधन केवल संशोधन अधिनियम के प्रवर्तन द्वारा मूल अधिनियम में संशोधित प्रावधानों को सम्मिलित करने तक सीमित है, और इसके पश्चात मूल अधिनियम की धारा 3(1) के अनुसार नव जोड़े गए प्रावधानों को प्रभाव में लाने की प्रक्रिया का पालन किया जाना आवश्यक है। इस प्रकार, संशोधित प्रावधानों तथा धारा 13 को मध्य प्रदेश राज्य में लागू न किए जाने की स्थिति में दोनों अधिनियमों के बीच किसी प्रकार की असंगति या प्रतिकूलता उत्पन्न नहीं होती, भले ही इन प्रावधानों को लागू करने पर कुछ असंगति उत्पन्न होने की संभावना हो। श्री सांघी के अनुसार, तंबाकू बोर्ड अधिनियम का उद्देश्य तंबाकू उद्योग का विकास करना है, विशेष रूप से वर्जीनिया तंबाकू के संदर्भ में, और यह उद्देश्य राज्य अधिनियम के प्रावधानों से किसी भी प्रकार से बाधित नहीं होता। इसी प्रकार, राज्य अधिनियम के उद्देश्य भी तंबाकू बोर्ड अधिनियम के वर्तमान या अप्रवर्तित प्रावधानों से प्रभावित नहीं होते। अतः इस परिप्रेक्ष्य में, श्री सांघी का मत है कि *आईटीसी* वाद में अल्पमत का दृष्टिकोण ही सही माना जाना चाहिए, और केंद्रीय अधिनियम तथा राज्य अधिनियम दोनों को अपने-अपने क्षेत्र में साथ-साथ लागू रहने की अनुमति दी जानी चाहिए।

श्री ए.के. गांगुली, तमिलनाडु कृषि विपणन बोर्ड की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, ने संविधान के अनुच्छेद 246(3) के प्रावधानों का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित किया कि अनुच्छेद 246(3) में प्रयुक्त "अधीन" अभिव्यक्ति का संबंध केवल उन प्रविष्टियों से है, जहाँ सूची II की प्रविष्टियों के विषय को स्पष्ट रूप से सूची I अथवा सूची III की कुछ निर्दिष्ट प्रविष्टियों के अधीन किया गया है। उदाहरणस्वरूप, सूची II की प्रविष्टि 2 (पुलिस, जिसमें रेलवे तथा ग्राम पुलिस भी सम्मिलित है) को सूची I की प्रविष्टि 2A के प्रावधानों के अधीन रखा गया है। इसी प्रकार सूची II की अनेक प्रविष्टियाँ—जैसे प्रविष्टि 17, 22, 24, 26, 27, 32, 33, 37, 54, 57 तथा 63—स्पष्ट रूप से सूची I अथवा सूची III के अधीन हैं। किन्तु केवल तीन प्रविष्टियाँ—प्रविष्टि 13, 23 और 50—ऐसी हैं जिनमें किसी विशिष्ट प्रविष्टि का उल्लेख नहीं है, बल्कि सामान्य रूप से सूची I अथवा सूची III के प्रावधानों

का संदर्भ दिया गया है। अतः अन्य सभी प्रविष्टियों के संदर्भ में राज्य विधायिका को विशिष्ट एवं अनन्य विधायी शक्ति प्राप्त है। इस आधार पर यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि यदि राज्य अधिनियम सूची II की प्रविष्टि 28 (बाजार एवं मेले) के अंतर्गत निर्मित है, तो उसे स्वतंत्र रूप से संचालित होने दिया जाना चाहिए। श्री गांगुली के अनुसार, यह तर्क कि संसद को सूची II के विषयों पर उच्चतर विधायी शक्ति प्राप्त है, केवल उन्हीं प्रविष्टियों तक सीमित है जहाँ स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि वे प्रविष्टियाँ सूची I के अधीन हैं। इस सिद्धांत को सूची II की अन्य प्रविष्टियों पर लागू नहीं किया जा सकता। उन्होंने भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 100 (जो संविधान के अनुच्छेद 246 के समतुल्य है) के प्रावधानों का हवाला देते हुए, *सुब्रमण्यम चेट्टियार* बनाम *मुथुस्वामी गौंडर*, 1940 एफसीआर 188 में सुलैमान, न्यायमूर्ति द्वारा की गई व्याख्या का उल्लेख किया, जिसे *केएसईबी बनाम इंदल*, [1976] 1 एससीसी 466 में संविधान पीठ द्वारा अनुमोदित किया गया है। इसके आधार पर उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 246(3) के अंतर्गत राज्य विधायिका को सूची II की प्रविष्टि 28 "बाजार एवं मेले" के विषय में कानून बनाने की विशिष्ट शक्ति प्राप्त है। यह शक्ति संसद और राज्य के बीच शक्तियों के वितरण के संदर्भ में किसी भी प्रकार की शर्तों से प्रतिबंधित नहीं है, और इसलिए इसे संसद द्वारा सूची I अथवा सूची III की प्रविष्टियों के अंतर्गत किए गए विधायन द्वारा सीमित नहीं किया जा सकता। श्री गांगुली ने आगे यह प्रतिपादित किया कि संविधान की तीनों सूचियों की प्रविष्टियाँ स्वयं शक्ति नहीं हैं, बल्कि वे केवल विधायी क्षेत्र हैं। विधायी शक्ति अनुच्छेद 246 द्वारा प्रदान की गई है, जबकि प्रविष्टियाँ केवल उस क्षेत्र को परिभाषित करती हैं जिसमें संबंधित विधायिका कार्य कर सकती है। उनके अनुसार, संघीय सर्वोच्चता के सिद्धांत का उपयोग इस उद्देश्य से नहीं किया जा सकता कि राज्य विधायिका को उन विषयों पर कानून बनाने से वंचित किया जाए, जो उसे सूची II में विशिष्ट रूप से प्रदान किए गए हैं। यदि राज्य द्वारा बनाया गया कानून उसके विषय-वस्तु के आधार पर सूची II की प्रविष्टि के अंतर्गत आता है, तो वह संपूर्ण रूप से वैध होगा। केवल उस स्थिति में, जब सूची I और

सूची II के अंतर्गत बनाए गए कानूनों के बीच वास्तविक टकराव उत्पन्न हो, अनुच्छेद 246(1) के प्रारंभिक शब्दों के आधार पर संघीय सर्वोच्चता का सिद्धांत लागू किया जा सकता है। जहाँ तक सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द का संबंध है, श्री गांगुली ने तर्क दिया कि इसका वही अर्थ होना चाहिए जो सूची II की प्रविष्टि 24 में है। कच्चा माल "वस्तु" की श्रेणी में आता है और सूची II की प्रविष्टि 27 के अंतर्गत आता है। इसी प्रकार उद्योग के उत्पाद भी सामान्यतः प्रविष्टि 27 के अंतर्गत आएंगे, किन्तु नियंत्रित उद्योग के मामलों में वे सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आ सकते हैं। इस प्रकार, विनिर्माण एवं उत्पादन की प्रक्रिया ही "उद्योग" के अंतर्गत आती है—जो सामान्यतः सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत होती है, और यदि वह घोषित उद्योग है, तो सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आ जाती है। अतः यह तार्किक निष्कर्ष है कि संसद की विधायी क्षमता केवल उस सीमा तक है जहाँ तक विनिर्माण एवं उत्पादन की गतिविधियाँ आती हैं। यह क्षमता कच्चे माल तक विस्तारित नहीं होती, भले ही वह औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग क्यों न हो, और इस प्रकार राज्य विधायिका की शक्ति को समाप्त नहीं किया जा सकता। श्री गांगुली ने यह भी कहा कि इस न्यायालय ने निरंतर यह मत व्यक्त किया है कि सूची I की प्रविष्टि 52 का विषय केवल विनिर्माण एवं उत्पादन गतिविधियों तक सीमित है, अतः "उद्योग" शब्द को व्यापक अर्थ देकर उसमें कच्चे माल को सम्मिलित करना उचित नहीं होगा। खनन एवं खनिज संबंधी मामलों के संदर्भ में उन्होंने स्पष्ट किया कि सूची I की प्रविष्टि 54 तथा सूची II की प्रविष्टि 23 का विषय समान है, और प्रविष्टि 23 स्वयं सूची I के अधीन है। अतः जब संसद प्रविष्टि 54 के अंतर्गत घोषणा करती है, तो संपूर्ण क्षेत्र—जिसमें कराधान भी सम्मिलित है—केंद्र के अधिकार क्षेत्र में चला जाता है। यह सिद्धांत *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य*, [1969] 3 एस.सी.सी. 838, *उड़ीसा राज्य बनाम एम.ए. तुल्लोच*, [1964] 4 एस.सी.आर. 461, *इंडिया सीमेंट बनाम तमिलनाडु राज्य*, [1990] 1 एस.सी.सी. 12 तथा *उड़ीसा सीमेंट लिमिटेड बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य*, [1991] पूरक1 एस.सी.सी. 430 में स्थापित किया गया है। किन्तु

सूची । की प्रविष्टि 52 का विषय तथा सूची ॥ की प्रविष्टि 24 का विषय, दोनों "उद्योग" से संबंधित हैं और सूची ॥ की प्रविष्टि 24 को सूची । की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन रखा गया है। राज्य विधायिका सूची ॥ की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत अपनी शक्ति का प्रयोग इस प्रकार नहीं कर सकती कि अन्य प्रविष्टियाँ निरर्थक हो जाएँ। श्री गांगुली के अनुसार "उद्योग" शब्द को व्यापक अर्थ नहीं दिया जा सकता। प्रतिरोध के प्रश्न पर श्री गांगुली का यह तर्क है कि यह प्रश्न तभी उत्पन्न होता है जब दोनों विधायिकाएँ अपने-अपने कानून बनाने में सक्षम हों और दोनों कानून एक ही क्षेत्र को आच्छादित करते हों। यदि यह पाया जाता है कि दोनों कानून एक ही क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं और साथ ही वे एक-दूसरे से असंगत भी हैं, तभी संसद द्वारा बनाया गया कानून प्रभावी होगा। किन्तु यह स्थिति केवल तब लागू होती है जब संसद तथा राज्य विधायिका द्वारा बनाए गए कानून, दोनों ही एक ही विषय से संबंधित हों, जो समवर्ती सूची में वर्णित है, जैसा कि *होएचेस्ट फार्मास्यूटिकल्स*, [1983] 4 एस.सी.सी. 45 में कहा गया है। दीपचंद के वाद में भी राज्य विधायिका और संसद द्वारा बनाए गए दो विधानों, जो सूची ॥। की प्रविष्टि 35 के अंतर्गत एक ही विषय से संबंधित थे, विचाराधीन थे और न्यायालय प्रतिरोध के प्रश्न की जांच कर रहा था। किन्तु यह सिद्धांत वर्तमान वाद में लागू नहीं होता, क्योंकि राज्य अधिनियम सूची ॥ की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत आता है, जिसके संबंध में राज्य विधायिका को कानून बनाने की विशिष्ट शक्ति प्राप्त है। तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रावधानों तथा विशेष रूप से धारा 31 के विश्लेषण के आधार पर श्री ए.के. गांगुली ने यह तर्क दिया कि तंबाकू अधिनियम के प्रावधान अन्य विधियों के अतिरिक्त रूप में ही लागू होते हैं और इसलिए उस अधिनियम का उपयोग अन्य विधानों, विशेषकर सक्षम राज्य विधायिका द्वारा निर्मित कृषि उपज बाजार अधिनियम पर अधिभावी प्रभाव देने के लिए नहीं किया जा सकता। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, दोनों अधिनियमों के बीच आच्छादन केवल अधिसूचित क्षेत्र में तंबाकू के क्रय-विक्रय तक सीमित है। यदि तंबाकू बोर्ड द्वारा पंजीकृत नीलामी मंच बाजार क्षेत्र के भीतर स्थापित किए जाएँ, तो दोनों अधिनियमों के बीच संभावित टकराव को

सरलता से समाप्त किया जा सकता है और दोनों को समानांतर रूप से संचालित होने दिया जा सकता है। ऐसी स्थिति में बाजार समिति, अपने द्वारा प्रदान की गई सेवाओं एवं आधारभूत संरचना के लिए तंबाकू के क्रय-विक्रय पर शुल्क लगाने की अधिकारी होगी, जबकि तंबाकू बोर्ड अधिनियम के अंतर्गत धारा 14क के अनुसार केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित विशेष सेवाओं के लिए पृथक शुल्क लिया जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, यही दोनों अधिनियमों का युक्तिसंगत एवं समन्वित व्याख्या है। श्री गांगुली के अनुसार, *आईटीसी* वाद में बहुमत का निर्णय *टीकारामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, [1956] एस.सी.आर. 393, *कलकत्ता गैस*, [1962] पूरक एस.सी.आर. 1, *कन्नन देवन हिल्स*, [1972] 2 एस.सी.सी. 218, *गंगा शुगर*, [1980] 1 एस.सी.सी. 223, *बी. विश्वनाथन*, [1991] 3 एस.सी.सी. 358 के निर्णयों के विपरीत है और इसलिए उक्त निर्णयों को त्रुटिपूर्ण माना जाना चाहिए। वास्तव में, न्यायमूर्ति मुखर्जी द्वारा व्यक्त अल्पमत का दृष्टिकोण, जिसमें दोनों अधिनियमों के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उन्हें अपने-अपने क्षेत्र में संचालित होने की अनुमति दी गई है, स्वीकार किया जाना चाहिए। श्री गांगुली ने यह भी तर्क दिया कि यद्यपि संसद की विधायी क्षमता, जिससे तंबाकू बोर्ड अधिनियम द्वारा उस क्षेत्र को आच्छादित किया गया है जो राज्य विधायिका के विशिष्ट अधिकार क्षेत्र में आता है, इन याचिकाओं में चुनौती के अधीन नहीं थी, तथापि विवाद की प्रकृति तथा प्रस्तुत तर्कों को देखते हुए इसमें कोई संदेह नहीं है कि सभी पक्षों, जिनमें केंद्र सरकार तथा तंबाकू बोर्ड भी सम्मिलित हैं, को अपना पक्ष रखने का अवसर प्राप्त हुआ है, अतः वर्तमान वाद में संसद की विधायी क्षमता का निर्धारण करने में न्यायालय की शक्ति पर कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए।

तंबाकू बोर्ड की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मल्होत्रा ने प्रारंभ में यह तर्क दिया कि दोनों अधिनियमों का सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है, किन्तु बाद में स्पष्ट रूप से यह प्रस्तुत किया कि केंद्रीय विधायन को ही प्रधानता प्राप्त होनी चाहिए। उनके अनुसार, तंबाकू उद्योग सूची II की प्रविष्टि 24 से स्थानांतरित होकर सूची I की प्रविष्टि 52 के

अंतर्गत आ गया है, और इसे एक विशेष अधिनियम के रूप में माना जाना चाहिए, जो तंबाकू उद्योग को उसकी खेती से लेकर उसके निर्यात तक नियंत्रित करता है। चूँकि यह एक विशेष अधिनियम है और सूची II की प्रविष्टि 28 (बाजार एवं मेले) तथा प्रविष्टि 14 (कृषि) सामान्य प्रविष्टियाँ हैं, अतः संसद द्वारा निर्मित यह विशेष अधिनियम प्रभावी होगा और संसद की विधायी क्षमता पर कोई प्रश्न नहीं उठता। इस तर्क के समर्थन में संविधान पीठ के निर्णय *बेलसुंद शुगर कंपनी लिमिटेड,* [1999] 9 एस.सी.सी. 620 पर अवलंबन किया गया। श्री मल्होत्रा ने संघीय न्यायालय तथा इस न्यायालय के अनेक निर्णयों पर भी अवलंबन किया और यह प्रतिपादित किया कि अनुसूची की प्रविष्टियों को व्यापक अर्थ दिया जाना चाहिए तथा किसी प्रविष्टि में वर्णित विधायी विषय को संकीर्ण अर्थ में नहीं समझा जाना चाहिए। इस संदर्भ में उन्होंने *यूनाइटेड प्रोविंसेस बनाम मोस्मात अतिका बेगम एवं अन्य*, (1940) 2 संघीय न्यायालय प्रतिवेदन 110, *प्रथम अतिरिक्त आयकर अधिकारी, मैसूर बनाम एच.एन.एस. अयंगर*, [1962] पूरक एस.सी.आर. 1, *चतुरभाई एम. पटेल बनाम भारत संघ एवं अन्य,* [1960] 2 एस.सी.आर. 362, *नवीनचंद्र मफतलाल बनाम आयकर आयुक्त, बंबई नगर*, [1955] 1 एस.सी.आर. 829 तथा *ज़वेरभाई अमैदास बनाम बंबई राज्य*, [1955] 1 एस.सी.आर. 799 के निर्णयों का उल्लेख किया। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि यह एक स्थापित व्याख्यात्मक सिद्धांत है कि किसी प्रविष्टि में प्रयुक्त शब्दों को उनके सामान्य, प्राकृतिक एवं व्याकरणिक अर्थ में समझा जाना चाहिए, किन्तु इस शर्त के साथ कि विधायी प्रविष्टियों की व्याख्या व्यापक रूप से की जाए, ताकि विधायिकाओं को उन विषयों पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त हो सके जो प्रविष्टियों में निर्दिष्ट हैं। इस संदर्भ में उन्होंने *आर.एस. रेखचंद मोहता*, [1997] 6 एस.सी.सी. 12, *राय रामकृष्ण एवं अन्य बनाम बिहार राज्य*, [1964] 1 एस.सी.आर. 897 तथा *इंडियन एल्युमिनियम कंपनी एवं अन्य बनाम केरल राज्य एवं अन्य*, [1996] 7 एस.सी.सी. 637 के निर्णयों पर भी अवलंबन किया। उन्होंने *हरकचंद रतनचंद बंथिया*, [1969] 2 एस.सी.सी. 166 के निर्णय का भी उल्लेख

किया, जिस पर श्री शांति भूषण ने भी अपने तर्कों में अवलंबन किया था। अंततः श्री मल्होत्रा ने यह प्रतिपादित किया कि *आईटीसी* वाद में बहुमत का निर्णय ही सही विधि है और उसे ही स्वीकार किया जाना चाहिए।

विद्वान अपर महाधिवक्ता श्री त्रिवेदी, जो भारत के महाधिवक्ता की ओर से उपस्थित हुए, ने हमारे समक्ष तंबाकू के निर्माण की प्रक्रिया को प्रस्तुत किया तथा यह भी स्पष्ट किया कि तंबाकू का वाणिज्यिक स्तर पर किस प्रकार उत्पादन किया जाता है। इस विषय को रेखांकित करते हुए उन्होंने यह तर्क दिया कि तंबाकू उद्योग को "नियंत्रित उद्योग" घोषित किए जाने के पश्चात यदि यह माना जाए कि संसद को तंबाकू की खेती अथवा कच्चे तंबाकू के प्रसंस्करण के संबंध में कानून बनाने की क्षमता नहीं है, तो यह अत्यंत दुष्परिणामकारी होगा। विद्वान अपर महाधिवक्ता के अनुसार, नियंत्रित उद्योग के उत्पादों में व्यापार एवं वाणिज्य, सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत आता है, अतः इस संबंध में राज्य की विधायी शक्ति संसद की शक्ति के अधीन है। उन्होंने आगे यह तर्क दिया कि संविधान स्वयं सूची II की कुछ प्रविष्टियों को सामान्य रूप में व्यक्त करते हुए भी उन्हें सूची I अथवा सूची III की प्रविष्टियों के अधीन रखता है। अतः सूची I की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत आने वाले विषयों पर संसद की विशिष्ट शक्ति को स्वीकार करने में कोई विसंगति उत्पन्न नहीं होगी। उन्होंने यह भी कहा कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम तंबाकू उद्योग के संपूर्ण क्षेत्र को आच्छादित करता है और सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद की विधायी क्षमता के भीतर है। *टीकारामजी* का मामला केवल उद्योग के एक भाग, अर्थात् चीनी के निर्माण से संबंधित था। *टीकारामजी* वाद में [1956] एस.सी.आर. 393 में की गई टिप्पणियाँ उसी संदर्भ में थीं, क्योंकि वहाँ न्यायालय पूरे औद्योगिक प्रक्रिया से संबंधित प्रश्न पर विचार नहीं कर रहा था, जैसा कि वर्तमान वाद में है। विद्वान अपर महाधिवक्ता के अनुसार, उस वाद में न्यायालय के लिए सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द के विस्तार का परीक्षण करना आवश्यक नहीं था। यदि विधायी सूची की प्रविष्टियों की व्याख्या का सामान्य सिद्धांत यह है कि उन्हें व्यापक

अर्थ दिया जाना चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय के अनेक निर्णयों में कहा गया है, तो *टीकारामजी* में की गई टिप्पणियों के आधार पर "उद्योग" शब्द को सूची II की प्रविष्टि 24 तथा सूची I की प्रविष्टि 52 में संकीर्ण अर्थ देना उचित नहीं होगा। इस न्यायालय के *एच.आर. बंथिया*, [1969] 2 एस.सी.सी. 166 के निर्णय के संदर्भ में विद्वान अपर महाधिवक्ता ने कहा कि उस वाद में न्यायालय के लिए "उद्योग" शब्द की परिभाषा करना आवश्यक नहीं था। न्यायालय केवल इस प्रश्न से संबंधित था कि क्या स्वर्ण आभूषणों का निर्माण एक व्यवस्थित उत्पादन प्रक्रिया है, जिससे वह संबंधित विधायी प्रविष्टि में "उद्योग" के अंतर्गत आता है। न्यायालय ने इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक रूप से दिया। विद्वान अपर महाधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि *हरकचंद*, [1971] 2 एस.सी.सी. 779 का निर्णय प्रविष्टियों की व्याख्या के सिद्धांत के अनुरूप है और वर्तमान वाद में भी उसी का अनुप्रयोग किया जाना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि संविधान एक सजीव दस्तावेज है, जिसकी व्याख्या व्यापक दृष्टिकोण से की जानी चाहिए। उनके अनुसार, *आईटीसी* वाद में बहुमत का निर्णय ही सही विधि है। अंत में उन्होंने यह प्रस्तुत किया कि *आईटीसी* वाद में भी तंबाकू बोर्ड अधिनियम की वैधता को चुनौती नहीं दी गई थी और वह मामला इस न्यायालय के निर्णय द्वारा, जो [1985] (पूरक.) एस.सी.सी. 476 में सूचित है, समाप्त किया गया था। अतः इस न्यायालय के लिए यह उपयुक्त नहीं होगा कि वह तंबाकू बोर्ड अधिनियम के निर्माण के संबंध में संसद की विधायी क्षमता की पुनः जाँच करे।

यद्यपि विभिन्न अधिवक्ताओं ने पूर्व में उल्लिखित अनुसार विभिन्न रूपों में तर्क प्रस्तुत किए हैं, तथापि मूलतः निम्नलिखित प्रश्न हमारे विचारार्थ उत्पन्न होते हैं:-

1. क्या सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम को संवैधानिक रूप से वैध तथा संसद की विधायी क्षमता के भीतर माना जा सकता है, विशेषकर उन प्रावधानों के संदर्भ में जो तंबाकू की खेती तथा कच्चे माल के विक्रय से संबंधित हैं, और यह प्रश्न इस बात पर निर्भर

करेगा कि सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए या नहीं;

2. यदि तंबाकू बोर्ड अधिनियम को संवैधानिक रूप से वैध माना जाए तथा कृषि उपज बाजार अधिनियम को भी बाजार क्षेत्र के भीतर तंबाकू के क्रय-विक्रय के संबंध में राज्य विधायिका की शक्ति के अंतर्गत वैध माना जाए, तो क्या दोनों अधिनियमों को एक साथ लागू होने की अनुमति दी जा सकती है, जैसा कि आईटीसी वाद में अल्पमत निर्णय में कहा गया था;

3. यदि दोनों अधिनियमों के बीच प्रतिरोध हो, तो क्या केंद्रीय अधिनियम को प्रधानता प्राप्त होगी, जैसा कि आईटीसी वाद में बहुमत निर्णय में कहा गया था।

लेकिन इन प्रश्नों पर प्रस्तुत विस्तृत तर्कों पर विचार करने से पूर्व यह ध्यान देना आवश्यक है कि भारत का संविधान स्वयं राजनीतिक सत्ता को परिभाषित करता है, राजनीतिक शक्ति के स्रोतों का निर्धारण करता है तथा यह भी इंगित करता है कि उस शक्ति का प्रयोग किस प्रकार किया जाना है और उसके प्रयोग की सीमाएँ क्या हैं। संसद को सूची । में वर्णित विषयों पर कानून बनाने हेतु विधायी अधिकार प्रदान करना तथा इसी प्रकार सूची ॥ में वर्णित विषयों पर राज्य विधायिका को कानून बनाने की शक्ति देना, वास्तव में संविधान की संघीय संरचना का मूल तत्व है। तथापि संविधान निर्माताओं ने यह अनुभव किया कि केंद्र एवं राज्य के बीच शक्तियों के वितरण की व्यवस्था को राज्य की सुरक्षा एवं स्थिरता की आवश्यकताओं के अधीन रखना होगा, जिसके परिणामस्वरूप केंद्रीकरण की प्रवृत्ति को बल मिला और अनुच्छेद 246 में प्रयुक्त "निरपेक्ष उपबंध" के माध्यम से संघीय सर्वोच्चता सुनिश्चित की गई। अनुच्छेद 246 संविधान की सातवीं अनुसूची की विभिन्न सूचियों के संदर्भ में संघ एवं राज्य विधायिकाओं के बीच विधायी शक्तियों के वितरण से संबंधित है। सातवीं अनुसूची की तीनों सूचियों की प्रविष्टियाँ स्वयं विधायी शक्ति नहीं हैं, बल्कि वे विधायन के

क्षेत्र हैं। ये प्रविष्टियाँ विधायी शीर्षक हैं और सक्षमकारी प्रकृति की हैं। इनका उद्देश्य संघ एवं राज्य विधायिकाओं की विधायी क्षमता के क्षेत्र को परिभाषित एवं सीमित करना है। यह एक स्थापित सिद्धांत है कि किसी प्रविष्टि की भाषा को व्यापक अर्थ दिया जाना चाहिए तथा उसमें प्रयुक्त प्रत्येक सामान्य शब्द की व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि उसमें वे सभी सहायक या अनुषंगी विषय सम्मिलित हों, जिन्हें उचित एवं युक्तिसंगत रूप से उसमें समाहित किया जा सकता है। सूचियों की प्रविष्टियों को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और किसी भी प्रविष्टि को संकीर्ण अथवा सीमित अर्थ नहीं दिया जाना चाहिए। संघ एवं राज्य विधायिकाओं की शक्तियाँ स्पष्ट एवं निश्चित शब्दों में व्यक्त की गई हैं, अतः किसी एक को व्यापक और दूसरे को संकीर्ण अर्थ देने का कोई औचित्य नहीं है। केवल उस स्थिति में, जब सतही रूप से प्रविष्टियों में आच्छादन दिखाई देता है, तब "पिथ एंड सब्सटेंस" के सिद्धांत का प्रयोग कर विधायन की वास्तविक प्रकृति का निर्धारण किया जाता है तथा यह देखा जाता है कि वह किस प्रविष्टि के अंतर्गत आता है। जब एक ही सूची की विभिन्न प्रविष्टियाँ विचारार्थ आती हैं, तो सामान्य सिद्धांत यह है कि प्रत्येक प्रविष्टि एक पृथक विषय या विषयों के समूह से संबंधित होती है, और यथासंभव सभी प्रविष्टियों का सामंजस्य स्थापित किया जाना चाहिए तथा ऐसी व्याख्या से बचना चाहिए जिससे कोई प्रविष्टि निष्प्रभावी हो जाए।

वर्तमान वाद में, जिन प्रविष्टियों पर विचार करना है, वे हैं—सूची । की प्रविष्टि 52, सूची ॥ की प्रविष्टि 24 तथा सूची ॥ की प्रविष्टि 28। सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा तंबाकू बोर्ड अधिनियम बनाया गया है, जबकि सूची ॥ की प्रविष्टि 28 के अंतर्गत राज्य विधायिका द्वारा कृषि उपज बाजार अधिनियम अधिनियमित किया गया है। इसके अतिरिक्त, सूची । की प्रविष्टि 7 तथा सूची ॥ की प्रविष्टि 14 और 27 भी विचारार्थ आती हैं। अतः इन प्रविष्टियों को यहाँ उद्धृत करना उपयुक्त होगा:

"सूची ।

प्रविष्टि 7—ऐसे उद्योग, जिन्हें संसद विधि द्वारा रक्षा के प्रयोजन या युद्ध संचालन के लिए आवश्यक घोषित करे।

प्रविष्टि 52—ऐसे उद्योग, जिनका नियंत्रण संघ द्वारा सार्वजनिक हित में आवश्यक घोषित किया गया हो।

सूची II

प्रविष्टि 24—उद्योग, जो सूची I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन हों।

प्रविष्टि 27—वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण, जो सूची III की प्रविष्टि 33 के अधीन हो; तथा

प्रविष्टि 28—बाजार एवं मेले।"

यद्यपि राज्य विधायिका को सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत किसी उद्योग के संबंध में कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है, किन्तु उक्त प्रविष्टि स्वयं सूची I की प्रविष्टि 7 एवं 52 के अधीन है। अतः जैसे ही संसद किसी उद्योग की पहचान करते हुए विधि द्वारा यह घोषणा करती है कि उसका नियंत्रण सार्वजनिक हित में संघ द्वारा ग्रहण किया जाना आवश्यक है, उसी क्षण राज्य विधायिका उस उद्योग के संबंध में कानून बनाने की अपनी क्षमता से वंचित हो जाती है, भले ही उसे सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत सामान्यतः यह शक्ति प्राप्त रही हो। जब किसी उद्योग की पहचान कर ली जाती है और सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आवश्यक घोषणा कर दी जाती है, तब उस विषय पर संविधान के अनुच्छेद 246(1) के अंतर्गत संसद को विशिष्ट विधायी शक्ति प्राप्त हो जाती है। तंबाकू बोर्ड अधिनियम संसद द्वारा अनुच्छेद 246(1) के अंतर्गत अधिनियमित किया गया है और यह विधि सूची I की प्रविष्टि 52 से संबंधित है। अतः विचारणीय प्रश्न यह है कि प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द का विस्तार और परिधि क्या है। जैसा कि पूर्व में कहा गया है, "उद्योग" शब्द का प्रयोग सूची II की प्रविष्टि 24 तथा सूची I की प्रविष्टि 7 और 52 में किया गया है। तंबाकू बोर्ड अधिनियम की वैधता तथा उसमें तंबाकू की खेती एवं निर्दिष्ट स्थानों पर तंबाकू के विक्रय से संबंधित

प्रावधानों की विधायी क्षमता का निर्धारण करते समय मूल प्रश्न यह है कि "उद्योग" शब्द को व्यापक अर्थ दिया जाए, जिससे उसमें उद्योग से संबंधित सभी आवश्यक तत्व—यहाँ तक कि कच्चा माल तथा उसकी खेती—भी सम्मिलित हो जाएँ, जैसा कि श्री शांति भूषण का तर्क है; अथवा इस न्यायालय द्वारा *टीकारामजी* के वाद में की गई टिप्पणियों तथा अन्य निर्णयों में अनुसरण किए गए सिद्धांतों के आधार पर उसे संकीर्ण अर्थ दिया जाए, जैसा कि श्री द्विवेदी का तर्क है। *आईटीसी* वाद में इस न्यायालय के बहुमत निर्णय [1985] पूरक1 एस.सी.आर. 145 में, माननीय न्यायमूर्ति फज़ल अली द्वारा व्यक्त मत के अनुसार, जब केंद्र सरकार सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत किसी उद्योग को अपने नियंत्रण में ले लेती है और उस संबंध में विधि बनाती है, तथा वह विधि संपूर्ण क्षेत्र को आच्छादित कर लेती है, तब राज्य विधायिका उस क्षेत्र में कानून बनाने के अधिकार से वंचित हो जाती है, और यदि वह ऐसा करती है, तो राज्य विधायन उसकी अधिकारातीत होगा। यहाँ तक कि माननीय न्यायमूर्ति सभ्यसाची मुखर्जी द्वारा व्यक्त अल्पमत भी अनुच्छेद 246 में निहित संसदीय सर्वोच्चता के सिद्धांत को स्वीकार करता है। उन्होंने यह भी कहा कि विधायी शक्तियाँ प्रदान करने वाले संवैधानिक प्रावधानों में प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या उदार एवं व्यापक रूप से की जानी चाहिए, जैसा कि *नवीनचंद्र बनाम आयकर आयुक्त, बंबई*, [1955] 1 एस.सी.आर. 829 में इस न्यायालय ने कहा है। अल्पमत यह नहीं कहता कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम संसद की विधायी क्षमता से परे है। इसके विपरीत, यह मानते हुए कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम तथा राज्य विधायिका द्वारा अधिनियमित कृषि बाजार अधिनियम दोनों ही वैध हैं, माननीय न्यायाधीश ने यह निष्कर्ष निकाला कि कृषि उपज के विपणन के विनियमन से संबंधित राज्य अधिनियम तथा तंबाकू उद्योग के नियंत्रण से संबंधित केंद्रीय अधिनियम, दोनों अपने-अपने क्षेत्र में प्रभावी रह सकते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि यदि कृषि उपज (तंबाकू) का विपणन बाजार अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार किया जाता है, तो तंबाकू उद्योग के नियंत्रण के उद्देश्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा। अतः राज्य विधायिका की विपणन अधिनियम बनाने की शक्ति को समाप्त

नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से राज्य की विधायी शक्ति का क्षरण होगा और अंततः भारत के "राज्यों के संघ" होने की संवैधानिक अवधारणा प्रभावित होगी। अल्पमत इस तथ्य से भी प्रभावित प्रतीत होता है कि राज्यों को अपने विशिष्ट क्षेत्रों में संसाधनों के संकलन एवं संचयन की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए। इस प्रकार, तीनों माननीय न्यायाधीशों ने संसद की तंबाकू बोर्ड अधिनियम बनाने की विधायी क्षमता पर कोई संदेह व्यक्त नहीं किया। अंतर केवल इस बात पर था कि उसका प्रभाव क्या होगा—जहाँ बहुमत का मत यह था कि तंबाकू के क्रय-विक्रय के संबंध में कृषि बाजार अधिनियम लागू नहीं होगा, क्योंकि वह क्षेत्र पूर्णतः केंद्रीय अधिनियम द्वारा आच्छादित है, वहीं अल्पमत के अनुसार दोनों अधिनियम अपने-अपने क्षेत्र में समानांतर रूप से लागू रह सकते हैं।

इस न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय *हरकचंद रतनचंद बंथिया एवं अन्य आदि बनाम भारत संघ एवं अन्य,* [1970] 1 एस.सी.आर. 479 में, सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद की विधायी क्षमता पर विचार किया गया था, जब स्वर्ण नियंत्रण अधिनियम की वैधता पर विचार किया जा रहा था, जिसमें स्वर्ण आभूषण भी सम्मिलित थे। एक तर्क यह प्रस्तुत किया गया था कि सुनार का कार्य हस्तकला है, जिसमें कौशल का प्रयोग होता है, और स्वर्ण आभूषणों का निर्माण "उद्योग" नहीं है, जैसा कि सूची । की प्रविष्टि 52 में अभिप्रेत है। इसके विपरीत, संघ सरकार की ओर से यह तर्क दिया गया कि विधायी प्रविष्टियों की व्याख्या व्यापक एवं उदार दृष्टिकोण से की जानी चाहिए, और सुनार का कार्य सूची ॥ की प्रविष्टि 24 तथा सूची । की प्रविष्टि 52, दोनों के अंतर्गत "उद्योग" की परिभाषा में आता है, अतः संसद को स्वर्ण आभूषणों के निर्माण के संबंध में विधायन करने की पूर्ण क्षमता है। प्रासंगिक प्रविष्टियों, अर्थात् सूची । की प्रविष्टि 52 तथा सूची ॥ की प्रविष्टि 24 एवं 27 पर विचार करते हुए, संविधान पीठ ने यह अवलोकन किया कि— "यह स्थापित सिद्धांत है कि प्रविष्टियों की भाषा को उसका व्यापकतम विस्तार दिया जाना चाहिए।" न्यायालय ने यह आवश्यक नहीं समझा कि "उद्योग" शब्द की सटीक परिभाषा दी जाए या उसके सभी पहलुओं

का विस्तृत विवरण किया जाए, बल्कि उसने यह विचार किया कि क्या भारत में सुनार द्वारा स्वर्ण आभूषणों का निर्माण, संबंधित विधायी प्रविष्टियों में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द के अंतर्गत आता है या नहीं। न्यायालय ने श्री दफ्तरी द्वारा प्रस्तुत इस तर्क को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया कि "उद्योग" के लिए उत्पादन की प्रक्रिया में मशीन या यांत्रिक साधन का होना आवश्यक है। न्यायालय के मत में "उद्योग" शब्द के अर्थ पर ऐसी कोई सीमा लगाने का कोई औचित्य नहीं है। इसी प्रकार, श्री पालखीवाला द्वारा प्रस्तुत यह तर्क भी अस्वीकार कर दिया गया कि स्वर्ण आभूषणों का निर्माण व्यक्तिगत कौशल एवं कला पर आधारित होने के कारण "उद्योग" नहीं है। न्यायालय ने कहा कि केवल कौशल या कला का प्रयोग निर्णायक कारक नहीं है, और इससे उक्त गतिविधि को संबंधित विधायी प्रविष्टियों के दायरे से बाहर नहीं किया जा सकता। इसी संदर्भ में न्यायालय ने यह कहा—

> "यह सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि तीनों सूचियों की प्रविष्टियाँ केवल विधायी शीर्षक या विधायन के क्षेत्र हैं और वे उस क्षेत्र का निर्धारण करती हैं, जिसके भीतर संबंधित विधायिका कार्य कर सकती है। विधायी प्रविष्टियों की व्याख्या व्यापक एवं उदारतापूर्वक की जानी चाहिए, क्योंकि विषयों का विभाजन किसी वैज्ञानिक या तार्किक परिभाषा के आधार पर नहीं, बल्कि व्यापक और सामान्य श्रेणियों के रूप में किया गया है।"

अंततः न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि भारत में सुनार द्वारा स्वर्ण आभूषणों का निर्माण व्यापार या विनिर्माण के लिए एक व्यवस्थित उत्पादन प्रक्रिया है और इस प्रकार यह "उद्योग" शब्द के अंतर्गत आता है, जैसा कि संबंधित विधायी प्रविष्टियों में प्रयुक्त हुआ है। उक्त निर्णय के पृष्ठ 490 पर, "उद्योग" शब्द के अर्थ की व्याख्या करते हुए, न्यायालय ने शॉर्टर ऑक्सफोर्ड इंग्लिश शब्दकोष तथा वेबस्टर के तृतीय न्यू इंटरनेशनल शब्दकोष में दिए गए अर्थों का उल्लेख किया और यह तर्क अस्वीकार कर दिया कि यदि "उद्योग" शब्द को व्यापक अर्थ दिया जाए तो सूची II की प्रविष्टि 27 (वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं

वितरण) निरर्थक हो जाएगी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि न्यायालय ने यह सिद्धांत अपनाया कि विधायी सूचियों की प्रविष्टियों को उनका व्यापकतम अर्थ और विस्तार दिया जाना चाहिए। अतिरिक्त रूप से, आवेदक का यह तर्क भी अस्वीकार कर दिया गया कि संबंधित विधायन वस्तुतः सूची II की प्रविष्टि 27 के अंतर्गत "वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण" से संबंधित है, जो एक विशेष प्रविष्टि है, और इसलिए प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द से इसे बाहर किया जाना चाहिए। यह तर्क भी न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया।

चतुरभाई एम. पटेल बनाम भारत संघ, [1960] 2 एस.सी.आर. 362 में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने भारत सरकार अधिनियम, 1935 की प्रविष्टियों की व्याख्या की थी। उस वाद में एक प्रमुख तर्क यह उठाया गया था कि केंद्रीय उत्पाद शुल्क एवं नमक अधिनियम, 1944 की धारा 6 एवं 8 तथा उनके अंतर्गत बनाए गए नियम, केंद्रीय विधायिका की विधायी क्षमता के परे हैं। उस वाद में विचारार्थ जो प्रासंगिक प्रविष्टियाँ थीं, वे थीं—सूची I की प्रविष्टि 45 तथा राज्य सूची की प्रविष्टि 27 एवं 29, जो इस प्रकार हैं:-

"45. भारत में उत्पादित या निर्मित तंबाकू एवं अन्य वस्तुओं पर उत्पाद शुल्क, अपवादस्वरूप—

(क) मानव उपभोग हेतु मदिरा,

(ख) अफीम, भारतीय भांग एवं अन्य मादक द्रव्य,

(ग) ऐसे औषधीय एवं प्रसाधन सामग्री जिनमें मदिरा या उपर्युक्त (ख) में वर्णित पदार्थ सम्मिलित हों।

प्रविष्टि 27. प्रांत के भीतर व्यापार एवं वाणिज्य; बाजार एवं मेले; साहूकारी एवं साहूकार।

प्रविष्टि 29. वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण; उद्योगों का विकास, जो सूची I के उन प्रावधानों के अधीन हो जिनमें संघ के नियंत्रणाधीन उद्योगों के विकास का प्रावधान है।"

इन प्रविष्टियों का अवलोकन करने पर तथा भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची II की प्रविष्टियों से तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि भारत सरकार अधिनियम की राज्य सूची की प्रविष्टि 27 अब संविधान की सूची II की प्रविष्टि 26 एवं 28 में समाहित हो गई है, तथा प्रविष्टि 29 अब सूची II की प्रविष्टि 27 (वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण) तथा प्रविष्टि 24 (उद्योगों का विकास) में सम्मिलित है। उक्त संविधान पीठ के निर्णय में संघीय न्यायालय के निर्णय (1940) एफ.सी.आर. 188, 201 से एक अंश उद्धृत किया गया, जो इस प्रकार है—

> "यह अवश्यंभावी है कि समय-समय पर ऐसा होगा कि कोई विधि, यद्यपि एक सूची के विषय से संबंधित प्रतीत होती है, परंतु वह दूसरी सूची के विषय को भी स्पर्श करती है, और अधिनियम के विभिन्न प्रावधान इतने घनिष्ठ रूप से परस्पर जुड़े हो सकते हैं कि यदि केवल शब्दशः व्याख्या पर कठोरता से आग्रह किया जाए, तो अनेक विधियों को इस आधार पर अमान्य घोषित करना पड़ेगा कि विधायिका ने निषिद्ध क्षेत्र में प्रवेश किया है।"

संविधान पीठ ने संघीय न्यायालय के उक्त दृष्टिकोण को अनुमोदित किया तथा *राजस्थान राज्य बनाम जी. चावला,* ए.आई.आर. (1959) एस.सी. 544 के निर्णय का उल्लेख करते हुए यह कहा—

> "यह भी समान रूप से स्थापित है कि किसी विधायी विषय पर कानून बनाने की शक्ति में उन सहायक या अनुषंगी विषयों पर कानून बनाने की शक्ति भी निहित होती है, जिन्हें उस प्रदत्त शक्ति में युक्तिसंगत रूप से सम्मिलित माना जा सकता है।"

अंततः न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि भारत सरकार अधिनियम, 1935 की सूची I की प्रविष्टि 45 के अंतर्गत केंद्रीय विधायिका को केंद्रीय उत्पाद शुल्क एवं नमक अधिनियम की धारा 6 एवं 8 बनाने की विधायी क्षमता प्राप्त थी, और यह कहा—

"केंद्रीय विधायिका को यह अधिकार है कि वह ऐसे विषयों पर भी प्रावधान करे, जो सामान्यतः प्रांतीय विधायिका के अधिकार क्षेत्र में आते हों, यदि वे विषय उस विधायी विषय पर प्रभावी कानून बनाने के लिए आवश्यक रूप से सहायक हों, जो उसके अधिकार क्षेत्र में स्पष्ट रूप से आता है।"

इससे यह स्पष्ट होता है कि न्यायालय निरंतर यह सिद्धांत अपनाता रहा है कि विधायी प्रविष्टियों की व्याख्या यथासंभव व्यापक रूप से की जानी चाहिए। उक्त निर्णय में यह भी प्रतिपादित किया गया कि किसी उद्योग पर विधायन करते समय संसद को उस उद्योग के कच्चे माल पर भी विधायन करने का अधिकार होगा, क्योंकि वह उद्योग का एक अनुषंगी पहलू है। अतः "उद्योग" शब्द की व्याख्या इस प्रकार सीमित नहीं की जानी चाहिए कि संसद की शक्ति सीमित हो जाए और विधि अप्रभावी बन जाए। उक्त निर्णय में न्यायालय ने यह भी कहा:

"अधिनियम की रूपरेखा, उसके उद्देश्य एवं प्रयोजन, उसकी वास्तविक प्रकृति और स्वरूप तथा 'पिथ एंड सब्सटेंस' को देखते हुए यह निष्कर्ष अनिवार्य है कि यह अधिनियम केंद्रीय विधायिका की विधायी क्षमता के अंतर्गत है—और यद्यपि इसमें कुछ ऐसे विषय भी सम्मिलित हो सकते हैं जो अन्यथा प्रांतीय विधायिका के अधिकार क्षेत्र में आते हों, तथापि वे केंद्रीय विधायिका द्वारा प्रभावी विधायन के लिए आवश्यक रूप से अनुषंगी हैं। अधिनियम तथा उसके अंतर्गत बनाए गए नियमों के विभिन्न प्रावधान, हमारे मत में, मुख्यतः उत्पाद शुल्क के अधिरोपण एवं संग्रह से संबंधित हैं और अपनी वास्तविक प्रकृति एवं स्वरूप में यह अधिनियम सूची । की प्रविष्टि 45 के अंतर्गत आता है, तथा प्रांतीय क्षेत्र की प्रविष्टि 27 या 29 पर जो आंशिक अतिक्रमण हुआ है, उससे इसकी संवैधानिक वैधता प्रभावित नहीं होती, क्योंकि प्रांतीय क्षेत्र में अतिक्रमण की सीमा केवल 'पिथ एंड सब्सटेंस' निर्धारित करने का एक कारक हो सकती है; किन्तु एक बार वह प्रश्न निर्धारित हो जाने पर, हमारे

मत में यह अधिनियम केंद्रीय क्षेत्र के अंतर्गत ही आएगा, न कि प्रांतीय क्षेत्र के अंतर्गत।"

सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, [1990] 1 एस.सी.सी. 109 में यह प्रतिपादित किया गया कि संविधान की व्याख्या किसी संकीर्ण या तकनीकी दृष्टिकोण से नहीं की जानी चाहिए, बल्कि ऐसी व्याख्या अपनाई जानी चाहिए जो उसकी शक्तियों को अधिकतम विस्तार प्रदान करे। उक्त वाद में, संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या से संबंधित सिद्धांतों पर विचार करते हुए, यह कहा गया:

"यह सुव्यवस्थित है कि तीनों सूचियों की प्रविष्टियों की भाषा को व्यापकतम विस्तार दिया जाना चाहिए; किन्तु कभी-कभी विभिन्न सूचियों की या एक ही सूची की कुछ प्रविष्टियाँ परस्पर प्रभावी हो सकती हैं या प्रत्यक्षतः परस्पर विरोधी प्रतीत हो सकती हैं, और तभी न्यायालय का कर्तव्य उत्पन्न होता है कि वह विधायन के वास्तविक अभिप्राय एवं उद्देश्य का निर्धारण करे। प्रत्येक सामान्य शब्द को इस प्रकार समझा जाना चाहिए कि वह उन सभी सहायक या अनुषंगी विषयों को भी समाहित करता है, जिन्हें उसमें युक्तिसंगत रूप से शामिल किया जा सकता है। किसी प्रविष्टि की व्याख्या करते समय उसी सूची की अन्य प्रविष्टियों से तुलना करके उसमें कोई सीमा आरोपित करना उचित नहीं होगा।"

इसी प्रकार *एक्सप्रेस होटल्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य*, [1989] 3 एस.सी.सी. 677 में, यद्यपि न्यायालय विलासिता कर से संबंधित प्रविष्टियों की व्याख्या कर रहा था, तथापि विधायी प्रविष्टियों की सामान्य व्याख्या के सिद्धांत पर यह कहा गया:

"हम एक विधायी सूची की प्रविष्टि से संबंधित हैं। प्रविष्टियों को संकीर्ण या तकनीकी दृष्टिकोण से नहीं पढ़ा जाना चाहिए, बल्कि उन्हें उनका पूर्ण अर्थ और व्यापकतम विस्तार दिया जाना चाहिए, और यह माना जाना चाहिए कि वे उन सभी सहायक एवं

अनुषंगी विषयों तक विस्तृत हैं, जिन्हें युक्तिसंगत रूप से उनमें समाहित कहा जा सकता है।"

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, आईटीसी वाद में अपने अल्पमत निर्णय में न्यायमूर्ति मुखर्जी ने भी यह कहा था—

"यह सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि शब्दों को उनके सामान्य, प्राकृतिक एवं व्याकरणिक अर्थ में पढ़ा जाना चाहिए; किन्तु ऐसे संवैधानिक दस्तावेज में प्रयुक्त शब्द, जो विधायी शक्तियाँ प्रदान करते हैं, उनकी व्याख्या अत्यंत उदारतापूर्वक और उनके व्यापकतम अर्थ में की जानी चाहिए।"

उपर्युक्त व्याख्या के सिद्धांतों तथा पूर्वोक्त संविधान पीठ के निर्णयों के आलोक में, श्री द्विवेदी का यह तर्क स्वीकार करना हमारे लिए कठिन है कि सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाए, जिससे सूची ॥ की प्रविष्टि 27 या प्रविष्टि 14 के अंतर्गत आने वाले विषयों को उसके दायरे से बाहर कर दिया जाए। संविधान में संसद की सर्वोच्चता की व्यवस्था, सातवीं अनुसूची की किसी भी सूची की प्रविष्टि की व्याख्या के सामान्य सिद्धांत, प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आवश्यक घोषणा कर संसद द्वारा तंबाकू उद्योग का नियंत्रण अपने अधीन लेने के उद्देश्य, तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का परीक्षण करने पर हमें "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ देने का कोई औचित्य नहीं दिखाई देता। हम राज्य पक्ष तथा विभिन्न बाजार समितियों की ओर से प्रस्तुत इस तर्क में भी कोई बल नहीं पाते कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम में तंबाकू की खेती तथा तंबाकू के क्रय-विक्रय से संबंधित प्रावधान संसद की विधायी क्षमता के परे हैं, इस आधार पर कि "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए, अन्यथा इससे राज्य विधायिका की शक्तियाँ—जैसे प्रविष्टि 28 (बाजार), प्रविष्टि 14 (कृषि) तथा प्रविष्टि 27 (वस्तुएँ)—प्रभावित होंगी। हमारे विचार में इस प्रकार की व्याख्या संविधान की मूल संरचना, संसद की सर्वोच्चता तथा संघीय ढाँचे में निहित केंद्रीकरण की प्रवृत्ति के प्रतिकूल होगी। अतः हमारे मत में सूची । की प्रविष्टि 52 में

प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ नहीं दिया जाना चाहिए, बल्कि उसकी व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि संसद उस घोषित उद्योग के संबंध में ऐसे सभी विषयों पर कानून बना सके जो उसके साथ युक्तिसंगत रूप से जुड़े हुए हों, जिनमें वे सहायक या अनुषंगी विषय भी सम्मिलित हों जो उस विधायन के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए आवश्यक हैं। इस प्रकार व्याख्या करने पर तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का परीक्षण करने पर, हमें यह नहीं प्रतीत होता कि उक्त अधिनियम के किसी भी प्रावधान को अधिनियमित करने में संसद के पास विधायी क्षमता का अभाव है। उक्त अधिनियम संसद द्वारा इस घोषणा के पश्चात अधिनियमित किया गया है कि तंबाकू उद्योग का नियंत्रण संघ द्वारा ग्रहण किया गया है, तथा इसका उद्देश्य उस उद्योग का विकास करना है।

श्री द्विवेदी के तर्क का मुख्य आधार इस न्यायालय का निर्णय *टिकारामजी* का है, जिसका अनुसरण *कलकत्ता गैस, कननदेवन* तथा *गंगा शुगर कॉर्पोरेशन* में किया गया, और ये सभी संविधान पीठ के निर्णय हैं। *टिकारामजी* में निस्संदेह इस न्यायालय की संविधान पीठ ने यह कहा था कि कच्चा माल, जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, उसे विनिर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया में सम्मिलित नहीं किया जा सकता, और इस प्रकार सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द के अंतर्गत संसद द्वारा बनाए गए कानून में कच्चा माल सम्मिलित नहीं होगा। उक्त अवलोकन गन्ना तथा चीनी उद्योग के संदर्भ में किया गया था। श्री द्विवेदी के अनुसार, *आईटीसी* वाद का बहुमत निर्णय टिकाऊ नहीं है, क्योंकि इस न्यायालय के पूर्ववर्ती संविधान पीठ के निर्णय—*टिकारामजी, कलकत्ता गैस, कननदेवन* तथा *गंगा शुगर कॉर्पोरेशन*—पर विचार नहीं किया गया। उनका आगे यह तर्क है कि किसी भी सूची की विधायी प्रविष्टि की ऐसी व्याख्या की जानी चाहिए जिससे उसी सूची या किसी अन्य सूची की अन्य प्रविष्टियाँ निष्प्रभावी न हो जाएँ, और इसलिए सूची II की प्रविष्टि 24 तथा सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना आवश्यक है। श्री द्विवेदी के अनुसार, *बेलसंड शुगर* वाद में, जहाँ सूची II की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 के अंतर्गत

बनाए गए बाजार समिति अधिनियम की संवैधानिकता का परीक्षण सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत बनाए गए गन्ना अधिनियम के संदर्भ में किया गया, इस न्यायालय ने यह कहा कि बाजार समिति अधिनियम, गन्ना अधिनियम के अधीन रहेगा। उसी सिद्धांत को लागू करते हुए यह कहा गया कि कच्चा तंबाकू, जो कृषि उपज है और तंबाकू उद्योग का कच्चा माल है, राज्य विधायिका के विशेष क्षेत्राधिकार में रहेगा और संसद को तंबाकू की खेती या उसके क्रय-विक्रय के संबंध में कोई कानून बनाने की शक्ति नहीं होगी। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि *टिकारामजी* में वास्तव में इस न्यायालय ने क्या कहा है, इसका परीक्षण किया जाए। प्रारंभ में यह ध्यान देने योग्य है कि जिन मामलों पर श्री द्विवेदी ने भरोसा किया है—*टिकारामजी*, *कलकत्ता गैस*, *कननदेवन* तथा *गंगा शुगर*—इनमें से किसी भी वाद में सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद की विधायी क्षमता को चुनौती नहीं दी गई थी। *टिकारामजी* में विचारार्थ प्रश्न यह था कि क्या राज्य विधायिका द्वारा पारित अधिनियम तथा उसके अंतर्गत जारी अधिसूचनाएँ, संसद द्वारा बनाए गए अधिनियम तथा उसके अंतर्गत जारी अधिसूचनाओं के प्रतिकूल हैं। राज्य अधिनियम, अर्थात् गन्ना अधिनियम के प्रावधानों का परीक्षण करते हुए न्यायालय ने यह कहा कि उक्त अधिनियम केवल गन्ने की आपूर्ति एवं क्रय के विनियमन से संबंधित है और इसका चीनी उद्योग के संबंध में केंद्र के अधिकार क्षेत्र पर कोई अतिक्रमण नहीं है। उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 18-जी का परीक्षण करते हुए न्यायालय ने यह भी कहा कि उक्त अधिनियम, विशेषकर धारा 18-जी, गन्ने को आच्छादित नहीं करता, और न ही संसद का यह अभिप्राय माना जा सकता है कि वह पूरे क्षेत्र को आच्छादित करना चाहती थी। न्यायालय को धारा 18-जी में प्रयुक्त "किसी अनुसूचित उद्योग से संबंधित कोई वस्तु या वस्तुओं का वर्ग" अभिव्यक्ति का अर्थ निर्धारित करना था, और उसने यह निष्कर्ष निकाला कि यह अभिव्यक्ति कच्चे माल पर नहीं, बल्कि तैयार उत्पादों पर लागू होती है। न्यायालय ने केंद्रीय अधिनियम के उद्देश्य पर भी विचार किया, जो यह था कि निर्मित वस्तुओं का न्यायसंगत वितरण एवं उचित मूल्य पर उपलब्धता सुनिश्चित

की जाए। उस वाद में यह तर्क प्रस्तुत किया गया था कि यद्यपि गन्ना अधिनियम सतही रूप से गन्ने के विनियमन से संबंधित प्रतीत होता है, किन्तु वस्तुतः उसकी प्रकृति और सार चीनी उद्योग से संबंधित है, जिसे उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम के अंतर्गत घोषित कर संघ के नियंत्रण में लिया गया है। इस तर्क को अस्वीकार करते हुए तथा सूची II की प्रविष्टि 24 एवं 27 का परीक्षण करते हुए न्यायालय ने कहा कि नियंत्रित उद्योगों को सूची I की प्रविष्टि 52 में स्थानांतरित कर दिया गया है, जो संसद के विशिष्ट क्षेत्राधिकार में है, जबकि अन्य उद्योग सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत रहते हैं। उस वाद में न्यायालय को सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द की परिधि एवं विस्तार का निर्धारण करने की आवश्यकता नहीं थी। वास्तव में न्यायालय ने यह कहा कि वह इस प्रश्न पर विचार कर रहा है कि क्या किसी उद्योग के कच्चे माल, जो उत्पादन प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं, "उद्योग" विषय के अंतर्गत आते हैं या नहीं। उस वाद में विचाराधीन केंद्रीय विधायन तथा अधिसूचनाएँ, संसद द्वारा सूची III की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत समवर्ती अधिकार का प्रयोग करते हुए बनाए गए थे। अतः जब संसद ने समवर्ती क्षेत्राधिकार के अंतर्गत कानून बनाया, तो इससे प्रांतीय विधायिका की समान शक्ति समाप्त नहीं होती। उस वाद में न्यायालय के निष्कर्षों पर ध्यान देना अत्यंत महत्वपूर्ण है:

> "इसका आवश्यक परिणाम यह है कि यद्यपि चीनी उद्योग एक नियंत्रित उद्योग था, तथापि केंद्र द्वारा बनाए गए इन अधिनियमों में से कोई भी सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अपनी विधायी शक्ति के प्रयोग में अधिनियमित नहीं किया गया था।"

अतः न्यायालय द्वारा की गई वे टिप्पणियाँ, जिन पर श्री द्विवेदी ने विशेष रूप से भरोसा किया है, सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द की परिधि एवं विषय-वस्तु को निर्धारित करने के लिए उपयोग में नहीं लाई जा सकतीं। जब न्यायालय ने यह कहा कि "उद्योग" शब्द में तीन भिन्न पक्ष सम्मिलित हो सकते हैं— (i) कच्चा माल, जो औद्योगिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, (ii) विनिर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया, तथा (iii) उद्योग के

उत्पादों का वितरण— और यह माना कि कच्चा माल सूची II की प्रविष्टि 27 के अंतर्गत आएगा तथा विनिर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत आएगी (सिवाय उस स्थिति के जब उद्योग नियंत्रित उद्योग हो, तब वह सूची I की प्रविष्टि 52 में आएगा), तो स्पष्टतः न्यायालय सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द की वास्तविक परिधि का परीक्षण नहीं कर रहा था। इसी कारण न्यायालय ने यह भी कहा कि केंद्र द्वारा चीनी एवं गन्ने के संबंध में किया गया विधायन सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत आ सकता था। किन्तु जब संबंधित विधायन को वास्तव में सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अधिनियमित नहीं माना गया, तब संसद की उस प्रविष्टि के अंतर्गत विधायी शक्ति के संदर्भ में *टिकारामजी* के सिद्धांत को लागू करने का प्रश्न ही नहीं उठता। फलस्वरूप, *टिकारामजी* के निर्णय के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए। यह भी स्पष्ट है कि उस वाद में न्यायालय ने "पिथ एंड सब्सटेंस" के सिद्धांत को लागू करने से यह कहते हुए इंकार कर दिया था कि केंद्र और राज्य दोनों समवर्ती क्षेत्र में कार्य कर रहे थे, और इसलिए सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत केंद्र के विशिष्ट अधिकार क्षेत्र में अतिक्रमण का कोई प्रश्न ही नहीं था। अर्थात् *टिकारामजी* में न तो न्यायालय से यह अपेक्षा की गई थी कि वह सूची I की प्रविष्टि 52 में "उद्योग" शब्द की परिधि का निर्धारण करे, और न ही संबंधित केंद्रीय विधायन उस प्रविष्टि के अंतर्गत बनाया गया था। इस स्थिति में, यह कहना कि *आईटीसी* वाद में बहुमत का निर्णय केवल इसलिए त्रुटिपूर्ण है कि उसने *टिकारामजी* के अवलोकनों पर विचार नहीं किया, स्वीकार्य नहीं है। हमारे मत में, "उद्योग" के कच्चे माल के संबंध में *टिकारामजी* में की गई टिप्पणियों को वर्तमान संदर्भ में लागू करना पूर्णतः अनुचित होगा। चूँकि *टिकारामजी* में न्यायालय को यह निर्धारित करने का अवसर ही नहीं मिला कि सूची I की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए या नहीं, अतः उस निर्णय की टिप्पणियों को यहाँ लागू करना उपयुक्त नहीं है। वास्तव में, उस वाद में न्यायालय उद्योग

(विकास एवं विनियमन) अधिनियम के प्रावधानों का परीक्षण कर रहा था, जो मूलतः विनिर्माण प्रक्रिया को नियंत्रित करता था, और 1953 में धारा 18-जी जोड़े जाने से पूर्व वह कच्चे माल अर्थात् गन्ने के व्यापार एवं वाणिज्य को नियंत्रित नहीं करता था। न्यायालय यह देख रहा था कि क्या राज्य द्वारा बनाया गया अधिनियम केंद्रीय विधायन के प्रतिकूल है, और उसने पाया कि दोनों अधिनियम भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में कार्य करते हैं तथा सह-अस्तित्व में रह सकते हैं। अतः *टिकारामजी* के निर्णय में की गई कोई भी टिप्पणी इस प्रश्न के समाधान में सहायक नहीं हो सकती कि सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाए या व्यापक अर्थ, जो कि सामान्यतः विधायी प्रविष्टियों की व्याख्या का सिद्धांत है। जहाँ तक *कलकत्ता गैस* वाद का संबंध है, वहाँ निस्संदेह *टिकारामजी* का अनुसरण किया गया, किन्तु उस वाद में न्यायालय सूची ॥ की दो प्रविष्टियों—प्रविष्टि 24 ("उद्योग") तथा प्रविष्टि 25 ("गैस एवं गैस कार्य")—के मध्य प्रतिस्पर्धा का परीक्षण कर रहा था। प्रश्न यह था कि क्या "गैस एवं गैस कार्य" विषय पर राज्य द्वारा बनाया गया कानून, "उद्योग" विषय पर राज्य द्वारा बनाए गए कानून पर प्रधानता रखेगा। न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि "गैस एवं गैस कार्य" एक विशेष (विशिष्ट) प्रविष्टि है, अतः उस पर बनाया गया कानून "उद्योग" जैसे सामान्य शीर्षक के अंतर्गत बनाए गए कानून पर वरीयता प्राप्त करेगा। यह उल्लेखनीय है कि *कलकत्ता गैस* वाद [1962] पूरक एस.सी.आर. 1, पृष्ठ 17 पर यह कहा गया है— "इस वाद में 'उद्योग' शब्द की सटीक परिभाषा देने या उसके सभी अवयवों का पूर्ण विवरण करना आवश्यक नहीं है।" उपर्युक्त अवलोकन के आलोक में यह समझ पाना कठिन है कि इस निर्णय का उपयोग वर्तमान वाद में विचाराधीन "उद्योग" शब्द के वास्तविक आशय एवं परिधि के निर्धारण के लिए कैसे किया जा सकता है। अब *कननदेवन हिल्स प्रोड्यूस बनाम केरल राज्य,* [1972] 2 एस.सी.सी. 218 के निर्णय पर विचार करते हुए, जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, उस वाद में राज्य विधायिका की विधायी क्षमता के अभाव के आधार पर राज्य अधिनियम, अर्थात्, 1971 की वैधता को चुनौती दी गई थी। न्यायालय ने यह

निष्कर्ष देते हुए अधिनियम की वैधता को स्वीकार किया कि वह सूची II की प्रविष्टि 18 (भूमि) तथा सूची III की प्रविष्टि 42 (संपत्ति का अधिग्रहण एवं अधिग्रहण) के अंतर्गत आता है। इसी संदर्भ में यह कहा गया कि केवल इस आधार पर कि उक्त कानून का प्रभाव उस उद्योग पर पड़ता है, जिसका नियंत्रण सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संघ द्वारा अपने अधीन लिया गया है, राज्य विधायिका की शक्ति को नकारा नहीं जा सकता। किन्तु न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया कि "प्रभाव" और "विषय-वस्तु" समान नहीं हैं। अर्थात् उस वाद में सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत "उद्योग" शब्द की वास्तविक परिधि विचाराधीन नहीं थी। उक्त निर्णय के अनुच्छेद 29 में, *बैजनाथ केडिया बनाम बिहार राज्य* के संदर्भ में, जहाँ न्यायालय ने सूची II की प्रविष्टि 23 तथा सूची I की प्रविष्टि 52 की व्याख्या की थी, यह कहा गया कि सूची I की प्रविष्टि 52 का क्षेत्र कुछ भिन्न है और एक बार संसद द्वारा यह घोषित कर दिया जाए कि किसी उद्योग का नियंत्रण सार्वजनिक हित में आवश्यक है, तब संसद उस उद्योग पर विधायन कर सकती है और राज्य उस उद्योग के संबंध में अपनी विधायी शक्ति खो देता है। अतः यदि संसद किसी नियंत्रित उद्योग के संबंध में विधि बनाती है, तो उसे उस उद्योग से युक्तिसंगत एवं प्रत्यक्ष रूप से संबंधित प्रावधान बनाने की पूर्ण शक्ति प्राप्त है। तथापि संसद ऐसा विधायन नहीं कर सकती जिसका उस उद्योग से कोई संबंध ही न हो। हमारे मत में, *कननदेवन* के उक्त अवलोकनों का यही आशय है। किन्तु इस निर्णय को किसी भी प्रकार से इस रूप में नहीं पढ़ा जा सकता कि सूची I की प्रविष्टि 52 में "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए, जैसा कि श्री द्विवेदी ने तर्क दिया है। *कननदेवन* वाद में याचिकाकर्ता ने राज्य विधायिका की क्षमता को चुनौती दी थी और *टिकारामजी* के निर्णय पर भरोसा किया था, जिसका उल्लेख निर्णय के अनुच्छेद 30 में है। किन्तु न्यायालय ने अनुच्छेद 33 में स्पष्ट रूप से कहा कि इन निर्णयों से याचिकाकर्ताओं को कोई सहायता प्राप्त नहीं होती। अतः यह समझना कठिन है कि *कननदेवन* का निर्णय बिहार राज्य के इस तर्क के समर्थन में कैसे सहायक हो सकता है कि संसद को सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत

तंबाकू बोर्ड अधिनियम बनाने की विधायी क्षमता नहीं है, विशेषकर उन प्रावधानों के संदर्भ में जो तंबाकू की खेती तथा कच्चे तंबाकू के क्रय-विक्रय से संबंधित हैं। जहाँ तक *गंगा शुगर कॉर्पोरेशन* [1980] 1 एस.सी.सी. 223 के संविधान पीठ के निर्णय का संबंध है, जिस पर श्री द्विवेदी ने विशेष रूप से भरोसा किया, प्रथम दृष्टया वह उनके तर्क का समर्थन करता प्रतीत होता है, किन्तु गहन परीक्षण से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त अवलोकन का इस प्रश्न के समाधान में कोई महत्व नहीं है कि सूची । की प्रविष्टि 52 में "उद्योग" शब्द का विस्तार क्या है या संसद को तंबाकू बोर्ड अधिनियम जैसे विधायन करने की विधायी क्षमता है या नहीं। *गंगा शुगर* वाद में, उत्तर प्रदेश गन्ना (क्रय कर) अधिनियम, 1961 की धारा 3 के अंतर्गत गन्ने की खरीद पर लगाए गए कर को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि चूँकि चीनी उद्योग एक नियंत्रित उद्योग है, अतः उस पर विधायन का अधिकार केवल संसद को है। न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार करते हुए कहा कि सूची ॥ की प्रविष्टि 54 राज्य को वस्तुओं की खरीद पर कर लगाने का अधिकार देती है, और अतः यह नहीं कहा जा सकता कि इससे सूची । की प्रविष्टि 52 का अतिक्रमण हुआ है। न्यायालय ने यह प्रश्न उठाया कि क्या क्रय कर अधिनियम केवल इस कारण अवैध है कि वह एक नियंत्रित उद्योग, अर्थात् चीनी उद्योग, से संबंधित है, और इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक दिया, *टिकारामजी* के निर्णय का अनुसरण करते हुए। अतः राज्य विधायिका की पूर्ण अयोग्यता का जो चरम तर्क प्रस्तुत किया गया था—कि नियंत्रित उद्योग के संबंध में राज्य कोई भी कानून नहीं बना सकता—उसे अस्वीकार कर दिया गया। इन्हीं परिस्थितियों में वे अवलोकन किए गए जिन पर श्री द्विवेदी ने भरोसा किया है। सुश्री द्विवेदी के इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते कि गंगा शुगर का निर्णय इस बात के समर्थन में प्रयुक्त किया जा सकता है कि संसद को तंबाकू जैसे नियंत्रित उद्योग के संबंध में, तंबाकू बोर्ड अधिनियम बनाकर, तंबाकू की खेती तथा कच्चे तंबाकू के क्रय-विक्रय से संबंधित प्रावधान करने की विधायी क्षमता नहीं है। हमारे मत में, यह निर्णय इस तर्क के समर्थन में कोई सहायता प्रदान नहीं करता कि सूची । की प्रविष्टि 52 में

"उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाए, जिससे केवल विनिर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया ही उसमें सम्मिलित हो। हम पुनः यह दोहराते हैं कि जिन संविधान पीठ के निर्णयों पर श्री द्विवेदी ने भरोसा किया है, उनमें से किसी में भी सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द के वास्तविक अर्थ एवं परिधि का प्रश्न विचाराधीन नहीं था, और न ही यह प्रश्न था कि संसद को किसी नियंत्रित उद्योग के संबंध में, विनिर्माण या उत्पादन से पूर्व के चरणों (जैसे कच्चा माल या उसकी खेती) को सम्मिलित करते हुए विधायन करने की विधायी क्षमता है या नहीं। अतः ये निर्णय तंबाकू बोर्ड अधिनियम के उन प्रावधानों को निरस्त करने के लिए कोई आधार प्रदान नहीं करते, जो तंबाकू की खेती अथवा कच्चे तंबाकू के क्रय-विक्रय से संबंधित हैं।

यह निस्संदेह सत्य है कि *ईश्वरि खेतान* वाद [1980] 4 एस.सी.सी. 136 में, सूची । की प्रविष्टि 52 तथा उसके अंतर्गत संसद द्वारा की गई घोषणा के प्रभाव की व्याख्या करते समय, न्यायालय ने सूची । की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत किए गए विधायन पर भी भरोसा किया था और उसे प्रविष्टि 52 के समतुल्य माना था तथा *बैजनाथ केडिया* के निर्णय का अनुसरण किया था, जैसा कि श्री शांति भूषण ने तर्क दिया। किन्तु, "उद्योग" शब्द की परिधि एवं विस्तार के संबंध में हमारे निष्कर्ष के दृष्टिगत, इस पहलू पर विस्तृत विचार करना आवश्यक नहीं है। *ईश्वरि खेतान* वाद में न्यायालय सूची II की प्रविष्टि 24 तथा सूची । की प्रविष्टि 52 के दायरे की व्याख्या कर रहा था और यह कहा गया कि सूची II की प्रविष्टि 24 के अंतर्गत राज्य की विधायी शक्ति केवल उसी सीमा तक कम होती है, जिस सीमा तक संसद द्वारा प्रविष्टि 52 के अंतर्गत घोषणा कर नियंत्रण ग्रहण किया जाता है। अर्थात्, संसद द्वारा किए गए विधायन से जो क्षेत्र आच्छादित होता है, वही राज्य की शक्ति के क्षरण की सीमा निर्धारित करता है, और उस सीमा के अतिरिक्त शेष क्षेत्र में राज्य विधायिका को विधायन करने की शक्ति बनी रहती है, बशर्ते वह उस आच्छादित क्षेत्र में अतिक्रमण न करे। उक्त सिद्धांत को वर्तमान वाद पर लागू करते हुए तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम के प्रावधानों का

परीक्षण करने पर यह निष्कर्ष अपरिहार्य है कि जहाँ तंबाकू बोर्ड अधिनियम में तंबाकू की खेती तथा कच्चे तंबाकू के क्रय-विक्रय के संबंध में प्रावधान पहले से किए गए हैं, वहाँ राज्य विधायिका इस विषय में कोई विधायन करने की शक्ति से वंचित हो जाती है।

अब जिन दो अन्य निर्णयों पर विचार करना आवश्यक है, वे हैं—*विश्वनाथैया एंड कंपनी बनाम कर्नाटक राज्य*, [1991] 3 एस.सी.सी. 358 तथा *बेलसंड शुगर*, [1999] 9 एस.सी.सी. 620। जहाँ तक *विश्वनाथैया* वाद का संबंध है, श्री द्विवेदी ने उक्त निर्णय के अनुच्छेद 8 में की गई टिप्पणी पर विशेष रूप से भरोसा किया, जिसमें न्यायालय ने कहा—

> "यह सत्य है कि सिल्क बोर्ड अधिनियम भारत के क्षेत्र में कच्चे रेशम उद्योग को नियंत्रित करने का प्रयत्न करता है। किन्तु, जैसा कि उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के पूर्ववर्ती निर्णयों के आलोक में कहा है, संसद में निहित उद्योग का नियंत्रण केवल रेशम धागे या रेशम के उत्पादन एवं निर्माण तक सीमित था। यह स्पष्ट रूप से उद्योग के पूर्ववर्ती चरणों, अर्थात् कच्चे माल की आपूर्ति, को सम्मिलित नहीं करता था।"

श्री द्विवेदी के अनुसार, यह निर्णय से उनके इस तर्क को समर्थन मिलता है कि सूची । की प्रविष्टि 52 में "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए, और इस प्रकार यह न तो तंबाकू की खेती को और न ही कच्चे तंबाकू के क्रय-विक्रय को अपने भीतर समाहित करेगा। जैसा कि हम पूर्व में ही स्पष्ट कर चुके हैं, राज्य विधायिका की शक्ति उसी सीमा तक समाप्त होती है, जिस सीमा तक संसद द्वारा अधिनियमित केंद्रीय विधायन किसी नियंत्रित उद्योग के क्षेत्र को आच्छादित करता है। यदि संसद, सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत अपनी विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए उद्योग का नियंत्रण अपने अधीन लेने के पश्चात कोई विधि बनाती है, किन्तु उसमें कच्चे माल की आपूर्ति के संबंध में कोई प्रावधान नहीं करती, तो केवल इस कारण कि उद्योग का नियंत्रण अपने अधीन ले लिया गया है, राज्य की यह शक्ति समाप्त नहीं हो जाती कि वह कच्चे माल की आपूर्ति के संबंध में विधायन करे। किन्तु इसका यह अर्थ

नहीं है कि संसद उद्योग के उत्पादन एवं विनिर्माण के अतिरिक्त अन्य किसी पहलू के संबंध में विधायन नहीं कर सकती। अर्थात् श्री द्विवेदी का यह तर्क कि सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत "उद्योग" विषय पर संसद की विधायी शक्ति केवल उत्पादन एवं विनिर्माण तक ही सीमित है और उससे पूर्व के चरणों तक विस्तृत नहीं हो सकती—स्वीकार्य नहीं है। विश्वनाथैया का निर्णय भी इस प्रकार का कोई सिद्धांत स्थापित नहीं करता। जहाँ तक *बेलसंड शुगर कंपनी* [1999] 9 एस.सी.सी. 620 के निर्णय का संबंध है, उस वाद में विचारार्थ प्रश्न यह था कि क्या बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम के प्रावधान, गन्ने के क्रय-विक्रय पर बाजार शुल्क लगाने के लिए लागू होंगे, जबकि बिहार गन्ना (आपूर्ति एवं क्रय अधिनियम) अधिनियम, 1981 में विशेष प्रावधान मौजूद थे। बाजार समिति अधिनियम भी राज्य का विधायन था, जो सूची ॥ की प्रविष्टि 26, 27 एवं 28 के अंतर्गत बनाया गया था, जबकि गन्ना अधिनियम सूची ॥। की प्रविष्टि 33 के अंतर्गत बनाया गया था। न्यायालय ने यह कहा कि चूँकि गन्ने के क्रय-विक्रय के लिए एक विशेष अधिनियम मौजूद है, अतः सामान्य अधिनियम, अर्थात् बाजार समिति अधिनियम, उस पर लागू नहीं होगा, और इस प्रकार बाजार शुल्क की वसूली अवैध ठहराई गई। दोनों अधिनियमों के प्रावधानों का परीक्षण करते हुए न्यायालय ने यह भी पाया कि दोनों में प्रत्यक्ष टकराव है, जिसे केवल इस प्रकार सुलझाया जा सकता है कि बाजार अधिनियम, जो एक सामान्य अधिनियम है, सभी कृषि उपजों पर लागू होता है, जबकि गन्ना अधिनियम एक विशेष अधिनियम है, जो एक विशिष्ट कृषि उपज के लिए स्वतंत्र एवं विशिष्ट तंत्र प्रदान करता है। अतः विशेष अधिनियम सामान्य अधिनियम पर वरीयता प्राप्त करेगा और उस वस्तु को सामान्य अधिनियम के दायरे से बाहर कर देगा। हमारे विचार में यह निर्णय इस सिद्धांत के लिए कोई आधार नहीं है कि सूची । की प्रविष्टि 52 में "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ दिया जाना चाहिए, जैसा कि श्री द्विवेदी का तर्क है। उस वाद में भी यह चरम तर्क स्वीकार नहीं किया गया कि केवल इस संभावना के कारण कि केंद्र सरकार नियंत्रण आदेश जारी कर सकती है, राज्य विधायिका की शक्ति समाप्त हो

जाएगी। किन्तु साथ ही, इस निर्णय को इस प्रकार भी नहीं पढ़ा जा सकता कि संसद, किसी नियंत्रित उद्योग के संबंध में, केवल उत्पादन या विनिर्माण तक ही सीमित विधायन कर सकती है और उससे परे नहीं। *बेलसंड शुगर* (उपरोक्त) को किसी भी प्रकार से इस रूप में नहीं समझा जा सकता कि उसने "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ देने का समर्थन किया हो। अतः यह निर्णय श्री द्विवेदी के तर्क का समर्थन नहीं करता। जहाँ तक श्री शांति भूषण द्वारा *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी लिमिटेड एवं अन्य बनाम ओड़िशा राज्य एवं अन्य*, [1961] 2 एस.सी.आर. 537, *बेलसंड शुगर,* [1970] 2 एस.सी.आर. 100 तथा *ओड़िशा राज्य बनाम एम.ए. टुल्लोच एंड कंपनी*, [1964] 4 एस.सी.आर. 461. जैसे निर्णयों पर निर्भरता का प्रश्न है, हम यह आवश्यक नहीं समझते कि उन निर्णयों के सिद्धांतों को वर्तमान वाद में लागू किया जाए, क्योंकि उन सभी मामलों में न्यायालय सूची II की प्रविष्टि 23 तथा सूची I की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत विधायी शक्तियों के परस्पर संबंध का परीक्षण कर रहा था। दोनों प्रविष्टियाँ "खनिजों एवं खानों के विनियमन एवं विकास" से संबंधित हैं, और सूची II की प्रविष्टि 23 स्वयं सूची I की प्रविष्टि 54 के अधीन है। अतः जब संसद सूची I की प्रविष्टि 54 के अंतर्गत विधायन कर संघ के नियंत्रण में खनिजों एवं खानों के विकास को ले लेती है, तब राज्य विधायिका सूची II की प्रविष्टि 23 के अंतर्गत उस विषय पर विधायन करने की शक्ति से वंचित हो जाती है।

किन्तु वर्तमान वाद में हम सूची I की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा बनाए गए विधायन, अर्थात् तंबाकू बोर्ड अधिनियम, तथा राज्य विधायिका द्वारा सूची II की प्रविष्टि 28 अथवा उससे संबंधित सहायक प्रविष्टियों, जैसे प्रविष्टि 14 एवं 27 के अंतर्गत बनाए गए विधायन, अर्थात् बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम, से संबंधित हैं। ऐसी स्थिति में न्यायालय के विचार का केंद्र यह होना चाहिए कि सूची I की प्रविष्टि 52 का वास्तविक विस्तार और विषय-वस्तु क्या है। जब यह निष्कर्ष निकाला जा चुका है कि "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ नहीं दिया जा सकता और संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम *वैध* है, तब राज्य

का विधायन—बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम—जहाँ तक वह तंबाकू वस्तु से संबंधित है, राज्य अधिनियम के अंतर्गत अधिसूचित समस्त कृषि उपजों के सामान्य दायरे से बाहर हो जाएगा, क्योंकि उस विषय पर केंद्रीय विधायन द्वारा प्रावधान कर दिया गया है, और संविधान के अनुच्छेद 246 के अनुप्रयोग से केंद्रीय अधिनियम को प्रधानता प्राप्त होगी।

श्री द्विवेदी ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय *एसआईईएल* वाद (उपरोक्त) पर भरोसा किया, किन्तु हमारे उपर्युक्त निष्कर्षों के प्रकाश में उक्त निर्णय को सही विधि नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार, मोंघिर की बाजार समिति की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ. सिंहवी का यह तर्क भी स्वीकार्य नहीं है कि यदि सूची II की कोई प्रविष्टि सूची I की किसी प्रविष्टि के अधीन नहीं है, तो उस विषय पर राज्य विधायिका की शक्ति सर्वोपरि होगी, और चूँकि बाजार समिति अधिनियम प्रविष्टि 14 एवं 28 से संबंधित है, जो सूची I की किसी प्रविष्टि के अधीन नहीं हैं, अतः वह अधिनियम प्रभावी रहेगा। हमारे मत में यह दृष्टिकोण विधायन की वैधता का परीक्षण करने के लिए उचित नहीं है। प्रविष्टियाँ केवल विधायन के विषय-क्षेत्र हैं और विधि बनाने की शक्ति अनुच्छेद 246 से उत्पन्न होती है। यदि संसद द्वारा बनाया गया कोई विधि, सूची I की किसी प्रविष्टि के अंतर्गत उसकी विधायी क्षमता में आता है, तो राज्य विधायिका उस विषय पर सूची II की किसी अन्य प्रविष्टि का सहारा लेकर विधायन नहीं कर सकती। यह सत्य है कि न्यायालय प्रतिस्पर्धी विधानों के परीक्षण में यह प्रयास करता है कि क्या दोनों विधायन साथ-साथ लागू हो सकते हैं—जिस पर हम आगे विचार करेंगे—किन्तु यह तर्क कि प्रविष्टि 14 एवं 28 सूची I के अधीन नहीं हैं, अतः राज्य अधिनियम को लागू रहने दिया जाए, स्वीकार्य नहीं है, विशेषतः तब जब "उद्योग" शब्द को व्यापक अर्थ दिया जा चुका है और संसद ने उस उद्योग पर नियंत्रण ग्रहण कर विधायन कर दिया है। हमारे उपर्युक्त निष्कर्षों के आलोक में यह आवश्यक नहीं है कि हम डॉ. सिंहवी के अन्य तर्कों पर विचार करें, जैसे कि अधिग्रहित क्षेत्र का सिद्धांत केवल सूची III के मामलों तक सीमित है या नहीं। हम इस तर्क से भी सहमत नहीं हैं कि यदि

तंबाकू बोर्ड अधिनियम को वैध माना जाए, तब भी बाजार समिति अधिनियम के अंतर्गत "पारस्परिक प्रतिफल" के सिद्धांत पर बाजार शुल्क लगाया जा सकता है, क्योंकि केंद्रीय अधिनियम में तंबाकू की खेती तथा उसके क्रय-विक्रय के संबंध में आवश्यक प्रावधान पहले ही किए जा चुके हैं। इसी प्रकार, मध्य प्रदेश प्रकरणों में कृषि मंडी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सांघी का यह तर्क भी स्वीकार्य नहीं है कि इस वाद में मुख्य प्रश्न केवल यह होना चाहिए कि क्या राज्य विधायिका को प्रविष्टि 28 के अंतर्गत बाजार समिति अधिनियम बनाने की विधायी क्षमता थी। उनका यह अन्य तर्क कि दोनों अधिनियमों के बीच कोई असमाधेय टकराव नहीं है तथा तंबाकू बोर्ड अधिनियम की धारा 31 का क्या प्रभाव है—इनका विचार हम आगे संबंधित प्रावधानों के परीक्षण के समय करेंगे। तमिलनाडु कृषि विपणन बोर्ड की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गांगुली ने भी डॉ. सिंहवी के समान ही तर्क प्रस्तुत किए और अनुच्छेद 246(3) पर निर्भरता जताई। किन्तु हमारे विचार में, अनुच्छेद 246(1) स्वयं ही, जो उक्त अनुच्छेद की उपधाराओं (2) एवं (3) में निहित किसी भी बात के बावजूद प्रभावी है, के परिप्रेक्ष्य में श्री गांगुली का तर्क निराधार है। श्री गांगुली द्वारा इस न्यायालय के *बैजनाथ केडिया, एम.ए. टुल्लोच, इंडिया सीमेंट तथा ओड़िशा सीमेंट* संबंधी निर्णयों के संदर्भ में जो विस्तृत तर्क प्रस्तुत किए गए, जो सभी खनन संबंधी विधायनों से संबंधित हैं, उन पर विचार करना आवश्यक नहीं है, क्योंकि हमने उन निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धांतों पर अपना निष्कर्ष आधारित नहीं किया है, यद्यपि श्री शांति भूषण ने अपने तर्क के समर्थन में उन निर्णयों का उल्लेख किया था।

उपरोक्त परिस्थितियों में, हम यह सुविचारित मत व्यक्त करते हैं कि सूची । की प्रविष्टि 52 के अंतर्गत संसद द्वारा अधिनियमित तंबाकू बोर्ड अधिनियम संवैधानिक रूप से वैध है तथा उसमें निहित सभी प्रावधान, जिनमें तंबाकू की खेती तथा तंबाकू के क्रय-विक्रय से संबंधित प्रावधान भी सम्मिलित हैं, संसद की विधायी क्षमता के अंतर्गत आते हैं। हम यह भी मत व्यक्त करते हैं कि सूची । की प्रविष्टि 52 में प्रयुक्त "उद्योग" शब्द को संकीर्ण अर्थ नहीं

दिया जा सकता, विशेषतः जब संविधान की सूचियों की प्रविष्टियों की व्याख्या से संबंधित समस्त निर्णयों, जिसमें *आईटीसी* वाद में न्यायमूर्ति मुखर्जी का अल्पमत भी सम्मिलित है, का समग्र अवलोकन यह दर्शाता है कि सूचियों की प्रविष्टियों को उदार एवं व्यापक अर्थ दिया जाना चाहिए तथा यह एक स्वीकृत मूल सिद्धांत है कि विधायी शक्तियाँ प्रदान करने वाले संवैधानिक प्रावधानों के शब्दों की व्याख्या अत्यंत उदार एवं व्यापक रूप में की जानी चाहिए।

अब दूसरे प्रश्न पर आते हुए, यद्यपि सिद्धांततः यह सत्य है कि जब संसद और राज्य द्वारा बनाए गए दो प्रतिस्पर्धी विधायन हों, तो न्यायालय यह प्रयास करता है कि दोनों को साथ-साथ लागू रहने दिया जा सके, किन्तु यदि दोनों अधिनियमों के प्रावधानों का परीक्षण करने पर यह पाया जाता है कि केंद्रीय तथा राज्य विधायन परस्पर टकराते हैं, तो दोनों को एक साथ लागू रहने देने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। ऐसी स्थिति में, यदि केंद्रीय विधायन अन्यथा संवैधानिक रूप से वैध है, अर्थात् संसद को उसे बनाने की विधायी क्षमता है, तो केंद्रीय अधिनियम को प्रधानता प्राप्त होगी। उपरोक्त दृष्टिकोण से यदि हम तंबाकू बोर्ड अधिनियम की विभिन्न धाराओं, विशेषतः धारा 3, 8 एवं 32, तथा कृषि उपज बाजार अधिनियम की धाराओं, विशेषतः धारा 4(2) एवं धारा 15 जिसे *बेलसंड* वाद में इस अधिनियम का मुख्य प्रावधान माना गया है), का परीक्षण करें, तो यह निष्कर्ष अनिवार्य है कि दोनों अधिनियमों में प्रत्यक्ष टकराव है तथा उनके प्रावधानों का सामंजस्य स्थापित करना कठिन है। अतः, चूँकि तंबाकू बोर्ड अधिनियम संसद द्वारा अधिनियमित है तथा उसमें तंबाकू उद्योग से संबंधित समस्त प्रावधान, जिनमें तंबाकू की खेती तथा कच्चे तंबाकू के क्रय-विक्रय से संबंधित प्रावधान भी सम्मिलित हैं, निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार किए गए हैं, इसलिए कृषि उपज बाजार अधिनियम के वे प्रावधान, जो बाजार समिति को बाजार क्षेत्र में कच्चे तंबाकू के क्रय-विक्रय पर शुल्क लगाने का अधिकार देते हैं, तंबाकू के संबंध में लागू नहीं होंगे। अर्थात् केंद्रीय अधिनियम को प्रधानता प्राप्त होगी और वही तंबाकू उद्योग के समस्त क्षेत्र को नियंत्रित करेगा। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि जब संसद किसी उद्योग का

नियंत्रण, उस उद्योग के हित तथा राष्ट्रीय हित में, अपने अधीन लेती है, तो वह नियंत्रण प्रभावी होना चाहिए तथा इस प्रकार होना चाहिए कि अपेक्षित उद्देश्य की पूर्ति हो सके। अतः आवश्यक है कि ऐसा विधायन किया जाए जिसमें तंबाकू की खेती तथा उसके क्रय-विक्रय दोनों पर नियंत्रण का प्रावधान हो, जिससे उस उद्देश्य की पूर्ति हो सके जिसके लिए संसद ने उस उद्योग का नियंत्रण अपने अधीन लिया है। इस प्रकार, हम यह घोषित करते हैं कि तंबाकू बोर्ड अधिनियम और कृषि उपज बाजार अधिनियम परस्पर टकराते हैं और दोनों को एक साथ लागू नहीं किया जा सकता। अतः तंबाकू बोर्ड अधिनियम को प्रधानता प्राप्त होगी और कृषि उपज बाजार अधिनियम, जहाँ तक वह बाजार क्षेत्र में तंबाकू के क्रय-विक्रय पर शुल्क लगाने से संबंधित है, उस सीमा तक लागू नहीं होगा।

अब तीसरे प्रश्न पर आते हुए, दोनों अधिनियमों के बीच असंगति एवं प्रतिकूलता के कारण, जैसा कि पूर्व में कहा गया है, केंद्रीय अधिनियम ही प्रभावी होगा। हमारे मत में *आईटीसी* वाद में बहुमत का निर्णय सही है, यद्यपि उसके समर्थन में हमारे द्वारा दिए गए कारण, *आईटीसी* वाद में दिए गए कारणों से कुछ भिन्न हो सकते हैं।

उपरोक्त तीनों मुद्दों पर हमारे निष्कर्षों के परिणामस्वरूप, पटना उच्च न्यायालय का वह निर्णय, जिसमें वाद को पुनः मूल्यांकन हेतु बाजार समिति को भेजा गया था, निरस्त किया जाता है और यह घोषित किया जाता है कि किसी भी बाजार समिति के क्षेत्र में तंबाकू के क्रय-विक्रय पर बिहार कृषि उपज बाजार अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होंगे। अतः दीवानी अपील संख्या 6453/2001 स्वीकृत की जाती है।

दीवानी अपील संख्या 3872/1990, जो कि कृषि उत्पाद मंडी समिति द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय के खंडपीठ के निर्णय के विरुद्ध दायर की गई थी, खारिज की जाती है।

हम इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय को भी अपास्त करते हैं तथा तंबाकू व्यापारियों के संघ द्वारा दायर अपील, जिसमें उक्त पूर्ण पीठ के निर्णय की वैधता को चुनौती दी गई थी, स्वीकृत की जाती है। इसी प्रकार, मद्रास उच्च न्यायालय की खंडपीठ का

वह निर्णय, जिसने *आईटीसी* वाद में इस न्यायालय के बहुमत का अनुसरण किया है, यथावत् रखा जाता है तथा तमिलनाडु राज्य एवं तमिलनाडु कृषि विपणन बोर्ड द्वारा दायर अपीलें निरस्त की जाती हैं।

अनुच्छेद 32 के अंतर्गत जयलक्ष्मी टोबैको कंपनी द्वारा दायर विर्निदष्ट आदेश याचिका (दीवानी विर्निदष्ट आदेश याचिका संख्या 8614/1982), जिसमें कर्नाटक कृषि उपज विपणन (विनियमन) अधिनियम की वैधता को चुनौती दी गई थी, का निस्तारण किया जाता है और उक्त अधिनियम को, जहाँ तक वह बाजार क्षेत्र में तंबाकू के क्रय-विक्रय पर शुल्क लगाने की अनुमति देता है, उस सीमा तक अवैध घोषित किया जाता है।

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध दायर बारह अपीलें खारिज की जाती हैं तथा मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ का निर्णय बरकरार रखा जाता है।

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय से उत्पन्न विभिन्न अपीलों में, विभिन्न पीठों द्वारा दिनांक 27.4.88, 2.5.88, 17.8.88 तथा 5.10.88 को अंतरिम स्थगन आदेश पारित किए गए थे। इन आदेशों द्वारा न्यायालय ने बिना किसी शर्त के उक्त निर्णय के संचालन पर रोक लगा दी थी। इन सभी आदेशों में दिनांक 27.2.89 के आदेश द्वारा संशोधन किया गया, जब न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश पारित किया:

> ".....बकाया राशि की वसूली नहीं की जाएगी। यदि कोई राशि वसूल की गई है, तो उसकी वापसी पर भी कोई रोक नहीं होगी। संग्रहित राशि को इस आदेश की तिथि से चार माह के भीतर वापस किया जा सकता है। भविष्य में, उच्च न्यायालय के निर्णय की तिथि से देय बाजार शुल्क की वसूली पर कोई स्थगन नहीं होगा। यह भी स्पष्ट किया जाता है कि यदि पक्षकारों ने वसूली के विरुद्ध आपत्ति प्रस्तुत की है, तो वसूली पुनः प्रारंभ करने से पूर्व उन आपत्तियों का विधि अनुसार निपटारा किया जाएगा। यदि अंततः प्रतिवादी सफल होते हैं, तो अपीलकर्ता द्वारा वसूल की गई राशि 12% वार्षिक

ब्याज सहित वापस की जाएगी। यदि अपीलकर्ता सफल होते हैं, तो प्रतिवादी 12% वार्षिक ब्याज सहित बकाया बाजार शुल्क का भुगतान करने का उपक्रम करते हैं।"

अब जबकि उच्च न्यायालय का निर्णय बरकरार रखा जा रहा है तथा अपीलें निरस्त की जा रही हैं, विचारार्थ प्रश्न यह है कि दिनांक 27.2.1989 का उक्त स्थगन आदेश संशोधित किया जाए या उसे यथावत् रहने दिया जाए, जिसके परिणामस्वरूप वसूल किया गया बाजार शुल्क 12% वार्षिक ब्याज सहित वापस करना होगा। वाद के तथ्य एवं परिस्थितियों तथा बाजार समिति के संसाधनों को दृष्टिगत रखते हुए, हम यह उपयुक्त समझते हैं कि दिनांक 27.2.1989 के उक्त आदेश में संशोधन किया जाए और यह निर्देश दिया जाए कि मंडी समिति द्वारा बाजार क्षेत्र के भीतर तंबाकू के क्रय-विक्रय पर जो बाजार शुल्क पहले ही वसूल किया जा चुका है, उसे वापस करने की आवश्यकता नहीं होगी। किन्तु साथ ही यह भी निर्देश दिया जाता है कि बाजार समिति को यह अधिकार नहीं होगा कि वह उक्त शुल्क, यदि पूर्व में वसूल नहीं किया गया है, तो किसी भी पूर्व अवधि के लिए अब वसूल करे।

जी.एन. अपीलें तथा याचिका निस्तारित।